आर.एन.आई. नं. 3653/57
मुद्रण तिथि 5 से 8 जनवरी, 2023
डाक प्रेषण तिथि 10 जनवरी, 2023

वर्ष : 81 अंक : 01
माघ, 2079 मूल्य : ₹ 10
पृष्ठ संख्या 104

डाक पंजीयन संख्या Jaipur City/413/2021-23
WPP Licence No. Jaipur City/WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

जनवरी, 2023

Website : www.jinwani.in

मनुष्य के सशक्तीकरण (Empowerment) में स्वास्थ्य एवं शिक्षा के साथ अहिंसा, सत्य, संयम, तप, क्षमा, वात्सल्य, ब्रह्मचर्य आदि की आध्यात्मिक साधना सबसे अधिक कारगर है।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के द्वारा प्रकाशित आगम-साहित्य

आचाराङ्गसूत्र (प्रथम श्रुतस्कन्ध), मूल्य 100/–, तत्त्वावधान–आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा.– जैनागमों में आचाराङ्गसूत्र का प्रथम स्थान है। आचाराङ्गसूत्र के इस संस्करण में प्राकृत सूत्र, उनका हिन्दी अर्थ एवं विवेचन उपलब्ध है। प्रत्येक अध्ययन के उद्देशक का सारपूर्ण परिचय दिया गया है। पुस्तक का विवेचन सारगर्भित एवं ज्ञानवर्धक है।

आवश्यकसूत्र, मूल्य–120 रुपये, तत्त्वावधान–आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा.–आवश्यकसूत्र में सभी पाठों को मूल रूप में गहरे लिखकर संस्कृत–छाया, अन्वयार्थ, भावार्थ एवं विवेचन दिया गया है तथा परिशिष्ट में धारणात्मक एवं बोधक प्रश्नोत्तर भी समाहित किये गये हैं।

उपासकदशांगसूत्र, मूल्य–120.00 रुपये, तत्त्वावधान–आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा.–इसमें मूलपाठ, संस्कृत–छाया, शब्दार्थ, भावार्थ के साथ आवश्यक विवेचन किया गया है तथा प्रचलित कुछ धारणाओं का भी समीचीन समाधान प्रस्तुत किया गया है।

उत्तराध्ययनसूत्र, भाग–1, भाग–2, भाग–3, तीनों भागों का मूल्य 420/–, तत्त्वावधान–आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा.–उत्तराध्ययनसूत्र के इन तीनों भागों में हिन्दी पद्यानुवाद, संस्कृत–छाया, अन्वयार्थ, भावार्थ एवं विवेचन दिया हुआ है। अन्त में परिशिष्टों के माध्यम से विशेष सामग्री भी प्रस्तुत की है। प्रथम भाग में 1 से 12 अध्ययन, द्वितीय भाग में 13 से 24 एवं तृतीय भाग में 25 से 36 अध्ययनों का वर्णन है।

दशवैकालिकसूत्र, मूल्य–150.00 रुपये, तत्त्वावधान–आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा.– यह संस्करण मूल पाठ, संस्कृत–छाया, अर्थ, अन्वयार्थ, भावार्थ/विवेचन, टिप्पण आदि के साथ हिन्दी पद्यानुवाद से भी सम्पृक्त है।

नन्दीसूत्र, मूल्य–60.00 रुपये, तत्त्वावधान–आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा.–पाँच ज्ञान की विशिष्ट जानकारी हेतु यह सूत्र अत्युपयोगी है। इसमें आचार्यश्री द्वारा की गई मूलरूप से संस्कृत टीका, हिन्दी अनुवाद एवं विवेचन का समावेश किया गया है।

प्रश्नव्याकरणसूत्र, भाग–1, भाग–2, दोनों भागों का मूल्य 80 रुपये, अनुवादक–आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा.–इसमें मूलपाठ, संस्कृत–छाया, शब्दार्थ के साथ भावार्थ एवं विवेचन को योजित किया गया है। यथाप्रसङ्ग आवश्यक स्पष्टीकरण दिए गए हैं।

अंतगडदसासूत्र, मूल्य–40.00 रुपये (छोटा), मूल्य–100.00 रुपये (बड़ा), तत्त्वावधान–आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा.–इसके छोटे संस्करण में प्राकृत मूलपाठ के सामने कॉलम पद्धति में हिन्दी अर्थ दिए गए हैं। इसके बड़े संस्करण में आठ परिशिष्ट विशेष रूप से दिये गए हैं–परिशिष्ट 1 में सूक्तियाँ, 2 में विशिष्ट तथ्य, 3 में सन्दर्भ कथा–प्रसङ्ग, 4 में अंतगडदसासूत्र से सम्बन्धित सारणियाँ, 5 में प्रश्नोत्तर, 6 में सूत्र–वाचन के समय गाने योग्य भजन तथा अन्य उपयुक्त प्रार्थना, 7 में प्रत्याख्यानसूत्र और 8 में तप विधि चार्ट संकलित हैं।

अंक सौजन्य

श्री महावीराय नमः
श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः

॥ जय गुरु हीरा॥ ॥ जय गुरु महेन्द्र॥ ॥ जय गुरु मान॥

मूक साधकों का दूसरे के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। आचार तथा त्याग बिना बोले भी हर व्यक्ति के जीवन पर प्रभाव डालता है। आचार्यश्री हस्ती

दान एक तरफ दाता की ममता-मूर्च्छा घटाता है तो दूसरी तरफ दान ग्रहण करने वाले को सुखी एवं सन्तुष्ट करता है। आचार्यश्री हीरा

चारित्र चूड़ामणि, इतिहास मार्तण्ड, सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक
परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. के अनन्य श्रद्धानिष्ठ,
मूकसेवी, धर्म-प्रभावक, उदारमना श्रावकरत्न श्री रतनलालजी नाहर

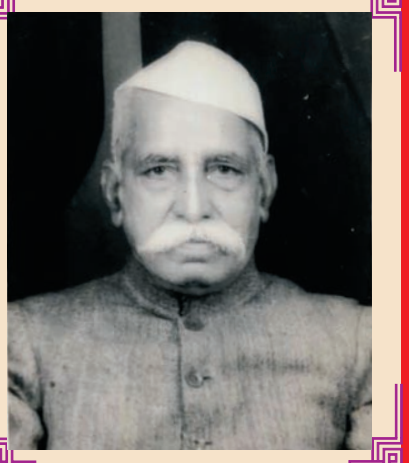

जन्म सन् 1900 स्वर्गवास 4 जुलाई, 1967

श्रद्धावनत

नाहर परिवार मुम्बई, भोपाल, इन्दौर, बरेली

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

With Best Compliments :
Rajeev Nita Daga Foundation Houston

ISSN 2249 - 2011 हिन्दी-मासिक

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
प्लॉट नं. 2, नेहरुपार्क, जोधपुर (राज.), फोन-0291-2636763
E-mail : absjrhssangh@gmail.com

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
अशोककुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182, के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997, 2705088
जिनवाणी वेबसाइट- www.jinwani.in

卐 प्रधान सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

卐 सह-सम्पादक
नौरतनमल मेहता, जोधपुर
त्रिलोकचन्द जैन, जयपुर
मनोज कुमार जैन, जयपुर

卐 सम्पादकीय कार्यालय
ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाजनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : 0141-2705088
E-mail : editorjinwani@gmail.com / editorjinvani@gmail.com

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2021-23
WPP Licence No. JaipurCity-WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

अह चउद्दसहिं ठाणेहिं,
वट्टमाणे उ संजए।
अविणीए वुच्चई सो उ,
निव्वाणं च न गच्छइ।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 11.6

चौदह स्थानों में वर्तमान मुनि,
विनयहीन है कहलाता।
अपने ही दोषों के कारण,
वह मुक्त नहीं है हो पाता।।

जनवरी 2023
वीर निर्वाण सम्वत्, 2549
माघ, 2079

वर्ष 81 अंक 1

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.	स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु.	संरक्षक सदस्यता : 11000/-
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु.	साहित्य आजीवन सदस्यता- 8000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/सहयोग राशि ``JINWANI'' बैंक खाता संख्या SBI 51026632986 IFSC No. SBIN 0031843 में NEFT/RTGS से जमा कराकर जमापर्ची के साथ पेन नं. भी (काउन्टर-प्रति) श्री अनिलजी जैन के व्हाट्स एप्प नं. 9314635755 पर भेजें।

जिनवाणी में प्रदत्त सहयोग राशि पर आयकर में 80G की छूट उपलब्ध है।

मुद्रक : डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-4043938

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	सशक्तीकरण का अभिप्राय	–डॉ. धर्मचन्द जैन	7
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	–डॉ. धर्मचन्द जैन	10
विचार-वारिधि-	आत्मसुधार के सूत्र	–आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	11
प्रवचन-	दुःख का मूल कारण है मिथ्यात्व	–आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	12
	वैराग्य का रंग श्रावक को दृढ़धर्मी बनाता है	–भावीआचार्यश्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.	16
	मुक्ति-प्राप्ति में 'पञ्चकारण समवाय' की भूमिका	–मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा.	19
	बुराई का त्याग : उन्नति का मार्ग	–तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.	23
	गुरु है तो सब कुछ है	–श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा.	26
	खोलकर सुन लो कान	–श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	30
113वाँ जन्म-दिवस-	सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक : आचार्यश्री हस्ती	–डॉ. मीनाक्षी डागा	31
युवा-स्तम्भ-	आचाराङ्ग के आधार पर एक सफल व्यक्ति के गुण	–श्री निपुण डागा	35
English-section	**Voluntary Death in Non-Jaina Traditions with Special Reference to Sallekhanā**	–*Dr. S. P. Pandey*	44
प्रासङ्गिक-	नूतन वर्ष के ये अक्षर, प्रस्फुटित कर रहे आनन्द के स्वर	–श्रीमती अंशु संजय सुराणा	53
प्रासङ्गिक-चिन्तन-	कोशिश	–श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'	56
तत्त्व-चर्चा-	आओ मिलकर कर्मों को समझें (24)	–श्री धर्मचन्द जैन	58
आध्यात्मिक-	जीवन की विदाई : मृत्यु	–श्रीमती रतन चोरड़िया	61
संस्कृति-रक्षण-	अपनी संस्कृति और संस्कारों को बचाओ	–श्री शुभम बोहरा	65
परिवार-स्तम्भ-	अपने वचनों को सम्भालो	–श्री मोहन कोठारी 'विनर'	67
जीवन-व्यवहार-	जैसा खाए अन्न वैसा होए मन	–श्री जयदीप ढड्ढा	69
	धर्म का मूल आधार : आत्मा और परमात्मा	–श्री ओ. पी. चपलोत	70
	जीवन में जरूरी है लक्ष्मण रेखा	–श्री गौतम पारख	72
सेवा का रूप-	मैं तो जानता हूँ	–श्री एस. कन्हैयालाल गोलेछा	74
गीत/कविता-	जीवन का सार	–श्रीमती रेणु जैन 'साक्षी'	29
	यह वर्ष कुछ ख़ास हो	–श्री राजेन्द्र जैन 'राजा'	52
	महावीराष्टक (हिन्दी पद्यानुवाद)	–डॉ. मनोज जैन 'निर्लिप्त'	55
	संयम-यात्रा	–श्री विजेन्द्र जैन	57
	सुबुद्धि आपे अन्तश्चेतन	–श्री यल्लप्पा	60
	मोक्ष-प्राप्ति-मार्ग	–डॉ. रमेश 'मयंक'	64
	जय-जय हस्ती श्रमण	–श्री दिलीप गाँधी	68
	गुरु देशना सुनकर.....	–महासती श्री रुचिताजी म.सा.	76
विचार/चिन्तन-	ऐ मेरे आत्मन्!	–श्री धर्मेन्द्र कुमार जैन	66
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	–श्री गौत्तमचन्द जैन	75
समाचार-विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	77
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	89
बाल-जिनवाणी -	विभिन्न आलेख/रचनाएँ	–विभिन्न लेखक	91

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 7
ISSN 2249-2011

सम्पादकीय

सशक्तीकरण का अभिप्राय

डॉ. धर्मचन्द जैन

यह युग नारी के सशक्तीकरण का युग है। भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात् इस क्षेत्र में भारी प्रगति हुई है। इसका सबसे बड़ा साधन शिक्षा-प्राप्ति है। शिक्षा के साथ स्वतन्त्रता और समानता के अधिकार ने भी नारी को तीव्रता से सशक्त बनाया है। पुरुषों ने भी इस दिशा में पूरा सहयोग किया है। सरकार के स्तर पर भी अनेक योजनाएँ नारी को आगे बढ़ाने में सहयोगी सिद्ध हो रही हैं। विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में भी नारी की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। शिक्षा के लिए अब ग्रामों एवं नगरों से बालिकाओं को अन्य शहरों में भेजा जा रहा है। स्वतन्त्रता एवं शिक्षा के अधिकार ने नारी के भीतर शक्ति का सञ्चार किया है। समानता के अधिकार ने भी इसे पुरुषों के समकक्ष बिठा दिया है। बुद्धि, ज्ञान एवं योग्यता में वह कुछ क्षेत्रों में पुरुषों से भी आगे बढ़ रही है। अनेक संस्थाओं और औद्योगिक कम्पनियों का महिलाएँ नेतृत्व कर रही हैं। वे अब पुलिस और सेना में भी प्रविष्ट हो गयी हैं। दो सौ वर्ष पूर्व सम्पूर्ण विश्व में महिलाओं की बदतर स्थिति थी। उन्हें वोट देने का अधिकार भी नहीं था। भारत में 50 वर्ष पूर्व लड़कियों को शिक्षा के लिए विद्यालय में भेजने से भी माता-पिता कतराते थे। अल्पायु में ही विवाह हो जाते थे। घूँघट में रहकर वह घर की चक्की चलाती, कुँओं से पानी लाती एवं घरों को लीपती रहती थीं। गायों, भैंसों का दूध निकालती एवं कण्डे तैयार करती थी। चूल्हे पर धुएँ के बीच रोटी सेका करती थी। नेत्रों से धुएँ के कारण आँसू टपकते रहते थे। वह परिवारजनों की एवं बच्चों की सेवा करके प्रसन्न रहती थी। बहुत कम इच्छाएँ थीं। शहरों में भ्रमण का यदा-कदा ही अवसर मिलता था। ट्रेन में बैठना बड़ी बात होती थी। आज युग एकदम परिवर्तित हो गया है। विमानों में भी यात्रा आसान हो गयी है। पुरुषों को भी पहले से अधिक सुविधाएँ प्राप्त हुई हैं तो नारी भी उनसे समृद्ध हुई है।

भौतिक विकास ने सुख-सुविधाओं में संवर्द्धन किया है तो संविधान ने स्वतन्त्रता, समानता और शिक्षा के माध्यम से आन्तरिक आत्मविश्वास में वृद्धि की है। पूर्वापेक्षया सोच में परिवर्तन हुआ है। एक अभियान चला कि बालक और बालिका में कोई फर्क नहीं समझा जाये। आज इस अभियान का कुछ प्रभाव देखा जा रहा है। ग्रामीण माता-पिता भी संकीर्ण सोच से ऊपर उठे हैं और बालक-बालिकाओं को समान रूप से शिक्षालयों में भेज रहे हैं। बालिकाओं को भी समान रूप से परिवार में अवसर प्रदान किये जा रहे हैं।

पुरुष भी इस विश्व में बहुत अधिक सशक्त नहीं हैं, किन्तु पुरुष की अपेक्षा नारी अधिक पिछड़ी हुई रही, इसलिये उसके सशक्तीकरण पर बल दिया गया। अनेक पुरुष भी आज कई नारियों से अधिक पिछड़े हुए हैं। शिक्षा, सोच एवं रोजगार की दृष्टि से उनके विकास की आवश्यकता है। पुरुष एवं नारी दोनों का समान रूप से विकास होने पर परिवार और देश का विकास सम्भव है।

नारी परिवार की धुरी होती है। उसकी योग्यता और सशक्तता से समस्त परिवार को बल मिलता है। नारी ने ही किसी पुरुष को महापुरुष बनने की प्राथमिक शिक्षा दी है। वह सेवा, सहिष्णुता, उपकार, वात्सल्य आदि गुणों के कारण पूज्या मानी गई है। नारी कभी कुमाता, कुपत्नी अथवा कुलटा का रूप भी धारण कर लेती है। इसके उदाहरण आज के इस विकसित युग में भी देखे जा रहे हैं। कुमाता अपनी सन्तान की उपेक्षा कर अन्य प्रेमी के साथ विवाह कर लेती है। कुपत्नी अपने

पति की अपेक्षा प्रेमी को अधिक महत्त्व देकर पति को मौत के घाट उतारने का षड्यन्त्र रचती है। इसको सशक्तीकरण नहीं कहा जा सकता है। यह शक्ति का दुरुपयोग है।

सशक्तीकरण (Empowerment) का अभिप्राय है शक्तिहीन या निर्बल को शक्तिमान बनाना। शक्तिमान बनाने के पाँच रूप सम्भव हैं-1. शारीरिक दृष्टि से शक्तिशाली बनाना। 2. संविधान आदि के माध्यम से अधिकार प्रदान करके शक्तिसम्पन्न बनाना, 3. शिक्षा के द्वारा मानसिक एवं बौद्धिक दृष्टि से सबल बनाना, 4. आय के साधन उपलब्ध करा कर सशक्त बनाना, 5. चारित्रिक एवं आध्यात्मिक विकास के द्वारा शक्तिमान होना।

शारीरिक दृष्टि से शक्तिसम्पन्न बनाने के अभी कोई विशेष अभियान नहीं चल रहे हैं। हाँ, यह अवश्य है कि रोग उत्पन्न होने पर चिकित्सालयों की व्यवस्था सुलभ होती जा रही है। शारीरिक दृष्टि से सशक्त करने के लिए नियमित व्यायाम, प्राणायाम, श्रम और समुचित पौष्टिक भोजन आवश्यक है। इस ओर प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित किये जाने की आवश्यकता है। शरीर को कैसे स्वस्थ एवं सबल रखना, इसके सम्बन्ध में शैक्षिक पाठ्यक्रम होना चाहिए। बाल्यकाल से ही स्वास्थ्य के प्रति सजगता अनिवार्य है। यह सजगता नहीं होने के कारण ही नयी पीढ़ी श्रम से कतरा रही है। वह थोड़ी दूर जाने के लिए भी वाहन का उपयोग करती है। शरीर को अधिकाधिक आरामतलबी बनाया जा रहा है। स्वास्थ्य परक भोजन की अपेक्षा स्वाद परक भोजन को पसन्द किया जा रहा है। यही कारण है कि भारत में पिज्जा, बर्गर, नूडल्स, मोमोज आदि का आहार चल पड़ा है। इसको खाते समय कोई स्वास्थ्य का विचार नहीं करता है। इस ओर भी सरकार को एवं शिक्षा नीति तथा स्वास्थ्य नीति के विचारकों को ध्यान देने की आवश्यकता है कि भारत में किस प्रकार के आहार का सेवन किया जाये। स्वास्थ्यपरक आहार में भी अनेक स्वादिष्ट व्यञ्जन भारत में बनते रहे हैं और बन सकते हैं। अत: पहला सशक्तीकरण स्वास्थ्य का होना चाहिए।

भारतीय संविधान ने समानता एवं स्वतन्त्रता के द्वारा भारतीय प्रजा को सशक्त बनाया है। वैचारिक स्वतन्त्रता के साथ धार्मिक स्वतन्त्रता भी प्रदान की है। स्वयं के विकास के लिए स्वतन्त्रता के अनेक रूप उपयोगी सिद्ध हुए हैं। सभी स्त्री-पुरुष, निर्धन-धनवान, सवर्ण-असवर्ण आदि में भेद करना उचित नहीं है। सभी मनुष्य समान हैं। समानता के इस सिद्धान्त ने भी मनुष्य को विकास करने का आत्मबल प्रदान किया है। अब कोई अछूत नहीं है। स्वच्छता को महत्त्व दिया जा रहा है। स्वच्छ रहकर सब स्वस्थ एवं समानता के साथ जी सकते हैं। संविधान में बन्धुता का भी उल्लेख है। सभी परस्पर भ्रातृत्व भाव रखकर जीवन यापन करें तो कहीं कोई वैमनस्य की स्थिति उत्पन्न ही नहीं हो।

सशक्तीकरण में सबसे अधिक प्रभावी साधन शिक्षा है। शिक्षा ही अज्ञान-अन्धकार को दूर करती है। जीवन के महत्त्व को स्थापित करती है। अनेक भ्रान्तियों का निवारण करती है। इससे आत्मविश्वास जागता है एवं जीवन में शक्ति का अनुभव होता है। आचार्यश्री हस्ती की दृष्टि में शिक्षा के दो रूप हैं-1. जीवन-निर्वाहकारी शिक्षा। 2. जीवन-निर्माणकारी शिक्षा। जीवन-निर्वाहकारी शिक्षा रोजगार का साधन तो प्रदान करती है, किन्तु वह जीवन में मूल्यों का सन्निवेश नहीं करती। जीवन-निर्माणकारी शिक्षा जीवन को सही दिशा प्रदान करती है। जीवन-विकास के लिए दोनों ही शिक्षाओं की उपयोगिता है।

जीने के लिए नियमित आय का होना आवश्यक है, क्योंकि धन के द्वारा ही जीवन के लिए आवश्यक साधन जुटाए जा सकते हैं। प्राचीनकाल में पुश्तैनी धन्धों, कृषि एवं पशुपालन से जीवन चलता था। आज सैकड़ों हजारों तरीके के धन्धे हो गये हैं। नौकरियों के अनेक आयाम उपलब्ध हैं। सरकारी एवं गैरसरकारी तथा निजी संस्थानों के माध्यम से रोजगार मिल रहे हैं। इससे भी नारी एवं पिछड़े वर्ग का सशक्तीकरण हुआ है। आरक्षण ने भी वर्ग विशेष को सशक्त बनाया है।

सशक्तीकरण के लिए आध्यात्मिक शक्ति का संवर्द्धन सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह मानव को भीतर से सशक्त बनाती है। वह फिर निर्भयता, निर्द्वन्द्वता के साथ तनावरहित जीवन जीता है। यह आध्यात्मिक शक्ति अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, संयम, तप, विकार-विजय आदि से प्राप्त होती है। क्षमा, सहिष्णुता, आत्मवद्भाव आदि आत्मिक शक्ति को बढ़ाने वाले साधन हैं। इस आत्मिक शक्ति से मानसिक शक्ति स्वत: सम्वर्द्धित होती है तथा व्यक्ति उन प्रसङ्गों से अपने को बचाने में समर्थ होता है जिनसे उसकी शक्ति का अपव्यय हो जाता है। सशक्तीकरण का यह उच्चतर साधन है जो मनुष्य को मानसिक रोगों से बचाता है, साथ ही उसकी अनेक शारीरिक रोगों से भी रक्षा करता है।

आध्यात्मिक शक्ति ही है जो मनुष्य को हर परिस्थिति में प्रसन्न, सन्तुलित एवं सुखी रहने का बल प्रदान करती है। फिर वह तुनकमिज़ाजी नहीं होता। उसका पारिवारिक एवं दाम्पत्य जीवन भी सुखकर होता है। वह भीतर में कमजोर बनाने वाले क्रोध, अहंकार आदि शत्रुओं पर भी विजय प्राप्त करने में सक्षम होता है। आध्यात्मिक सामर्थ्य ही व्यक्ति को सही अर्थों में ज्ञान-सम्पन्न, आचार-सम्पन्न, तप-सम्पन्न एवं सबके प्रति मैत्री-सम्पन्न बनाता है।

आज की नारी सशक्तीकरण के उपर्युक्त उपायों पर अपना ध्यान केन्द्रित न कर स्वतन्त्रता एवं समानता का दुरुपयोग कर रही है। युवतियाँ अङ्ग प्रदर्शन करके अपने को आधुनिक एवं विकसित समझ रही हैं। नारी की छाती पर से चुन्नी हट गयी है। पुरुषों के चित्त पर इसका क्या प्रभाव होगा, इसका उसे विचार ही नहीं है। यह मात्र अपनी स्वतन्त्रता का विवेकरहित प्रयोग है। प्राय: अङ्गों को आवरित रखने के लिए परिधान धारण किये जाते हैं, किन्तु वर्तमान में इस प्रकार के परिधानों का प्रयोग बढ़ रहा है जिनसे नारी के आधे अङ्ग अनावरित रहते हैं। इससे नारी के लज्जा एवं शालीनता के गुण विलुप्त होते जा रहे हैं। मुस्लिम आक्रमण के युग में आत्मरक्षा के लिए घूँघट की प्रथा प्रारम्भ हुई थी, आज के शिक्षित वातावरण में एवं नारी को सशक्त बनाने की दृष्टि से उसको अनुचित स्वीकार किया गया है। किन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं है कि वह उन्मुक्त बनकर लज्जा और शालीनता को दरकिनार कर दे। आधुनिक मँहगे, किन्तु अङ्ग प्रदर्शक वस्त्रों ने स्त्री की आबारू को मनचले लोगों के लिए दावँ पर लगा दिया है। उसकी शक्ति सम्पन्नता तो इसमें है कि वह शालीनता के साथ अपने सद्गुणों से पूज्य स्थान को सुरक्षित रखे। साधु के लिए स्त्री के मनोहर अङ्गों का निरीक्षण करना निषिद्ध है, क्योंकि इससे कामवासना जागृत हो सकती है। फिर साधारण पुरुषों के चित्त पर भी प्रभाव पड़ने की सम्भावना का निषेध नहीं किया जा सकता है। अत: आवश्यक है कि स्त्री स्वयं मर्यादा, शालीनता, विनम्रता आदि गुणों से सुसज्जित हो। आज स्वतन्त्रता के कारण अनेक माता-पिता अपने पुत्र-पुत्री का विवाह अपनी भावना के अनुरूप नहीं कर पाते हैं। अनेक स्थानों पर रिलेशनशिप की नयी अवधारणा का प्रयोग हो रहा है। यह भी स्वतन्त्रता का दुरुपयोग है जो भारतीय संस्कृति को विनाश की ओर धकेल रहा है।

सही अर्थों में सशक्तीकरण तब होगा जब मनुष्य प्रदर्शन की अपेक्षा सही सोच को महत्त्व देगा। दूसरों से सुख पाने की अपेक्षा दूसरों का हित ही सोचेगा तथा कलह, द्वन्द्व, चिन्ता, भय आदि से मुक्त होकर जीवन यापन करेगा। बालक जहाँ सुसंस्कारों को प्राप्त करके तथा शारीरिक, मानसिक विकास करके सशक्तीकरण का अनुभव करते हैं वहाँ युवापीढ़ी भी जोश के साथ आत्महित का विचार करके सशक्तीकरण के उपायों को अपनाकर शक्ति सम्पन्न बन सकती है। नारी की शक्ति पुरुष के साथ कलह करने से नहीं बढ़ती। अभिमान का प्रदर्शन करने से भी कोई बड़ा नहीं बनता। जो अपने साथ दूसरों का भी हित सोचता है, वह शक्ति का सञ्चय करता है। समस्त प्राणिमात्र के प्रति मैत्री एवं करुणा का भाव सशक्त व्यक्ति में ही सम्भव है। सशक्त व्यक्ति दूसरों को नि:स्वार्थ प्रेम, मैत्री, निर्भयता, सन्तोष आदि प्रदान कर सकता है। इस दृष्टि से भोगी की अपेक्षा योगी को शक्ति सम्पन्न कहा जा सकता है।

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 10
ISSN 2249-2011

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

डॉ. धर्मचन्द जैन

सुवक्कसुद्धिं समुपेहिया मुणी, गिरं च दुट्ठं परिवज्जए सया।
मियं अदुट्ठं अणुवीइ भासए, सयाण मज्झे लहइ पसंसणं।।

-दशवैकालिकसूत्र, अध्ययन 7, गाथा 55

अर्थ-मुनि सुवाक्यशुद्धि की शिक्षा का सम्यक् प्रकार से विचार करके दोषयुक्त वाणी का सदा के लिए त्याग कर दे। जो विचारपूर्वक नपी-तुली दोषरहित भाषा बोलता है, वह सज्जनों के समूह में प्रशंसा प्राप्त करता है। उसका व्रत भी निर्दोष रहता है।

विवेचन-साधुचर्या में भाषा समिति एवं वचनगुप्ति का पालन आवश्यक माना गया है। वचनगुप्ति तो अनावश्यक एवं व्यर्थ के शब्द प्रयोग न करने तथा जहाँ तक सम्भव हो, मौन रहने के लिए प्रेरित करती है। भाषा समिति में वचनों का प्रयोग विवेकपूर्वक सोच-समझकर किया जाता है। साधु के लिए सावद्य भाषा का प्रयोग निषिद्ध है। यही नहीं, वे सावद्य का अनुमोदन करने वाली भाषा का भी प्रयोग नहीं करते। इसीलिये साधु निर्दोष या निरवद्य भाषा का प्रयोग करते हैं। उनके मुख से पाप का समर्थन करने वाली भाषा का प्रयोग सर्वथा निषिद्ध है।

दशवैकालिकसूत्र में श्रमणाचार का बहुत सुन्दर प्रतिपादन हुआ है। उसका सप्तम अध्याय वाक्यशुद्धि पर ही केन्द्रित है। इस अध्ययन का नाम 'सुवक्कसुद्धी' अर्थात् सुवाक्य-शुद्धि है। जब आचरण के प्रति निष्ठा होती है एवं भीतर में निर्मलता होती है तभी सुवाक्य निकलते हैं और वे सुवाक्य भी पूर्णत: निरवद्य होते हैं। जब कोई श्रमण/श्रमणी क्रोध, लोभ, भय, हास्य और काम आदि विकारों से ग्रस्त होते हैं तो उनके मुख से नि:सृत वाक्य सुवाक्य नहीं होते। उनकी वाणी में असत्य भाषा का दोष आ जाता है। साधु के लिए दो ही प्रकार की भाषा व्यवहार्य है, सत्य भाषा और व्यवहार भाषा।

प्रस्तुत गाथा सन्देश दे रही है कि मुनि सम्यक् विचार करके दोषों का परिवर्जन करके भाषा का प्रयोग करे। उसकी भाषा सीमित, निर्दोष एवं विचारपूर्वक बोली गई होनी चाहिए। इस प्रकार की भाषा का प्रयोग करने वाला साधु सज्जनों के मध्य प्रशंसा को प्राप्त करता है। साधु की प्रशंसा उसके सम्यक् आचार, सम्यक् वचन और सम्यक् व्यवहार के कारण होती है।

अधिक बोलने से कोई न कोई अपशब्द या व्यर्थ का शब्द प्रयुक्त हो सकता है। इसलिए साधु को चाहिए कि वह सीमित शब्दों का प्रयोग करे। नपे-तुले शब्दों का प्रयोग करने से अन्य व्यक्ति उस बात को ध्यान से भी सुनता है तथा समझने का प्रयत्न करता है। 18 पापों में 6 पाप तो भाषा से सम्बन्धित ही होते हैं। यथा मृषावाद, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, पर-परिवाद तथा मायामृषावाद।

दशवैकालिक के ही अष्टम अध्ययन 'आयारपणिही' में भाषा प्रयोग के सम्बन्ध में एक-दो विशेषण और दिए गए हैं। उनमें एक है-असन्दिग्ध। साधु सन्देह युक्त भाषा का प्रयोग न करे, परिपूर्ण भाषा का प्रयोग करे, उद्विग्नता उत्पन्न करने वाली भाषा का प्रयोग न करे। इस तरह आत्मसाधक सोच समझकर अल्प शब्दों में भावों का भाषा के माध्यम से सम्प्रेषण करता है। साधारण बात-चीत में तो इसका ध्यान रखना ही चाहिए, किन्तु प्रवचन के समय भी सन्देह युक्त कथ्यों को प्रस्तुत करने से बचे। हितकारी वचनों का प्रयोग करे। कटुतारहित मधुर शब्दावली में किन्तु रोचक रूप में प्रवचन फरमाया जाए। आगम में जो बातें पुष्ट होती हों अथवा विरुद्ध न हों, किन्तु स्वपर का कल्याण करने वाली हों, उन्हीं की प्रस्तुति की जानी चाहिए।

साधक के लिए प्रतिपादित वचन प्रयोग के ये नियम श्रावक-श्राविका के लिए भी हितावह हैं। इनके प्रयोग से उनकी भी विश्वसनीयता बढ़ती है एवं वे प्रशंसा को प्राप्त होते हैं।

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 11
ISSN 2249-2011

विचार-वारिधि

आत्मसुधार के सूत्र

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.

- भोगोपभोग की लालसा जितनी तीव्र होगी, पाप भी उतने ही तीव्र होंगे।
- सामान्य लोग भौतिक पदार्थों की प्राप्ति के लिए साधना करते हैं, जबकि साधु उनके त्याग की और उनकी अभिलाषा न करने की साधना करता है। शुद्ध आत्मोपलब्धि ही उसकी साधना का उद्देश्य होता है।
- राग की स्थिति में मनुष्य का विवेक सुषुप्त हो जाता है। जिस पर राग भाव उत्पन्न होता है, उसके अवगुण उसे दृष्टिगोचर नहीं होते। गुणवान के गुणों का आकलन करना भी उस समय कठिन हो जाता है।
- यह सत्य है कि मन अत्यन्त चपल है, हठीला है और शीघ्र काबू में नहीं आता। किन्तु उस पर काबू पाना असम्भव नहीं है। धर्म-शिक्षा या अभ्यास एवं वैराग्य के द्वारा मन को वशीभूत किया जा सकता है।
- किसी उच्च स्थान पर पहुँचने के लिए एक-एक क़दम ही आगे बढ़ाना पड़ता है।
- जो शरीर के प्रति ममतावान् है, उसे शरीर के प्रतिकूल आचरण करने पर रोष उत्पन्न होता है, किन्तु जिसने शरीर को पर पदार्थ समझ लिया है और जिसे उसके प्रति किञ्चित् भी ममता नहीं रह गई है, वह शरीर पर घोर से घोर आघात लगने पर भी रुष्ट नहीं होता है।
- ज्ञान अपने आप में अत्यन्त उपयोगी सद्गुण है, किन्तु उसकी उपयोगिता विरतिभाव प्राप्त करने में है।
- जो विवेकशील साधक विरतिभाव के बाधक कारणों से बचता है, वही साधना में अग्रसर हो सकता है।
- सम्यग्दर्शन भाव रत्न है, जो आत्मा की निज सम्पत्ति है। इससे आत्मा के हित और सच्चे सुख की प्राप्ति होती है।
- जो मनुष्य भोगोपभोग में संयम नहीं रखता, वह प्रलोभनों का सामना नहीं कर सकता।
- जिस बुराई को मिटाना चाहते हो उसी का आश्रय लेते हो, यह तो उस समय बुराई को मिटाना नहीं, बल्कि उसकी परम्परा को चालू रखना है।
- समभाव की साधना की विशेषता यह है कि इससे व्यक्तिगत जीवन अत्यन्त उच्च, उदार, शान्त और सात्त्विक बनता है।
- धर्म एकान्त मंगलमय है। वह आत्मा, समाज, देश तथा अखिल विश्व का कल्याणकर्त्ता और त्राता है। आवश्यकता इस बात की है कि जनता के मानस में धर्म और नीति के प्रति आस्था उत्पन्न की जाए।
- जो शासन धर्मसापेक्ष होगा, वही प्रजा के जीवन में निर्मल, उदात्त और पवित्र भावनाएँ जागृत कर सकेगा।
- प्रत्येक साधना परायण व्यक्ति को चार बातें ध्यान में रखनी चाहिए-(1) स्थिर आसन, (2) स्थिर दृष्टि, (3) मित भाषण और (4) सद्विचार में निरन्तर रमणता। इन चार बातों पर ध्यान रखने वाला लोक-परलोक में लाभ का भागी होता है।
- जिसके मन में संयमी होने का प्रदर्शन करने की भावना नहीं है, वरन् जो आत्मा के उत्थान के लिए संयम का पालन करता है, वह संयम में आयी हुई मलिनता को क्षण भर भी सहन नहीं करेगा।

-'अमृत-वाक्' पुस्तक से गृहीत

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 12
ISSN 2249-2011

प्रवचन

दुःख का मूल कारण है मिथ्यात्व

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. द्वारा जयपुर में प्रदत्त प्रवचन का आशुलेखन श्री अशोककुमारजी जैन 'हरसाना', जयपुर द्वारा किया गया है। सम्पादन में सह सम्पादक श्री त्रिलोकचन्दजी जैन, जयपुर का सहकार रहा है।

-सम्पादक

संसार के समस्त दुःखों का अन्त करके अनन्त अव्याबाध सुख को प्राप्त करने वाले तीर्थंकर भगवान एवं कर्मबन्ध के हेतुओं को छोड़कर साधना में चरण बढ़ाने वाले गुरु भगवन्तों के चरणों में कोटि-कोटि वन्दन!

तीर्थंकर भगवान महावीर की अन्तिम वाणी जीवन निर्माण में सत्पुरुषार्थ करने पर जोर दे रही है। प्रत्येक प्राणी प्रतिपल प्रतिक्षण निरन्तर क्रिया करता आ रहा है। अनेक प्राणी क्रिया करके बन्धन काटने का उपक्रम कर रहे हैं तो अनेक प्राणी बन्धन बढ़ा रहे हैं। क्रिया यदि सम्यक् हो तो वह मोक्ष प्राप्त करा सकती है और यदि मिथ्या हो तो नरक आदि दुर्गतियों में परिभ्रमण कराती है। विपरीत क्रियाएँ कर्मबन्ध की हेतु हैं और सम्यक् क्रियाएँ कर्मनिर्जरा की निमित्त हैं। सम्यक् क्रिया अर्थात् सम्यक् पुरुषार्थ कर्म के बन्धनों को तोड़कर शाश्वत सुख को प्राप्त कराने वाला बन जाता है।

आज हमें यह देखना है कि जो क्रियाएँ हम कर रहे हैं वे बन्धन तोड़ने वाली बन रही हैं अथवा बन्धन बढ़ाने वाली। किस क्रिया की क्या प्रामाणिकता है इसका थोड़ा विचार करते हैं। जरा सोचें कि विनाशी के लिए हमें अधिक पुरुषार्थ करना चाहिए अथवा अविनाशी के लिए। आज अधिकांश लोगों का अधिक पुरुषार्थ विनाशी के लिए हो रहा है। हाथ गन्दे हैं, शरीर में गन्दगी है, कपड़ों पर गन्दगी है, इस प्रकार की गन्दगी को हटाने का पुरुषार्थ दिन-रात कर रहे हैं, परन्तु आत्मा पर जो गन्दगी लगी है, उसकी शुद्धि के प्रति सजगता नहीं है। जबकि साधक का प्राथमिक कर्त्तव्य आत्मा पर लगी गन्दगी को हटाना है। अपने प्राथमिक कर्त्तव्य को भूलने के कारण ही यह जीव अनादिकाल से दुःख पा रहा है। पहले भाव गन्दगी हटाना जरूरी है, लेकिन अधिकांश पुरुषार्थ द्रव्य गन्दगी को हटाने में लगा हुआ है। आज आपको क्या इष्ट है और क्या अनिष्ट? कपड़े पर लगा मैल इष्ट नहीं, हाथ-पैर पर लगी गन्दगी भी अभीष्ट नहीं, इन्हें तत्काल शुद्ध करने का प्रयास किया जा रहा है, परन्तु ये गन्दगियाँ अनेक बार कपड़े और शरीर पर लग चुकी हैं और आगे भी लगती रहेंगी। यह शरीर कभी शुद्ध हुआ नहीं और कभी होगा भी नहीं। जिसकी रचना गन्दगी से हुई है उससे कभी गन्दगी अलग हो जाय, ऐसा कभी नहीं होगा। जो विशुद्ध है, निष्कलंक है, निरञ्जन है उसके लिए प्रयास नहीं किया जा रहा है। तीर्थंकर भगवान महावीर ने कहा-"हे मानव! बोध को प्राप्त कर। इस अनन्त पुण्यशाली मानव भव में 83 लाख 99 हजार 999 योनियों को पार कर आया है। यह मानव भव शरीर के क्षणिक सुखों के लिए नहीं, क्षणिक भोगों के लिए नहीं, आत्मा को परमात्मा बनाने के लिए प्राप्त हुआ है। जब तक कर्मबन्ध के हेतु नहीं छोड़े जायेंगे तब तक कर्मों का संयोग रहेगा। कर्मों का संयोग जब तक रहेगा तब तक जीव सुखी हुआ नहीं और होगा भी नहीं। इस आत्मा पर कर्म रूपी दुश्मन लगा हुआ है जो इस आत्मा को भटकाता आया है और तब तक भटकायेगा जब तक इसका संग नहीं छूटेगा।"

इसलिए यदि सुख प्राप्त करना चाहते हो तो आत्मा की शुद्धि का विचार करो। शरीर की शुद्धि के लिए कितना भी प्रयास कर लो, यह शरीर शुद्ध होने वाला नहीं है। इससे निर्मल पदार्थ निकलने वाले नहीं हैं। कर्मों के बन्धनों को हटाने के लिए प्रयास नहीं किया जा

रहा है।

आत्मा को शुद्ध बनाने के लिए उपक्रम नहीं किया जा रहा है; यही सबसे बड़ी अज्ञानता है। यही महान् भूल है। इस अज्ञानता का मूल कारण है मिथ्यात्व। इस मिथ्यात्व के कारण ही जीव निगोद में पहुँचा, जहाँ जीव को स्वयं का भान भी नहीं रहा। मिथ्यात्व के कारण ही मैं कौन हूँ, मेरा स्वरूप क्या है, इन सबको भुलाकर भ्रमित बना हुआ जीव अनन्त दुःखों को सहन कर रहा है। मिथ्यात्व के कारण ही यह जीव नरकों में गया एवं निगोद में गया है। अब अनन्त पुण्यवाणी से मानव भव पा करके बाल तो सँवार रहा है, कपड़े अच्छे पहन रहा है, पर सत्य से अनजान है। ऐसा सोया पड़ा है कि धर्म श्रवण के बाद भी समझ नहीं आ रहा है। एक दिन खाना नहीं मिले तो तड़प उठता है, पर एक महीने तक भी आत्मा को नहीं सम्भाले तो भी खयाल नहीं आता है। जरूरत है कर्मबन्धन तोड़ने की, जिसने इस जीव को अनादिकाल से जकड़ रखा है।

शास्त्र कह रहा है कि मानव को किसी से भय खाने की जरूरत नहीं है। साँप से, बिच्छु से, टांटिया से, सिपाही से, अधिकारी से, किसी से भी डरने की जरूरत नहीं है। अगर तुमको डरना है तो इन कर्मों से डरो। अपनी अज्ञान प्रवृत्तियों से डरो, मोह-माया से डरो। कर्म बन्धन को तोड़ने के लिए, मिथ्यात्व मोह को हटाने के लिए सम्यक् विचारपूर्वक सम्यक् क्रिया करनी होगी, लेकिन आज व्यक्ति ने अनेक विपरीत मान्यताओं को पाल रखा है। इस कारण जो करना चाहिए वह नहीं हो रहा है और जो नहीं करना चाहिए वह हो रहा है। अनादिकाल से भटकाने वाला, दुःख देने वाला मिथ्यात्व है। गुरुदेव कहा करते थे कि हजार वाट का बल्ब हो और उसके ऊपर कालिख पोत दी जाय तो रोशनी नहींवत् होगी। चक्की जोर से चल रही है, परन्तु उसमें धान्य का एक भी दाना नहीं डाला है तो क्या आपके हाथ में पावभर भी आटा आने वाला है? संसारी सुखों के लिए जितने भी प्रयास किये जा रहे हैं वे आत्मगुणों को आवरित करने वाले और दुःख उपजाने वाले हैं। अपने आपको सुख के मार्ग से हटाकर दुःख के मार्ग की ओर मोड़ने वाले हैं।

मिथ्यात्व के वशीभूत हुआ जीव असम्यक् प्रयास से भव-भ्रमण बढ़ा रहा है। इसके कारण ही क्या छोड़ना है और क्या ग्रहण करना है, यह विवेक भी जागृत नहीं हो पा रहा है। इस जीव का लक्ष्य क्या है, इस पर चलने का मार्ग क्या है, यह भी बोध नहीं हो रहा है। इस जीव के अनादि शत्रु मिथ्यात्व के स्वरूप को समझने के लिए इसके पाँच भेद बतलाये हैं।

पहला आभिग्रहिक मिथ्यात्व है, जिसमें व्यक्ति की धारणा रहती है कि मैं मानता हूँ वह ही सच्चा है। तत्त्व की परीक्षा किये बगैर अपने पकड़े हुए रूढ़ पक्ष से चिपके रहना और सत्य पक्ष का विरोध करना आभिग्रहिक मिथ्यात्व है। हमारे पूर्वज भी ऐसा ही करते आये थे, इसलिये हम भी कर रहे हैं। कुल परम्परा के अनुसार भैरू-भवानी, लक्ष्मीपूजन, होली-दहन, पितरों का श्राद्ध आदि अनेक कुरीतियों को सम्यक् मानकर करना इसी मिथ्यात्व के परिणाम हैं। इसमें व्यक्ति अज्ञान के साथ-साथ आग्रहबुद्धि भी रखता है, जिससे उसे हठाग्रही, कदाग्रही, दुराग्रही कहा जा सकता है।

जब तक व्यक्ति विवेक से काम नहीं लेगा तब तक इस मिथ्यात्व में अटक कर मात्र रूढ़ियों को पकड़कर रह जायेगा। महाराज के द्वारा प्रेरणा देने पर भी कहेंगे कि महाराज! हमारे बाप-दादा भी परम्परा से करते आये थे, इसलिये हम इन क्रियाओं को कैसे छोड़ें। क्योंकि वे भी तो समझदार थे। इस प्रकार का तर्क देकर वे मिथ्यात्व से ग्रस्त रहते हैं। लेकिन आप विचार करें कि क्या सभी कार्यों में आप पूर्वजों का अनुसरण करते हैं? आपके पूर्वज ऊँची धोती और कुर्ता पहनते थे, क्या आप पहनते हो? वे खेती-बाड़ी करते थे, सात्त्विक जीवन जीते थे, क्या आपने खेती-बाड़ी के कार्य को ही अपना रखा है? बस यही मिथ्या मान्यता है कि देवी-देवताओं को पूजने आदि में तो पूर्वजों का अनुसरण करेंगे और खाने-पीने, ओढ़ने में मौसम के अनुसार परिवर्तन कर लेंगे। जब इस मिथ्यात्व का जोर कम होता है तब हिताहित बुद्धि से इन मिथ्या क्रियाओं का विरमण

होता है। आचार्य भगवन्त ने पोरवाल क्षेत्र में प्रेरणा करके ऐसी अनेक कुरीतियों से पोरवाल समाज को मुक्त किया।

इसलिये विचार करें कि मेरी आत्मा के लिए क्या हितकारी है और क्या नहीं, किसमें मेरा उत्थान है और किसमें पतन? इस प्रकार की निर्णयबुद्धि से आभिग्रहिक मिथ्यात्वजनित मिथ्याक्रियाओं को छोड़ दें।

मिथ्यात्व का दूसरा प्रकार बताया है अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व। सम्यक् निर्णय करने की शक्ति के अभाव के कारण सबको सही मान लेना कि सभी धर्म समान हैं, ऐसा भाव अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व है। पञ्च महाव्रतधारी जो कि छोटे से छोटे प्राणी की हिंसा का भी त्याग रखते हैं वे साधु हैं और ढोंगी, पाखण्डी भी साधु हैं। हमें तो सबमें अच्छाई ही नज़र आती है। ऐसे सर्वधर्म समभाव की धारणा वाले अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व से ग्रसित होते हैं।

आभिग्रहिक मिथ्यात्वी किसी एक मिथ्या पक्ष का समर्थक बनकर अन्य पक्ष का खण्डन करता है और अनाभिग्रहिक मिथ्यात्वी किसी का भी विरोध नहीं करके सभी पक्षों को समान मानता है। धर्म के क्षेत्र में इस प्रकार की मान्यता रखने वाले भी व्यवहार पक्ष में ऐसा नहीं करते हैं। उन्हें मिठाइयाँ परोसी जाए तो पूरी तरह से उन मिठाइयों के गुण-दोषों की जानकारी करके ही सेवन करते हैं। ग्रामीण महिलाएँ अनपढ़ होते हुए भी गुण-दोष के ज्ञान से ही अलग-अलग प्रकार की तरकारी खरीदती हैं। मकान, दुकान आदि खरीदते हुए भी इन बातों का ध्यान रखते हैं कि कहाँ लेना और कितनी कीमत में लेना है। इस प्रकार का विवेक धार्मिक क्षेत्र में भी रखना होता है। बलि आदि करने वाले एवं मांसाहार-सेवन का निषेध नहीं करने वाले धर्म तथा छोटे-से-छोटे प्राणी की हिंसा में पाप मानने वाले धर्म को एक समान कैसे कहा जा सकता है? नकली नकली ही होता है और असली असली ही होता है, नकली को असली नहीं कह सकते हैं। जाली नोट भले ही धोखे में चल सकता है, लेकिन जानकारी होने पर वह मात्र एक कागज का टुकड़ा है। वैसे ही वीतरागी और सरागी को समान नहीं कहा जा सकता है। हिंसा तो हिंसा ही है उसे तीन काल में भी अहिंसा धर्म का चोला नहीं पहनाया जा सकता। जब तक इस अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व को नहीं छोड़ेंगे तब तक स्वर्ण-पीतल का भेद नहीं हो पायेगा। सबको समान समझने के उदार दृष्टिकोण के चक्कर में आज अनेक मानव इस मिथ्यात्व का आचरण कर रहे हैं, इसलिये हेय, ज्ञेय और उपादेय का विवेक ही इस मिथ्यात्व से निजात दिलाने में सक्षम है।

तीसरा आभिनिवेशिक मिथ्यात्व है। इस मिथ्यात्व में व्यक्ति को सच्चाई समझ में आ जाती है, फिर भी वह कुमान्यता को दुराग्रहवश नहीं छोड़ता है। अहंकार इस मिथ्यात्व का मूल है। इस मिथ्यात्व की उत्पत्ति भी प्राय: सम्यक्त्व के पतन स्वरूप होती है। वायुकाय में जीव हैं और यह जानते हुए कि खुले मुँह बोलने से इन वायुकायिक जीवों की हिंसा होती है फिर भी खुले मुँह बोलता है।

भगवान महावीर ने कहा कि 'समयं गोयम! मा पमायए' अर्थात् क्षण मात्र का भी प्रमाद मत करो, लेकिन इस बात को जानते-मानते हुए भी, सच्चाई समझ में आने के बाद भी प्रमाद का खूब सेवन कर रहा है। कर्मबन्धनों को तोड़ने के बजाय कर्म बाँधने वाला असत् पुरुषार्थ कर रहा है, यह ही अभिनिवेश मिथ्यात्व है। दृष्टान्त दिया जाता है कि गधे की पूँछ पकड़ने से दुलत्ति मिलने वाली है, पूँछ पकड़ने के बाद उस गधे की दुलत्ति भी लग रही है। फिर भी गधे की पूँछ को छोड़ नहीं रहे हैं। इस तरह जानते हैं कि इस शरीर की कीमत आत्मा के पीछे है, आत्मा के बिना यह शरीर शव मात्र है। लेकिन फिर भी आत्मा की कोई कीमत नहीं मानकर दिन-रात शरीर को सम्भाल रहा है। धार्मिकजन भी घड़ी-दो घड़ी इस आत्मा के लिए कार्य करते हैं और शेष पूरे समय इस शरीर के लिए ही भाग-दौड़ कर रहे हैं। गाड़ी में 50 लीटर पेट्रोल डाले और ड्राइवर साहब को

भूखा मारे तो गाड़ी चलेगी क्या? मन्दिर को बाहर से सजाया जा रहा है जबकि अन्तर के पट बन्द कर रखे हैं, इसी तरह शरीर को सम्भाल रहे हैं जबकि आत्मा की कोई सम्भाल नहीं है। पर भाई! ध्यान रखना आत्मा का ध्यान नहीं रखने पर यह नरक-निगोद में पटक देगी। ड्राइवर को भूखा रखा तो कब गाड़ी किधर चली जाये, पता नहीं चलेगा। आत्मा की खुराक व्रतपालन, स्वाध्याय, अप्रमत्त भाव आदि हैं। इस अभिनिवेश मिथ्यात्व के कारण प्रतिष्ठित और बहुजन मान्य व्यक्ति में भी भूल सुधारने के भाव नहीं आते हैं। वह अपनी भूल को जानते हुए भी अहंकारवश स्वीकार करने से कतराता है। ऐसे झूठे अहंकार को जब तक जीव नहीं छोड़ेगा तब तक मुक्ति पथ का पथिक कैसे बनेगा?

जिनेश्वर भगवान की वाणी में सन्देह करना सांशयिक नामक चतुर्थ मिथ्यात्व है। करणी का फल मिलेगा या नहीं, धर्मास्तिकाय आदि द्रव्यों का अस्तित्व है या नहीं, इस प्रकार का संशय करना ही सांशयिक मिथ्यात्व है। अनेक लोग इस मिथ्यात्व के कारण सामायिक-स्वाध्याय, माला फेरने, जाप करने आदि की क्रियाओं के फल में शंकित रहते हैं। इतने दिन हो गये सामायिक करते-करते, माला फेरते-फेरते, फिर भी दु:खों का आगमन होता जा रहा है। क्या पता इन क्रियाओं से मेरे कर्म कट भी रहे हैं या नहीं। इस प्रकार का संशय सम्यक् क्रियाओं को छुड़वा देता है। लेकिन ध्यान रखना मिर्ची खाओगे तो मुँह जलेगा ही, मिष्ठान्न खाओगे तो मुँह मीठा होगा ही। वैसे ही धर्म क्रियाओं का फल निश्चित रूप से मिलेगा, लेकिन अनादिकाल से बन्धे गाढ़ कर्मों को काटने के लिए पुरुषार्थ भी जबरदस्त करना होगा। अरे! आपने सामायिक की है तो निश्चित फल मिलेगा। दो कोस जाना है और दो क़दम चले हो तो दो कोस में से दो क़दम तो पूरे हुए ही हैं ना। आप मण भर आटे में पावभर पानी डालें और चाहें कि हलवा बन जाये, यह कभी सम्भव नहीं है। जितनी मात्रा में कर्म लगे हुए हैं उन्हें काटने के लिए उतना ही पुरुषार्थ करना होगा। किया हुआ पुरुषार्थ कभी व्यर्थ नहीं जाता है। इसलिये सांशयिक मिथ्यात्व को छोड़कर जिनवचनों में दृढ़ श्रद्धावान बनने का लक्ष्य रखें।

यथार्थ ज्ञान के अभाव में मिथ्याक्रियाएँ करना अनाभोग नामक पाँचवाँ मिथ्यात्व है। अनन्त जीव धर्म के अधिकारी ही नहीं हैं, वे अभवी जीव कहलाते हैं। वे तो इस मिथ्यात्व से ग्रसित हैं ही, किन्तु अनेक भवी जीव भी अज्ञान के कारण मिथ्याक्रियाओं का आलम्बन लिये हुए हैं। विचार शून्यता वाले एकेन्द्रिय आदि जीवों को यह अनाभोग मिथ्यात्व ही होता है। जिस प्रकार विवेकहीन मानव अपना अच्छा-बुरा नहीं सोच सकता है उसी प्रकार अनाभोग मिथ्यात्वी भी आत्महित के विषय में अच्छा-बुरा नहीं सोच सकता है।

इस प्रकार इन पाँच प्रकार के मिथ्यात्वों में से किसी न किसी मिथ्यात्व के कारण जीव संसार में कष्ट पा रहा है और परिभ्रमण कर रहा है। कर्मबन्ध के मुख्य कारण इस मिथ्यात्व को अलग करने का प्रयास करेंगे तब ही सम्यक् बोध प्राप्त होगा और इस जीव के क़दम आत्मकल्याण के पथ पर बढ़ेंगे। शास्त्र कहता है कि जिस दिन यह जान लिया कि मैं आत्मा हूँ, अनन्त ज्ञान-दर्शन का धारक हूँ उस दिन से सम्यक्त्व के प्रकाश में सभी क्रियाएँ सम्यक् हो जायेंगी। यह मोक्ष का मार्ग सम्यक्त्व सहित ही तय किया जाता है। अगर आपको मालूम हो जाए कि यह रास्ता बिना काँटों का और दूसरा रास्ता उपद्रवयुक्त है तो आप बिना काँटों के मार्ग को ही अपनाओगे। सम्यक्त्व के साथ की गई सभी क्रियाएँ काँटों से रहित मार्ग को तय करके मुक्ति-प्राप्ति में सहायक होती हैं। जो मिथ्यात्व के भेदों को जानकर उन्हें छोड़कर सम्यक्त्व को प्राप्त कर क्रियाओं को सम्यक् रूप से करके कर्मों को काटेंगे तो सुख-शान्ति प्राप्त करेंगे। सम्यक्त्व के प्राप्त हो जाने पर आपकी दृष्टि सम्यक् होगी, आपका चिन्तन सम्यक् होगा, आपकी क्रियाएँ सम्यक् होगी और आपका व्यवहार भी सम्यक् हो जायेगा।

■

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 16
ISSN 2249-2011

प्रवचन

वैराग्य का रंग श्रावक को दृढ़धर्मी बनाता है

भावी आचार्य श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के द्वारा घोषित भावी आचार्य, महान् अध्यवसायी, सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. द्वारा 22 जुलाई, 2022 को जैन स्कूल, महामन्दिर-जोधपुर में फरमाए गए इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

बन्धुओं!

जिसे जिनवचनों पर अनुरक्ति हो जाती है, उसे संसार से विरक्ति हो जाती है। उसे संसार प्यारा नहीं, अपितु खारा लगता है। वह संसार से मुक्त होने के लिए प्रयासरत रहता है। उसके अन्तर मन में भावों का ऐसा प्रादुर्भाव होता है कि वह संसार में भले ही रहे, किन्तु संसार उसके मन में नहीं रहता। जिस प्रकार समुद्र के पानी में नाव रहती है तो वह पानी के ऊपर आराम से तैरती रहती है, लेकिन यदि नाव में पानी भर जाए तो वह नाव डूब जाती है। उसी प्रकार विरक्ति आने पर वह जीव संसार की सभी नाशवान वस्तुओं को पराया मानकर उनके बीच रहता हुआ भी उनमें रचता-पचता नहीं है।

संसार में बन्धु-बाँधवजनों को वह बन्धन के रूप में मानता है। वह माता-पिता, पति-पत्नी और बच्चों तक के साथ रहने को कैदखाने में रहने के तुल्य समझता है। जिसके दिलो-दिमाग और मन-मस्तिष्क में जिनवचनों के प्रति श्रद्धा जग जाती है, वह अपना जीवन संसार में रहते हुए भी कर्त्तव्य भाव से जीता है। सभी सम्बन्धों को मात्र इस जीवन का संयोग मानकर कर्त्तव्य भाव से निभाता है, परन्तु उनके प्रति आसक्ति के भाव नहीं रखता है।

एक होती है जन्म देने वाली माँ और एक होती है पालन-पोषण करने वाली धाय माँ। जो धाय माँ है, वह बच्चे को खिलाती है, स्नान कराती है, लालन-पालन करती है, सभी तरह से उसका ध्यान रखती है, लेकिन वह मानती है कि यह बच्चा मेरा नहीं है, वह मात्र कर्त्तव्य भाव से उसका पालन करती है। कहा भी है-

सम्यग्दृष्टि जीवड़ा, करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अन्तर्गत न्यारो रहे, ज्यूँ धाय खिलाये बाल।।

एक ग्वाला पूरे गाँव की गायों को चराता है, पर वह किसी गाय को अपनी नहीं मानता। ऐसे ही सम्यग्दृष्टि मनुष्य घर-परिवार में तो रहता है, लेकिन घर-परिवार उसके मन में नहीं बसता है। उसका चिन्तन मात्र इतना ही होता है कि व्यवहार दृष्टि में ही सब अपने हैं। निश्चय दृष्टि में तो मात्र एक आत्मा ही मेरी है। इस विचारधारा को अपनाने वाला व्यक्ति ही संसार में सुखी रह सकता है। वह प्रत्येक परिस्थिति में 'जो हुआ, अच्छा हुआ' के भाव रखता है। वह न तो घर को मेरा कहता है, न घर में रहने वालों को अपना मानता है। कई विरले लोग ऐसे भी होते हैं जो घर को न अपना कहते हैं और न ही घर में रहने वालों को अपना मानते हैं। कई लोग घर में रहकर भी वैराग्यमय जीवन जीते हैं, वे परिस्थितिवश घर से निकल नहीं पाते हैं। ऐसे ही एक सेठजी थे। उन्हें वैराग्यभाव जागृत हो गया। वैराग्य का रंग लगने के बाद घर में रहना बहुत कठिन कार्य होता है।

अभी आचार्य भगवन्त जोधपुर पधार गये हैं, आप नित्य प्रति जिनवाणी श्रवण कर रहे हैं, आपसे एक बात पूछूँ, क्या आपको वैराग्य आया? आचार्य भगवन्त का पदार्पण अब महामन्दिर में भी हो गया है। लेकिन उनके वचनों का असर हमारे मन-मन्दिर में होगा तब ही घर छूटेगा। आप सभी सुज्ञ और विज्ञ हैं, अपना हिताहित जानने में समर्थ हैं। अत: आपको गुरुवचनों पर दृढ़ आस्था जागृत करनी है।

हाँ, तो मैं एक सेठजी की बात कह रहा था, वे घर

में रहते हुए भी घर से दूर रहते थे। उनका हृदय वैराग्य से रञ्जित था। उनकी धारणा पक्की थी कि जो आया है वह एक न एक दिन जरूर जायेगा। इस धारणा को स्वीकार करके वे जाने से पहले परभव के लिए धर्म रूपी करणी करके पाथेय साथ में ले जाना चाहते थे।

जिनशासन की व्यवस्था है, दीक्षा लेने हेतु परिवार की आज्ञा आवश्यक है। वे घर की जिम्मेदारी का कर्त्तव्यपूर्वक निर्वहन कर रहे थे और चाहते थे कि घर वाले आज्ञा दे दें तो मैं दीक्षा ले लूँ। सेठजी के मन में संयम स्वीकार करने की ललक थी।

आप संसार में रहते हैं, आप क्या सोचते हैं, क्या आपके मन में भी संसार से निकलने की ऐसी ललक है, संयम ग्रहण करने की उत्कण्ठा है। एक चींटी पानी में गिर जाय तो वह परेशानी महसूस करती है। वह जैसे-तैसे पानी से बाहर निकलना चाहती है। क्या आपको संसार में रहते हुए तकलीफ़ नहीं होती है? क्या आप संसार से मुक्त नहीं होना चाहते हो?

सेठजी के घर में उनकी पत्नी और वृद्ध माँ थी। एक दिन ऐसा हुआ कि पत्नी घर पर नहीं थी। वह अपनी सासूजी से कहकर गई थी कि जब सेठजी घर पर आयें तो उन्हें भोजन परोस देना। सेठजी दुकान से घर पर भोजन करने आये। माँ की नेत्र ज्योति मन्द थी, लेकिन अपने लाल को घर आया देख, वह उसे खाना परोसने लगी। एक चूल्हे पर खीच था और दूसरे पर गाय-भैंस का बाँटा। प्रसङ्ग गाँव का है इसलिये गाय-भैंस आदि पशुओं के लिए प्रतिदिन बाँटा भी बनाया जाता था। नज़र कमजोर होने से माँ खीच के स्थान पर बाँटे को थाली में परोसकर बेटे के लिए ले आई।

सेठजी के वैराग्य की आज परीक्षा थी, कई परिवारजन तो वैराग्य की परीक्षा लेकर अनुमति देते हैं, लेकिन सेठजी की तो आज सहज में ही परीक्षा हो गई। सेठजी ने समत्व-भाव से जो आया वह खा लिया, उनके मन में एक ही विचार था कि आज मुझे कर्म काटने का सुअवसर मिला है। ज्ञानी और अज्ञानी में यही अन्तर है कि ज्ञानी ऐसे प्रसंगों को कर्म-निर्जरा में सहयोगी मानता है और अज्ञानी निमित्त को दोष देकर नये कर्मों का बंध कर लेता है। सेठजी ने बाँटा खाया और दुकान चले गये। कुछ समय पश्चात् पत्नी घर पर आई और माँजी से पूछा-''क्या वे भोजन करके गये हैं?'' माँजी ने कहा-''मैंने परोस दिया और बेटा भोजन करके दुकान भी चला गया।''

पत्नी ने देखा खीच तो ज्यों का त्यों पड़ा है, उसमें से एक भी चम्मच कम नहीं हुआ है। पत्नी विचक्षण थी, उसने बाँटा देखा तो उसे मालूम पड़ा कि माँजी ने गलती से बाँटा परोस दिया और वे चुपचाप बाँटा खाकर दुकान पर चले गये हैं। पत्नी ने माँजी को सारी बात बता दी।

माँजी को अपनी भूल का पता लगा, उन्हें लगा मेरा बेटा वैराग्य में रम गया है, मेरे द्वारा गलती से थाली में परोसे बाँटे को भी वह सहज भाव से खाकर चला गया। अब वह घर में रहने वाला नहीं है। माँ और पत्नी ने सेठजी को सहर्ष दीक्षा की अनुमति प्रदान कर दी। आज कई हैं जो कहते हैं कि हम दीक्षित होना चाहते हैं, लेकिन घरवाले आज्ञा नहीं देते। ऐसा जो भी कहते हैं, उनका मन पक्का नहीं बना है, वरना आपका व्यवहार और आपकी चर्या देखकर ही आपको स्वत: आज्ञा मिल जायेगी। आज्ञा घर वाले कभी देते नहीं है, आज्ञा तो विरक्त अपने वैराग्यपूरित जीवन से अपने आप प्राप्त करता है। जिसे जिनवचनों पर, सद्गुरु पर श्रद्धा हो जाती है, वह रोकने से रुकता नहीं, उसका मार्ग स्वत: ही प्रशस्त हो जाता है।

जिनवचनों पर दृढ़ श्रद्धा का एक सत्य उदाहरण आपके सामने रखना चाहूँगा-सिंहपोल, जोधपुर के एक श्रावकजी थे, वे स्थानक में आकर रोज पाँच सामायिक करते थे। ऐसे दृढ़धर्मी और साधना प्रिय श्रावक थे। रोज आने वाला श्रावक यदि एक दिन नहीं आये तो सन्त भी पूछ लेते हैं कि क्या बात हो गई, आज श्रावकजी क्यों नहीं आए? क्योंकि सन्त भी जानते हैं कि बिना विशेष कारण के श्रावकजी सामायिक करना नहीं छोड़ सकते हैं।

सिंहपोल के श्रावकजी भी एक दिन नहीं आये। सन्तों ने विचार किया कि आज न जाने कौन-सा विशेष कार्य आ गया जो श्रावकजी स्थानक नहीं आये। समय व्यतीत होता गया, कुछ घण्टों के पश्चात् श्रावकजी ने धर्मस्थान में प्रवेश किया, नित्य की भाँति पाँच सामायिक की आराधना की, जब सामायिक साधना पूर्ण कर सन्तों को वन्दना करके गये तब सन्तों ने जिज्ञासा रखी, भाई आज देर कैसे हो गई? श्रावकजी ने कहा-'' बाबजी! एक मेहमान आया था, उसे दूर जाना था, इसलिए पहुँचा कर आया हूँ। मेहमान को पहुँचाने के व्यवहार को निभाने में समय निकल गया, इसलिये देरी से सामायिक करने आया हूँ।'' सन्तों ने कहा- ''श्रावकजी आपकी बात का रहस्य हम समझ नहीं पा रहे हैं।'' पास में बैठे दूसरे श्रावकजी ने कहा-''भगवन्! श्रावकजी का इकलौता बेटा था, आज सुबह वह छोटी अवस्था में काल धर्म को प्राप्त हो गया है, उसका दाहसंस्कार करके यहाँ सामायिक करने आये हैं, इसलिए आज देर हो गई है।'' यह सुनकर सन्त भी आश्चर्यचकित रह गये और कहने लगे कि दृढ़धर्मी श्रावक वास्तव में ऐसा ही होता है, जो घर-परिवार के सभी कार्यों को मात्र व्यवहार समझकर निभाता है और स्वयं में अपने को एकत्व भाव में रखता है। प्रभु वचनों में अनुरक्ति रखने वाला साधक ही ऐसे भावों से युक्त हो सकता है। ऐसे दृढ़धर्मी, प्रियधर्मी साधकों के लिए ही उत्तराध्ययनसूत्र के 36वें अध्ययन की 260वीं गाथा में कहा गया है-

जिणवयणे अणुरत्ता, जिणवयणं जे करेंति भावेण।
अमला असंकिलिट्ठा, ते होंति परित्तसंसारी।।

अर्थात् जो जिनवचन में अनुरक्त रहते हैं, जिनवचन का भावपूर्वक आचरण करते हैं, वे निर्मल और असंक्लिष्ट होकर परिमित संसारी हो जाते हैं।

हर घर में किसी न किसी की मृत्यु होती है, मृत्यु होने पर पूरा परिवार गमगीन होकर घर पर ही रहता है। उस समय घर के सदस्य किसी भी प्रकार की धर्मसाधना नहीं करते हैं। व्यक्ति की मानसिकता रहती है कि अभी शोक का समय है इसलिये धर्मकार्य नहीं करना है। घर के बड़े बुजुर्ग के कालधर्म को प्राप्त होने पर भी 12 दिन का शोक मनाकर धर्म क्रियाओं में अन्तराय रखते हैं। ऐसा क्यों होता है? दृढ़धर्मी श्रावक तो दुःख और सुख दोनों ही प्रसङ्गों पर धर्मक्रियाओं को नहीं छोड़ते हैं। उन्हें धार्मिक साधना की प्राथमिकता रहती है। लेकिन जो सामान्य श्रेणि के श्रावकगण हैं वे अन्य किसी भी कार्य को गौण नहीं करते, लेकिन दुःख के समय में धर्म को सबसे पहले छोड़ते हैं। अरे भाई! धर्म तो दुःख के समय में सम्बल प्रदान करने वाला है, दुःख-मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करने वाला है।

धर्म ही दुःख में सहारा होता है, साथी होता है। चन्दनबाला का दुःख में धर्म का सहारा लेना, उसे भगवान महावीर की प्रथम साध्वी बना बैठा। सुदर्शन श्रमणोपासक के लिए मारणान्तिक कष्ट में धर्म का सहारा लेना मृत्यु से छुटकारा दिलाने वाला बना। दुःख में आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान एवं पापकर्मों को छोड़कर धर्म कार्य करने वाला श्रावक ही दृढ़धर्मी, प्रियधर्मी और जिन वचनों का अनुरक्त माना जाता है।

सिंहपोल के श्रावकजी आज के श्रावकों के लिए प्रेरक पात्र हैं। यह कोई काल्पनिक प्रसङ्ग नहीं बताया गया है, बल्कि ऐसे श्रावक अभी कुछ वर्षों पहले ही हुए हैं। शास्त्रों में भी तुंगियापुरी के श्रावकों का वर्णन उनकी धर्मनिष्ठता और जिनवचनों पर अनुरक्तता प्रदर्शित करता है। संसार से विरक्ति से बात प्रारम्भ की थी। विरक्ति आने पर ही जिनशासन के श्रेष्ठ श्रावक बन पाते हैं। श्रावक भोगों से विरक्त और जिनवचनों में अनुरक्त होकर घर-परिवार के कर्त्तव्यों का निर्वहन करता है, परन्तु उसका लक्ष्य साधुत्व को प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करना ही होता है। वैराग्य का रंग श्रावक को दृढ़धर्मी बनाता है। दृढ़धर्मी श्रावक ही प्रतिकूल परिस्थितियों में समता रखकर जिनशासन का प्रेरक व्यक्तित्व बनता है। जो दृढ़धर्मी होगा वही सिद्ध-बुद्ध-मुक्त बन सकेगा। ■

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 19
ISSN 2249-2011

प्रवचन

मुक्ति-प्राप्ति में 'पञ्चकारण समवाय' की भूमिका

मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा.

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा-3 के सान्निध्य में 25 सितम्बर, 2022 को 'पञ्चकारण समवाय' विषय पर ओसवाली मौहल्ला, मदनगंज-किशनगढ़ में आयोजित संगोष्ठी में श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा फरमाये गये प्रवचन का संकलन श्री त्रिलोकचन्द जैन, जयपुर ने किया है। -सम्पादक

संसार का प्रत्येक जीव चाहे वह एकेन्द्रिय हो या पञ्चेन्द्रिय, चाहे मन वाला हो या बिना मन वाला, चाहे संसारी हो या संन्यासी, सबकी एक ही अभीप्सा है, अन्तर्मन की एक ही आकांक्षा है कि सदा सुख में रहूँ। यह हर जीव की अन्तर की माँग है। ध्यान रहे पाँच चीजें एक समान होती हैं-1. सत्य, 2. जीव का स्वभाव, 3. जीव का लक्ष्य, 4. जीव की माँग और 5. भगवान का स्वरूप। इन पाँच बातों पर आप गौर करेंगे तो पायेंगे कि जीव की अन्तरंग माँग एक स्वाभाविक दशा है, वह ही तो लक्ष्य है तथा लक्ष्य और सत्य में कोई अन्तर नहीं है। जिस दिन यह जीव अन्तरंग माँग से परिपूर्ण हो जाता है वहीं भगवत् स्वरूप प्रकट हो जाता है, तो कहना होगा कि ये पाँचों ही बातें एक-दूसरे में समाहित हैं, एक हैं, समान हैं। हर जीव की आन्तरिक माँग है सुख और इस सुख को प्राप्त करने के लिए सब जीव अपने-अपने स्तर पर अपनी-अपनी समझ के अनुसार प्रयत्न और प्रयास करते नज़र आते हैं। मगर देखा जाता है कि इतने साधन-सुविधा जुटा करके भी संसारी व्यक्ति सुख के नाम पर न तो सन्तुष्ट है और न परिपूर्ण है। इसका अर्थ यह हुआ कि जिस सुख के नाम पर संसारी जीव रात-दिन एक कर रहा है वह सुख, सुख नहीं केवल एक छलावा है, धोखा है, अन्तहीन दौड़ है। इसीलिए जिनवाणी के माध्यम से समझना होगा कि सच्चा सुख किसमें, कहाँ और क्या है? सबसे पहले हम समझेंगे सुख क्या है?

अधिकांश लोगों ने पदार्थों में, साधन-सुविधाओं में, पुद्गलों में ही सुख समझ रखा है, लेकिन सच्चाई यह है कि यह सुख नहीं, बल्कि सुख का आभास मात्र है। बच्चा स्कूल से आया, स्कूल के बेग को एक तरफ रखकर धूप में खड़ा हो गया। माँ ने पूछा-''अरे बेटा! धूप में क्यों खड़ा है?'' बच्चे ने उत्तर देते हुए कहा-''माँ! मैं पसीना सुखा रहा हूँ।'' आप और हम जानते हैं कि बच्चे की यह चेष्टा हास्यास्पद है, क्योंकि धूप में पसीना तीन काल में भी नहीं सूख सकता। ठीक इसी तरह पुद्गलों से तीन काल में भी सुख नहीं मिल सकता। यदि हम सच्चे सुख और सांसारिक सुख का तुलनात्मक दृष्टि से विचार करें तो पायेंगे कि सच्चा सुख शुद्ध है, क्योंकि इसमें दुःख का मिश्रण नहीं है। शाश्वत है, क्योंकि इसकी कोई अन्तिम तिथि नहीं है। स्वाधीन है, क्योंकि यह किसी भी व्यक्ति और परिस्थिति के अधीन नहीं है। स्वाभाविक है, क्योंकि यह बाहर से प्राप्त नहीं होता है। अतुलनीय है, क्योंकि इसकी तुलना किसी भी सांसारिक सुख से नहीं की जा सकती है। जबकि सांसारिक सुख सच्चे सुख के विपरीत दुःख मिश्रित, अशाश्वत, पराधीन, अतृप्तिदायक एवं परिवर्तनशील है।

जिस सुख की हमने अभी तुलनात्मक चर्चा की, तो निष्कर्ष में यह ही समझ में आया कि इस सुख के एक मात्र अधिकारी कर्ममुक्त आत्मा सिद्ध भगवन्त हैं। एक बात निश्चित है हम सब स्थायी सुख के प्रबल इच्छुक हैं, क्योंकि यह हमारी अन्तरङ्ग माँग है तो हमें सत्य स्वरूप पर विश्वास जगाते हुए तदनुकूल लक्ष्य निर्धारित कर तथारूप पुरुषार्थ करना होगा। जब तक जीवात्मा कर्म से मुक्त नहीं होता तब तक जीव सुख के नाम पर

भ्रमित ही रहेगा, क्योंकि कर्म के प्रभाव से राग-द्वेष और राग-द्वेष के प्रभाव से कर्मबन्ध, यह चक्र चलता रहेगा। इसी चक्र के कारण जीव छल-प्रपञ्च, कषाय, बेईमानी, भोग बुद्धि, पापबुद्धि आदि से ग्रसित रहता है। कुल मिलाकर ये जीवात्मा कर्म के अधीन होकर और गाढ़े कर्मों का बन्ध करके कर्म की सत्ता के सामने जड़ तुल्य अवस्था को प्राप्त कर लेता है अर्थात् अनन्त काल तक के लिए निगोद अवस्था को प्राप्त कर लेता है। वहाँ उसकी बड़ी दयनीय दुर्दशा बनी रहती है। एक नाड़ी के खटके में 17 से अधिक बार जन्म-मरण के लिए मजबूर रहना पड़ता है। कभी अनन्तकाल बाद सहनशीलता के बल पर जीव वहाँ से निकलता है, लेकिन वहाँ से ऊपर उठने का कोई ज्ञान-दर्शन-चारित्र जैसा सम्बल नहीं होता। यही कारण है कि अज्ञान और मिथ्यात्व के प्रभाव से फिर से निगोद की अवस्था को प्राप्त कर लेता है, फिर कभी वापस वहाँ से निकलता है फिर नीचे गिर जाता है, ऐसा अनन्त-अनन्त बार इस जीव के साथ होता रहा है। कभी अनन्तकाल बाद जीव को ऊपर उठने का, अनुकूल वातावरण पाने का मौका मिलता, पर कोई जरूरी नहीं कि मुक्ति को प्राप्त कर ही लेगा। कहते हैं जब तक पाँच कारण समवाय का संयोग नहीं मिलता तब तक जीव मुक्त होने में सफल नहीं हो सकता।

हम बात कर रहे हैं जीवात्मा की, वरना अजीव पदार्थों में जो भी परिणमन होता है उनमें तीन ही समवाय की भूमिका होती है काल, स्वभाव और नियति, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य चाहे वह जीव हो या अजीव, उसका स्वाभाविक परिणमन तो होता ही है तथा काल समवाय भी सभी द्रव्यों पर प्रवर्तमान होता है जैसे परमाणु असंख्यात काल बाद पुनः परमाणु बनकर अपनी स्वभाव-दशा को प्राप्त करता ही है अर्थात् पुनः परमाणु बनता ही है। अजीव द्रव्य का भी कभी नियत परिणमन होता है, वह नियति है। यह ध्यातव्य है कि षट्द्रव्यों में चार द्रव्य स्वाभाविक परिणमन ही करते हैं इनमें वैभाविक परिणमन का अवकाश ही नहीं है, पुद्गल और जीव स्वाभाविक एवं वैभाविक दोनों परिणमन करते हैं। हाँ तो बात चल रही थी जीवात्मा की मुक्ति को लेकर, उसकी शुद्ध अवस्था को लेकर, उसके स्वाभाविक पर्यायों को लेकर उसमें पाँचों समवाय का मिलना जरूरी है। तब ही जाकर जीव मुक्त होने में सफल हो सकता है।

सबसे पहले हम यह समझेंगे कि समवाय किसको कहते हैं? जैनदर्शन में इसकी क्या महत्ता है? और यह महत्ता कब से है? पाँच समवाय क्यों जरूरी हैं? यद्यपि आगम में कहीं भी एक जगह एक साथ पाँच कारण समवाय का कथन नहीं हुआ है। इसका अर्थ यह नहीं है कि यह बात जैनदर्शन के विरुद्ध है। हमें तो यह देखना है कि पाँच कारण समवाय आगम से बाधित तो नहीं हैं। हाँ, आगम में कार्य की सिद्धि में एक ही कारण को मान्य करने वालों का खण्डन कर उसे मिथ्यात्व करार दिया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रत्यक्ष में भले ही एक जगह पाँच कारण समवाय का कथन नहीं हुआ, पर एक को मान्य करने वाले को भी स्वीकार नहीं किया है। जैसा कि उपासकदशाङ्गसूत्र में शकडाल श्रावक के साथ संवाद में प्रभु महावीर ने एकान्त नियतिवाद का खण्डन किया। इस चर्चा से निष्कर्ष निकलता है कि आगमकार पञ्च कारण के समन्वय को ही मान्यता देते हैं।

समवाय शब्द का अनेक अर्थों में प्रयोग हुआ है, समवायाङ्गसूत्र में समवाय का अर्थ समूह रूप में किया है। तीन प्रकार के सम्बन्ध में भी इसका अर्थ नित्य सम्बन्ध के रूप में मिलता है। कार्य की सिद्धि में होने वाले कारणों के समूह को यहाँ समवाय कहा है। वे पाँच कारण हैं-1. काल, 2. स्वभाव, 3. नियति, 4. पूर्वकृत कर्म और 5. पुरुषार्थ। किसी भी कार्य की सिद्धि में कारण होना जरूरी है। जैनसिद्धान्त पाँच कारणों के समन्वय (समवाय) से ही कार्य सिद्ध होना मानता है। किसी न किसी एक कारण को भी मान्य कर अनेक दार्शनिकों ने अलग-अलग मत और पंथ स्थापित किये हैं, उस परिस्थिति में सर्वप्रथम सिद्धसेन दिवाकर ने अपने सन्मति तर्क ग्रन्थ में जैनसिद्धान्त का मत प्रकट करते हुए कहा है-

कालो सहावो नियई, पुव्वकयं पुरिसे कारणेगंता।
मिच्छत्तं ते चेव उ, समासओ होंति सम्मत्तं।।

अर्थात् काल, स्वभाव, नियति, पूर्वकर्म और पुरुषार्थ की एकान्त कारणता मिथ्यात्व है और इनकी सामूहिक कारणता सम्यक्त्व है। हम देखते हैं समग्र जागतिक तथ्यों, वैयक्तिक विभिन्नताओं तथा व्यक्ति के सुख-दुःख एवं क्रिया-कलापों का कारण कालवादी एक मात्र काल को ही मानते हैं। स्वभाववादी कहते हैं कि किसी की कोई भूमिका नहीं है जो कुछ भी होता है सब स्वभाव से होता है। नियतिवादी सब कुछ नियत मानता है तो कर्मवादी सबको नकारते हुए कर्म को ही प्रभावी मानते हैं और पुरुषार्थवादी अपनी ही मान्यता को प्रधानता देते हुए शेष को गौण करते हैं। मगर यहाँ जैनदर्शन का कथन है कि किसी भी कार्य में पाँचों कारण उपस्थित होते हैं, भले ही एक की प्रमुखता रही होगी। गौण रूप से अन्य चार कारणों की उपस्थिति भी है ही। जैसे किसी ने आम प्राप्त करने के लिए अनेक आम के बीज बोकर आम का बगीचा तैयार किया, यह उसका पुरुषार्थ था, मगर आम के बीज से आम ही उत्पन्न होता है, न कि अनार, अंगूर, तो आम के बीज में आम पैदा करने का स्वभाव कारण है। अब इसमें देखना है कि किसान कितना ही पुरुषार्थ कर ले, लेकिन समय आने पर ही आम का फल प्राप्त होता है, इस समय के परिपाक को काल कारण कहते हैं। समय भी है, पुरुषार्थ भी है, स्वभाव भी है, मगर कई फल पके और कई फल नहीं पके। जो पके वे उस फल की नियति है, इसलिए नियति कारण की भी भूमिका है। साथ ही किसी बीज में फल देने की शक्ति है यह उस फल का पूर्वकृत कर्म है। इस तरह हम देखते हैं कि एक आम तभी उत्पन्न हो पाता है जब पाँचों कारण की उपस्थिति हो। यदि एक को भी नकारते हैं तो यह आम प्राप्त करने का कार्य सफल नहीं हो सकता है। हाँ, प्रमुखता किसी एक की नज़र आ सकती है, मगर कार्य सिद्धि में जितने भी कारण हैं उनका पाँच समवाय में समावेश हो जाता है।

हम बात कर रहे थे जीव-मुक्ति को लेकर, सांसारिक जीवात्मा पग-पग पर बन्धन में बँधा हुआ है, परिस्थितियों का दास है, इन्द्रियों का गुलाम है, साधन-सुविधाओं का इच्छुक है, कर्म के बन्धन में बँधा हुआ है। यह जीव भले ही अपने आपको स्वतन्त्र मानता होगा, मगर ज्ञान दृष्टि से विचार करें तो पराधीन है, परतन्त्र है। जैसे समझने के लिए कई व्यक्ति चाहकर भी तपस्या नहीं करते, क्योंकि वे चाय के गुलाम होते हैं। देखा जाता है कि कई सारे लोग खाये बगैर रह सकते हैं, मगर स्नान के बिना नहीं रह सकते। यह तो एक-दो बात हुई, मगर परिस्थिति, साधन-सुविधाओं का आदमी गुलाम बना हुआ है। सच्ची स्वतन्त्रता वहीं है जहाँ न परिस्थितियों की गुलामी है, न ही वस्तु-पदार्थ की। जहाँ न जन्म है, न जरा है, न मरण है, न शोक है, जहाँ केवल सादि-अनन्त स्वाधीन दशा है। जैनदर्शन उसे सिद्धत्व दशा कहता है। उस सिद्धत्व दशा को हर जीव उपलब्ध नहीं हो सकता, सिद्धत्व की उपलब्धि उन्हीं जीवों को होती है जहाँ पाँच कारण समवाय मिलते हैं। यद्यपि कर्ममुक्ति की स्थिति की प्राप्ति में अनेकानेक योग्यताएँ होना जरूरी हैं, जैसे-उत्तम संहनन, मनुष्य भव, सन्नी पञ्चेन्द्रिय आदि, मगर अनेक प्रकार के मध्यवर्ती कारणों को पञ्च कारण समवाय में समाविष्ट किया जा सकता है।

जीवात्मा के मुक्त होने में सिर्फ एक-दो ही कारण नहीं होते पाँचों कारणों का होना जरूरी है। कर्ममुक्ति में पाँचों कारण समवाय की अपनी भूमिका है। स्वभाव समवाय अनादि से जुड़ा हुआ है। भव्यत्व के रूप में यदि भव्यत्व का स्वभाव जीव में है तब ही जीव-मुक्त हो सकता है। भव्यत्व स्वभाव होने के बावजूद भी यदि जीव कृष्णपक्षी अथवा अव्यवहार राशि में है तो उसकी मुक्ति-प्राप्ति में भव्यत्व स्वभाव कारण भी फलित नहीं हो सकता। इसीलिए भव्यत्व स्वभाव के साथ-साथ जीव का शुक्लपक्षी होना भी जरूरी है। शुक्लपक्षी और कृष्णपक्षी कालगत विशेषता है, जब जीव चरमावर्त्त में आता है तब वह शुक्लपक्षी कहलाता है अर्थात् जब उस जीव का संसार-काल अर्द्ध पुद्गल परावर्तन शेष रहता है तब से जीव की पहचान शुक्लपक्षी के रूप में होती है। इसीलिए मुक्ति-प्राप्ति में काल की भूमिका निर्विवाद है।

सभी शुक्लपक्षी जीव नियम से मुक्ति प्राप्त करते हैं और जो सभी पर घटित होता है वह नियति कारण समवाय है। शुक्लपक्षी का मुक्ति प्राप्त करना नियत है, इसीलिए नियति की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण है। मुक्ति का तात्पर्य कर्मों से मुक्त होना है। कर्म का प्रभाव जब तक अधिक रहता है तब तक लक्ष्य से दूरी बनी रहती है। कर्मों का क्षयोपशम मुक्ति को नजदीक तथा कर्मों का क्षय मुक्ति प्राप्त कराता है, परन्तु यह क्षयोपशम और क्षय जीव पुरुषार्थ से ही करता है। आगम में अनेक जगह अलग-अलग प्रकार के पुरुषार्थ के प्रभाव से जीव के मुक्त होने का उल्लेख मिलता है।

अन्त में इस परिचर्चा के बाद पाँच कारण समवाय में प्रेरणास्वरूप जीवन-निर्माण की सीख कहाँ और किस रूप में मिलती है, इसकी चर्चा करना भी उचित है। पहली बात यह समझ में आई कि संगठन में शक्ति है। ठेले पर अंगूर बिक रहे थे, जो बिखरे हुए थे उनका मूल्य तो 40 रुपये किलो था और जो गुच्छे में थे उनका मूल्य 80 रुपये किलो था। मूल्य में इतने अन्तर के पीछे एक ही कारण था कि जहाँ संगठन है वहाँ मूल्य अधिक है। ऐसे ही एक बार हाथ की पाँचों अंगुलियों में विवाद खड़ा हो गया कि बड़ा कौन? तर्जनी अंगुली तर्क देते हुए कहने लगी कि मैं सबसे बड़ी हूँ, क्योंकि मैं ही राज करती हूँ, मेरा ही शासन चलता है, अच्छे-अच्छे को मैं धूल चटा देती हूँ तो दूसरे नम्बर की मध्यमा अंगुली कहने लगी- ''हाथ कंगन को आरसी क्या'' देख लो सारी अंगुलियों में मैं ही लम्बाई में सबसे बड़ी हूँ। तुरन्त अनामिका अंगुली ने सबकी बात को काटते हुए कहा कि बड़ी तो मैं हूँ राजतिलक करना हो या कोई शुभ मांगलिक कार्य करना हो तो सर्वत्र मेरी ही जरूरत रहती है। इतने में ही कनिष्ठा अंगुली कहने लगी-''मैं सबसे बड़ी हूँ, मेरा महत्त्व है मेरी कीमत है, क्योंकि संकट की घड़ी में श्रीकृष्ण के द्वारा गोवर्धन पर्वत को उठाने वाली मैं ही थी, इसीलिए मैं बड़ी हूँ। इस बीच अंगूठे ने सबकी बात को काटते हुए कहा कि आज गरीबों का मसीहा, अनपढ़ व्यक्तियों का सहारा मैं ही हूँ और कभी कोई सफलता हासिल करता है तो मेरे द्वारा ही ईशारा होता है और लोग तुरन्त समझ जाते हैं कि इसने कोई जीत हासिल की है। कौन सबसे बड़ा है, इसको लेकर जब कोई आपस में निर्णय नहीं हुआ तब पाँचों एक महात्माजी के पास पहुँचे। महात्माजी ने बात सुनकर कहा कि मैं समाधान दूँ, इससे पहले तुम ये जो चूरमा पड़ा हुआ है उसका लड्डू बनाकर लाओ। कोई भी अंगुली अथवा अंगूठा एक अकेले लड्डू बनाने में समर्थ नहीं थे। महात्माजी ने समाधान देते हुए कहा कि लड्डू का निर्माण तभी सम्भव है जब तुम पाँचों का समन्वय हो, ठीक इसी तरह से किसी भी कार्य की सिद्धि पाँच कारण समवाय से ही सम्भव है।

यहाँ हमें एक बात की सीख मिलती है कि हमारे द्वारा किसी कार्य की उपलब्धि हो तो यह हमेशा याद रखना कि 'यह कार्य मैंने किया' ऐसा अहम् नहीं करना है। यह याद रखें कि प्रकृति के कई पदार्थों का कार्य की सिद्धि में योगदान है तो अहम् किस बात का करना है। यहाँ यह बात भी याद रखनी चाहिए कि पाँचों कारणों के योगदान से ही जब कार्य सिद्ध होता है तो विनीत बनकर सबके प्रति कृतज्ञता का भाव रखना चाहिए।

इस तरह कार्य की पूर्णता में पाँचों कारणों की उपस्थिति से हमको व्यावहारिक जीवन में भी कई तरह की सीख सहज में मिल जाती है। एक सीख यह भी मिलती है कि पुद्गल तो असंख्यात काल के बाद अपने स्वभाव (परमाणु अवस्था) में आ जाता है, लेकिन यह जीव अनादि काल से विभाव में भटक रहा है। इसलिए हम कब स्वभाव में आयेंगे? यह विचार करना है। जैनदर्शन एकान्तवाद को विवाद का कारण मानता है और विवाद में हमेशा आग्रहबुद्धि रहती है। इसीलिए वाद-विवाद नहीं, संवाद को ही प्रमुखता देनी चाहिए। कहा भी जाता है कि जो विवाद करता है वह संसारी कहलाता है और जो संवाद करता है वह संन्यासी कहलाता है। आप और हम सभी पाँचों कारणों के समन्वय का महत्त्व समझ कर जिनधर्म पर अटूट आस्थावान बनें, किसी एक वाद के आग्रह से बचें। ■

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 23
ISSN 2249-2011

प्रवचन

बुराई का त्याग : उन्नति का मार्ग

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. द्वारा सुराणा कटला, महामन्दिर-जोधपुर में 14 नवम्बर, 2017 को फरमाए गए इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

बन्धुओं!

आज मनुष्य मिली हुई परिस्थिति से सन्तुष्ट नहीं है। उसे जो मिला है, उससे असन्तुष्ट होकर सोचता है कि इतना मिला लिया और अभी इतना मिलाना है। इस मिलने-मिलाने के चक्कर में जीव जकड़ा हुआ है। सुखविपाकसूत्र के माध्यम से शिक्षा मिलती है कि मिले हुए का सदुपयोग करते हुए अभिमान नहीं आया, फल की आकांक्षा नहीं जगी तो जीव का उत्थान होता है। जीव दिन-रात कोशिश कर रहा है कि यह करना है, वह करना है। यह बात आपके लिए ही नहीं है, हमारे लिए भी लागू होती है।

करने से जो मिलेगा, वह हमेशा रह ही नहीं सकता। करने से मिलता है, मिलता जायेगा, पर हम लोगों ने अच्छी तरह देख लिया कि पूर्व में गलत किया होगा तब ही तो इस संसार में भटकना पड़ रहा है, दुःख उठाना पड़ रहा है। आज की वर्तमान विपरीत परिस्थितियाँ गलत किये हुए का प्रभाव है। इस गलत किये हुए के प्रभाव से उपजी परिस्थितियों का सामना करने के लिए सबसे पहले ज्ञान करना पड़ेगा। पहला सूत्र है-**काम करें, आराम करें और मस्त हो जायें।** शरीर के कार्य की बात नहीं है, आत्मा के कार्य की बात है। आकाश रोज साफ रहता है, आज धुआँ धुआँ-सा है। यह सब परिस्थिति है। कल मुनिराज ने कल आये तूफान-आँधी के बारे में फरमाया था। जीवन में भी आँधी-तूफान आते रहते हैं, क्या उससे लड़ने में जीवन पूरा कर देना है? ये सब परिस्थितियाँ परिवर्तनशील हैं। जो परिवर्तनशील है, वह अनित्य है। **अनित्य की ओर गतिशील होने पर विवेक भाव में, भाव कर्म में और कर्म परिस्थिति में बदलता है।**

दो तत्त्व हैं। एक है-जीव और दूसरा है-अजीव। अजीव के संयोग से पापास्रव एवं बन्ध होते हैं। जीव-अजीव के सदुपयोग से पुण्य-संवर-निर्जरा होते हैं। इसे गहराई से देखें। निज स्वार्थ की सब इच्छाएँ समाप्त हो जाने पर भी यह इच्छा रहे कि मैंने किसी की भलाई की है, वह इस बात को जान तो ले तो यह भी दोष है। निज स्वार्थ की समस्त इच्छाएँ समाप्त हो जाने पर भी यह इच्छा रह जाती है कि मैंने किसी की भलाई की, उसका फल क्या है?

बोलना बहुत सरल है। संका-कंखा-वितिगिच्छा हम सब बोल देंगे, पर करणी के फल में सन्देह है? **अच्छा काम करेंगे, अच्छा फल आयेगा। फल देखने की इच्छा का मतलब है दर्शन की कमी अर्थात् श्रद्धा की अपूर्णता।** इसके लिए अपने जीवन में ये तीन सूत्र अपना लें-1. बुराई करें नहीं, 2. भलाई का फल चाहे नहीं और 3. भलाई का अभिमान भी नहीं करें। क्रिया के भी अनेक विभाग होते हैं, जिनसे कर्मबन्ध भी कम-अधिक होता है। एक क्रिया करता है, एक क्रिया कराता है और एक क्रिया करने वालों का अनुमोदन करता है। करना, कराना और अनुमोदना इन तीन प्रकार की क्रिया को मन, वचन और काया से करना तथा भूत, भविष्य एवं वर्तमान में करना, इस तरह 27 भेद क्रिया के कर दिये हैं। उत्तराध्ययनसूत्र के 29वें अध्ययन की 7वीं गाथा में कहा है कि जब तक पुरस्कार चाहिए तब तक कार्य (क्रिया) सही हो नहीं सकता।

दोष को दबाने का प्रयास गुणों का अभिमान ही है। जब तक गुणों का अभिमान रहेगा ज्ञान-क्रिया सही हो ही नहीं सकती। गुणों का अभिमान दोष की उर्वरा भूमि है। भगवान की वाणी उत्तराध्ययनसूत्र के 20वें अध्ययन की 44वीं गाथा में कहा-

विसं तु पीयं जह कालकूडं,
हणाइ सत्थं जह कुग्गहीयं।
एसो व धम्मो विसओववन्नो,
हणाइ वेयाल इवाविवन्नो।।

अर्थात् जिस प्रकार पिया हुआ कालकूट ज़हर, उल्टा पकड़ा हुआ शस्त्र स्वयं का घातक होता है और वश में नहीं किया हुआ वैताल भी विनाशकारी होता है, उसी प्रकार विषय-विकारों से युक्त यह धर्म भी विनाश कर देता है। इसलिये सम्यक् क्रिया पर अभिमान रूपी विषय-विकारों को प्रभावी मत होने दो।

प्रवृत्ति का भोग बहुत सीमित होता है जबकि स्मृति का भोग असीमित होता है। आप रसगुल्ले या गुलाबजामुन को एक समय में कितने खा लेंगे? मिठाई चाहे जो हो, दो, चार, पाँच आदि हों, वे खा लेंगे, किन्तु खाने के बजाय स्मृति में कितनी-कितनी चीजें होंगी?

प्रवृत्ति ज्यादा नहीं हो सकती, लेकिन यह जीव स्मृति से कर्म-बन्धन अधिक करता है। इसीलिए कहा- काम करो, आराम करो और मस्त हो जाओ। काम करो, कौनसा काम? काम दो हैं। एक है-शरीर का काम करना और दूसरा है आत्मा का काम करना। शरीर का काम यानी विवशता से शरीर की प्रवृत्ति करनी पड़ती है। जिसके किए बिना रहा नहीं जा सकता। भूख है तो रोटी खानी पड़ेगी। रोटी खाना शरीर की आवश्यकता है। हम इसलिये भिक्षाचरी के लिए जाते हैं। वर्षा हो रही है, मामूली बूँदा-बाँदी है। यह बूँदा-बाँदी रुक जाय, मन में ऐसे विचार नहीं आने चाहिए। मन में विचार नहीं आने पर ही निर्जरा होती है। कर्मसिद्धान्त विशारद सुश्रावक मोहनलालजी मूथा यही कहते थे कि साधु के मन में वर्षा रुक जाय ऐसे विचार नहीं आने से उसके महान् निर्जरा होती है।

महापुरुषों ने फरमाया, गुरुकृपा से ध्यान में आया-**बिना कुछ किए रह जाओ तो सबसे बढ़िया और नहीं रहा जाय तो चिन्तन कभी अशुभ मत रखो।** जब तक हम शरीर को अपना मानकर प्रवृत्ति करेंगे तो वह प्रवृत्ति हमारी विवशता से होगी और वह बन्धनकारिणी होगी। मन, वचन एवं काया को अनुशासित रखना है। शरीर को अपना नहीं मानने पर ये तीनों भी वश में हो जायेंगे। इसीलिए मन, वचन और काय गुप्ति को चरण सत्तरी में रख दिया है। उत्तराध्ययनसूत्र के चौबीसवें अध्ययन में स्पष्ट कहा है कि मन-वचन-काया गुप्ति में करने का नहीं, अपितु नहीं करने का विधान है। आरम्भ में जाते हुए मन को रोकना, वचन को रोकना, काया को रोकना गुप्ति है।

तेरहवें गुणस्थान में जीव के द्रव्य मन है, भाव मन नहीं। प्रश्न का समाधान करने के लिए द्रव्य मन बनाना पड़ता है। तेरहवें गुणस्थान में इसके अलावा मन का कोई उपयोग नहीं है। नीचे के गुणस्थानों में द्रव्य और भाव मन है। मन:पर्याप्ति द्रव्य मन का निर्माण करती है। जीव जब मनन करता है तब मन होता है। मनन नहीं होगा, उस समय मन भी नहीं रहेगा।

हमको अनुभव में आता है। किसी से पूछा- आपका क्या नाम है? वह एक क्षण में अपना नाम बोल देगा। केवलज्ञानी को सत्य को देखने के लिए मन की आवश्यकता नहीं होती। सत्य को दूरस्थ छद्मस्थ को समझाने के लिए मन की आवश्यकता होती है। अतीत काल के दोषों के लिए प्रतिक्रमण और भविष्य के लिए दोषों के त्याग को प्रत्याख्यान कहा है। सबसे पहले अशुभ कर्म को तिलाञ्जलि देनी होगी। इसके लिए गलत काम नहीं करना होगा। फिर बाद में 'जयं चरे जयं चिट्ठे' होगा अर्थात् यतनापूर्वक प्रवृत्ति होगी।

हमने धन्ना सार्थवाह के जीवन को सुना है। धन्ना सार्थवाह साधु को देखकर सोचता है कि इनका जीवन निवृत्ति का रास्ता है। यह तो धर्म-स्थल है। यह तो तेज

का पुञ्ज है। परिणाम विशुद्ध होते गये। सम्यक्त्व प्राप्त हो गया। इस तरह हमारी भी यहाँ बैठे-बैठे सब परिस्थितियों से मुक्ति हो सकती है। वह धन्ना सार्थवाह क्या देख रहा है, वह कैसे अन्दर से रोम-रोम को देख रहा है? उसके परिणाम निरन्तर निर्मल होते जा रहे हैं। धन्ना सार्थवाह कह रहा है-आपके दर्शन से मेरे पाप-कर्मों का नाश हो रहा है। आज का दिन मेरा बहुत अच्छा बीतेगा।

आचार्यश्री ने सन् 1996 का अजमेर चौमासा किया। जीतमलजी चौपड़ा क्या हर्ष-विभोर होकर सुनाते थे।

आज सोना रो सूरज उग्यो, कल्पवृक्ष म्हारे घर आयो।
आज तो आनन्द म्हारे, गुरु पधारिया पाहुँना।

सन्त-सती को देखकर हर्ष होना स्वाभाविक है। ऐसे भी श्रावक थे, जो चार लोगस्स का ध्यान करते ही देखते हैं कि महाराज गोचरी पधार गये।

जीवानन्द वैद्य ने सन्तों को देखा। सतियों ने उनसे कहा-गुरुदेव को बड़ी पीड़ा हो रही है। तब वैद्य ने कहा-मेरे पास लक्षपाक तेल तो है, परन्तु रत्नकम्बल और बावना चन्दन नहीं है। इसके बिना सन्त का स्वस्थ होना असम्भव है। किसी प्रकार से रत्नकम्बल और बावना चन्दन उपलब्ध कराया गया। लक्षपाक तेल लगाया तो कीड़े निकले और रत्नकम्बल ओढ़ा दिया। सभी कीड़े रत्नकम्बल में आ गये, फिर रत्नकम्बल को हटाकर बावना चन्दन की मालिश कर दी। इस प्रकार चमड़ी के सब कीड़े निकल गये। दुबारा ऐसा किया तो रक्त-मांस के कीड़े निकल गये। तीसरी बार फिर ऐसा ही किया तो हड्डी के कीड़े भी निकल गये। तब जाकर सन्त पूर्णतया स्वस्थ हुए। इसी प्रकार हमारी आत्मा को भी राग-द्वेष रूपी कीड़ों ने बीमार किया हुआ है। जब तक इन कीड़ों को नहीं निकाला जायेगा तब तक आत्मा की स्वस्थता सम्भव नहीं है।

हम 72 घण्टे अर्थात् तीन दिन के पहले किसी बाहर से आए श्रावक के चौके का घर नहीं फरसते। चिकनगुनिया भी 72 घण्टे से पूर्व ठीक नहीं होता है। पहले इञ्जेक्शन में ऊपर से, दूसरे में कुछ अन्दर से और तीसरे में पूरी तरह बुखार से छुटकारा होता है। डॉ. प्रकाशजी मेहता कह रहे थे चिकनगुनिया बुखार में 72 घण्टे में आराम आ जाना चाहिए। पहले नम्बर में कर्म की शुद्धि अनिवार्य है। अपने कार्य-कलाप सम्यक् करें। फिर मन की शुद्धि। मन की शुद्धि के लिए सार्थक चिन्तन करें। इसमें अतीत के दोषों को देखने के साथ भविष्य में दोष नहीं हो इसका ध्यान रखना है। इसके अलावा बाकी सब व्यर्थ चिन्तन है। सबको व्यर्थ के चिन्तन के बजाय सार्थक चिंतन करना है।

सम्यग्दृष्टि के शरीर रहेगा। शरीर तो मिथ्या दृष्टि के भी रहेगा। शरीर को अपना मानना छूट जाय तो लक्ष्य प्राप्त हो सकता है। हम बाहर की प्रवृत्ति से किसी को सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि न कहें। अन्तर में 'नमो लोए सव्वसाहूणं' अर्थात् सबको नमस्कार चाहे वे वस्त्र पहने हों या नग्न हों।

याद रहे-बुरा काम नहीं करेंगे तो अच्छा काम अपने आप हो जायेगा। इसलिये व्यर्थ चिन्तन न करें, संकल्प-विकल्प भी नहीं करें तो तीसरी चेतन की शुद्धि होगी। हमें निर्विकल्प बनना है, यह ही चेतन की शुद्धि है।

आचार्य भगवन्त की कृपा से, उपाध्याय भगवन्त की सन्निधि से और आप सबके सहकार से स्वाध्याय का लाभ प्राप्त हुआ। **मिले हुए व्यक्ति, वस्तु और परिस्थिति से मिले फुर्सत। जब तक मिले हुए से फुर्सत नहीं होगी, सही ज्ञान नहीं होगा।** इन व्यक्ति, वस्तु और परिस्थिति को मिलाना विवशता है। इस देह को क्यों धारण करना है? पूर्व के कर्म को क्षय करने के लिए। लक्ष्य को कभी नहीं भूलना है। इसलिए विवेक भाव में भाव कर्म में बदल जाते हैं। भगवान ने चार विश्राम श्रमणोपासकों के बताये हैं-व्रत-नियम, पौषध, सामायिक-स्वाध्याय और अन्त में संलेखना-संथारा। इन विश्रामों में आराम करें और मस्त हो जायें। ■

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 26
ISSN 2249-2011

प्रवचन

गुरु है तो सब कुछ है

श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के सुशिष्य श्रद्धेय श्री योगेशमुनि जी म.सा. द्वारा चातुर्मास पूर्व एक सप्ताह तक सामायिक-स्वाध्याय भवन, शक्तिनगर, जोधपुर में 'गुरुतत्त्व' पर फरमाये गए प्रवचन के अंशों का आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

जगत में देव-गुरु-धर्म की चर्चा सदा से होती रही है और सदा होती रहेगी। ये तीन तत्त्व तारने वाले हैं। इस संसार में तारने वाले तीन तत्त्व हैं तो डुबाने वाले भी तीन तत्त्व हैं। देव-गुरु-धर्म तत्त्व तारने वाले हैं तो तन-धन-परिजन डुबाने वाले कहे जाते हैं।

देव-गुरु-धर्म तत्त्वों में गुरु मध्य में हैं। गुरु एक ओर देव को देखता है तो दूसरी ओर धर्म को निहारता है। हमारे देव हैं- अरिहन्त और सिद्ध भगवान। देव-स्वरूप की प्राप्ति के लिए हमें साधना-आराधना करते हुए कर्मों का क्षय करना होता है। व्यक्ति जब आत्म-भाव में रमण करता है, तो वह ज्ञाता-द्रष्टा बन जाता है। दूसरी ओर जो संसार-सागर में धर्म सुनते हैं, समझते हैं और धर्म को जीवन-व्यवहार में आचरित करते हैं तो वे जन्म-मरण के चक्कर से बच सकते हैं। यदि धर्म सुनने-समझने के साथ आचरित करने में लापरवाही करते हैं तो मोह में आकर तन-धन-परिजन से डूबते ही हैं।

गुरु अपने भक्तों को ज्ञान-दान तो देते ही हैं, जीवन-निर्माण की प्रभावी प्रेरणा भी करते हैं। गुरु की सत्-शिक्षा से हमारे संस्कारों का रक्षण-संवर्धन होता है। हम गुरु से आध्यात्मिक ऊर्जा प्राप्त करके इच्छित मनोरथ सिद्ध कर सकते हैं।

आप भाग्यशाली हैं कि आपको कनक-कामिनी के त्यागी धर्माचार्य पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. सद्गुरु के रूप में मिले हैं। आप दर्शन-वन्दन करके और गुरु-सेवा में बैठकर ज्ञान तो पाते ही हैं, गुरु-कृपा से आप निहाल भी होते हैं। ज्ञानी जन तो बार-बार यही कहते हैं कि गुरु-सेवा और गुरु-सान्निध्य से जीवन शुरू होता है। गुरु के प्रति सेवा-भक्ति से समर्पण का भाव जगता है। गुरु की भक्ति से भक्त गुरु के प्रशस्त-पथ पर गति-प्रगति करता हुआ बढ़ता है।

गुरु-सेवा से भक्त को शान्ति मिलती है और वह संघ-समाज में सम्मान भी पाता है। भक्त अपनी समस्या का स्वत: समाधान निकालने की स्थिति में आ जाता है और उसे किसी प्रकार का कोई दु:ख, दुविधा और दरिद्रता नहीं रहती।

गुरु स्वयं तो तिरते हैं, हम भक्तों को भी तारते हैं। गुरु के उपकारों से हम-सब उपकृत हैं। हम गुरु-सेवा में सदा समर्पित रहें इसी शुभ भावना के साथ आज इतना ही।

जगत के सभी व्यक्तियों को अपने-आप में लीन होकर साधना-आराधना करते हुए सिद्धि पाने का सतत प्रयास करना चाहिये। इसके लिए सद्गुरु की सङ्गति और सेवा के माध्यम से हम गुरु के प्रति समर्पित हो सकते हैं। गुरु से गुरु-मन्त्र लेते ही देव-गुरु-धर्म के सही स्वरूप की जानकारी तो मिलती ही है, हमें गुरु-कृपा से सद्ज्ञान भी प्राप्त होता है। जीवन-निर्माण में हमें ज्ञान की पग-पग पर जरूरत रहती है। सद्गुरु के निर्देश-सन्देश-उपदेश में एक ऐसी शक्ति मिलती है जिससे हमारा जीवन-निर्माण तो होता ही है, आज्ञा-अनुशासन से हम मार्ग पर सुगमता से आगे बढ़ते जाते हैं।

गुरु-सेवा से हमारी पहचान संघ-समाज के प्रबुद्धजनों से होती है। गुरु चाहे बोले या न बोले, बात करें या नहीं करें तब भी गुरु के दर्शन-वन्दन से हमें आत्म-शक्ति, आत्म-विश्वास और आत्म-जागृति का भाव आता ही है।

उदाहरण के रूप में एक व्यक्ति शुभ-भावना से दान, शील, तप में पुरुषार्थ करता है तो उसकी नैतिकता और प्रामाणिकता स्वत: उजागर होती है। अच्छे लोगों की सङ्गति से उसमें गुणों के प्रति आकर्षण निरन्तर बढ़ता जाता है।

गुरु-सेवा और गुरु-सान्निध्य से अन्तर्हृदय में एक ऐसा स्पन्दन होता है कि व्यक्ति अच्छे आचरण की ओर आगे बढ़ता ही है। कहना होगा कि गुरु मुख से जिनवाणी श्रवण करने वाला पहले तो धार्मिक क्रियाओं में तदन्तर साधना-आराधना में उत्तरोत्तर विकास करता है।

सद्गुरु का सान्निध्य व्यक्ति को आगे बढ़ाता है। वाणी की मधुरता, विचारों की स्पष्टता और आचरण की निर्मलता से गुरु का सान्निध्य प्राप्त करने वाला व्यक्ति सत्सङ्ग-सेवी और सत्सङ्ग-प्रेमी बने बिना नहीं रहता।

गुरु में वात्सल्य और शिष्य में विश्वसनीयता हो तो गुरु की कृपा शिष्य पर बरसती है। धर्माचार्य-धर्मगुरु वीतराग-देवों का प्रतिनिधित्व करते हैं, अत: उनमें वात्सल्य-दया-करुणा के भाव रहते हैं। संघ-दीप्ति और शासन-प्रभावना में गुरु सबको साथ लेकर चलते हैं।

गुरु के वात्सल्य से शिष्य में विश्वसनीयता निरन्तर बढ़ती है और इसी से उसमें गुरु के प्रति समर्पण का भाव आता है। व्यवहार जगत में भी एक-दूसरे के प्रति आत्मीयता से परस्पर प्रेम में वृद्धि एवं सहयोग की भावना पुष्ट होती है। कथनी-करनी की एकरूपता, सिद्धान्तप्रियता, सामाचारी के सम्यक् परिपालन का भाव और गुरु के प्रति सहज प्रेम शिष्य में देखने को मिलता है।

गुरु शिष्य के सर्वांगीण विकास को प्राथमिकता देता है, इसीलिए सुयोग्य शिष्य में आज्ञा-आराधन का भाव भी निरन्तर बढ़ता जाता है। अनुशासन में रहने से और सकारात्मक सोच से शिष्यत्व में निखार आता है। गुरु तत्त्व में गजब का सामर्थ्य होता है अत: शिष्य हर क्षण-हर पल गुरु-सेवा में सजग रहता है।

सद्गुरु अपने सुशिष्य को मुक्ति तक पहुँचाता है। गुणों की वृद्धि और दोषों के शमन से गुरु-सान्निध्य का लाभ शिष्यों को मिलता है। गुरु के विशिष्ट सद्गुणों का प्रभाव भी शिष्यों पर पड़ता है।

आचार्यश्री हीरा सद्गुरु हैं। पूज्य श्री की मान्यता है कि सन्त-सती शाप देते नहीं, कुसाधु-कुसाध्वी का शाप लगता नहीं। आप यह भी जानते हैं कि सज्जन पुरुष भी किसी का बुरा नहीं करते तो गुरु के लिए ऐसा सोचना भी महापाप है।

गुरु-सेवा और गुरु-सान्निध्य से शिष्य में सकारात्मक सोच आती है। सकारात्मक सोच से विचार-शुद्धि और जीवन की विशुद्धि बढ़ती जाती है। सद्गुरु के सान्निध्य में शिष्य का आत्मभाव भी बढ़ता जाता है।

एक बार एक व्यक्ति गुरु के पास पहुँचा। पहुँचते ही उस व्यक्ति ने किसी सेवक से कहा-''आप मेरा कार्ड गुरुदेव तक पहुँचा दें। मेरा कार्ड देखते ही गुरु मुझे बुला लेंगे।''

सेवक ने कार्ड गुरु तक पहुँचाया, मगर गुरु ने कहा-''मैं इस आदमी को जानता तक नहीं।'' सेवक ने कार्ड लौटाया तो वह व्यक्ति बोला-''गुरुदेव मुझे अच्छी तरह से जानते हैं। कार्ड में स्वयं के नाम के आगे गवर्नर शब्द देखकर शायद गुरुदेव ने मुझे नहीं बुलाया, ऐसा लगता है।'' उस व्यक्ति ने गवर्नर शब्द काटकर फिर से कार्ड सेवक के माध्यम से भेजा तो गुरुदेव ने कहा-''भाई, तुम यह कार्ड फिर क्यों लेकर आये? मैंने कह तो दिया है कि मैं उस आदमी को जानता तक नहीं, फिर मैं उसे क्यों बुलाऊँ?'' सेवक ने पुन: जाकर कार्ड लौटाते हुए कहा कि गुरुदेव आपको नहीं जानते फिर उनसे क्या बात करनी है? कार्ड फिर से उस व्यक्ति के पास आ गया तो उस व्यक्ति ने एक छोटे-से कागज पर लिखा-''मैं आपश्री के सान्निध्य में कुछ समाधान चाहता हूँ।''

गुरु ने पर्ची देखी और सेवक से कहा-''जाओ, उस आदमी को अन्दर भेज दो।'' ऐसा कब होता है? जब व्यक्ति अहं से मुक्त होकर गुरु-सान्निध्य में अपनी

समस्या का समाधान जानना चाहता है तो उसे समाधान मिलता ही है।

शिष्य द्वारा जब अहंकार से मुक्त होकर और गुरु-कृपा की आकांक्षा से पूछा जाये तो उसका सकारात्मक जवाब जरूर मिलता हैं। सच्चा शिष्य ही गुरु-कृपा का आकांक्षी होता है। हम अच्छे बनें और सच्चे बनकर गुरु के प्रति समर्पित हों।

हर जिज्ञासु की कोई-न-कोई समस्या तो रहती ही है। गुरु अपने शिष्य का समाधान तो करते ही हैं, उसे सत्पथ पर चलने की प्रेरणा भी करते हैं। एक जिज्ञासु ने गुरु से पूछा-''मैं गृहस्थी बसाऊँ या साधु बन जाऊँ?'' गुरु ने कहा-''जहाँ पूर्णता प्राप्त हो, वह काम करो।'' शिष्य ने कहा-''गुरुदेव! मैं तो आपके उत्तर से कुछ समझा नहीं। मुझे तो आप साफ-साफ बताओ कि मैं गृहस्थी बनूँ या साधु?'' गुरु ने कहा-''मैंने जवाब दिया न! जहाँ भी पूर्णता प्राप्त हो वह काम करना ठीक रहता है।'' गुरुदेव उस व्यक्ति को समस्या से मुक्त करना चाहते थे, इसलिए गुरु ने कहा-''तुम मेरे साथ चलो। तुम्हें बोलना कुछ भी नहीं, केवल देखना है।'' गुरु-शिष्य दिन के उजाले में एक गृहस्थ के घर पहुँचे। गृहस्वामी ने अपनी धर्मपत्नी से कहा-''जाओ, एक लालटेन लाओ।'' आज्ञा-आराधक धर्मपत्नी ने कहा तो कुछ नहीं और एक लालटेन जलाकर सामने रख दी। गुरु-शिष्य दोनों देख रहे थे, पर बोलना किसी को कुछ नहीं था। जिज्ञासु दृश्य देखकर हैरान हो रहा था कि चिलचिलाती धूप में इस महानुभाव ने जलती हुई लालटेन क्यों माँगी?

दोनों गुरु-शिष्य गृह-स्वामी के घर से निकले। अब गुरुदेव ने कहा-''तुम यदि पूर्णता पाना चाहो तो ऐसी धर्मपरायणा-धर्मपत्नी से विवाह कर सकते हो।'' साधु-जीवन की पूर्णता के लिए गुरु-शिष्य दोनों एक आश्रम में पहुँचे।

तलहटी में आश्रम था, पहाड़ पर एक साधु तपस्या कर रहा था। उसे एक वृद्ध साधु ने नीचे पधारने के लिए आवाज देकर निवेदन किया। साधु सीधे पहाड़ से तलहटी तक आया और जिसने आवाज दी उसने कहा-''मैं बूढ़ा हूँ, इसलिए किस काम के लिए आपको बुलाया, याद नहीं रहा।'' वह बिना कुछ कहे तलहटी से सीधा पहाड़ पर चला गया और अपना ध्यान करने लगा। इतने में फिर आवाज दी-''महात्माजी! मुझे काम याद आ गया है, आप नीचे तो पधारो।'' पुनः पहाड़ पर तपस्या करने वाला नीचे तलहटी तक आया। आवाज देने वाले साधु ने पूछा-''तपस्वी साधकजी! आपकी उम्र कितनी है?'' तपस्वी साधक ने कहा-''यह मेरी उम्र का अस्सीवाँ वर्ष है।'' बस, महाराजजी! यही पूछना था। पुनः तपस्वीजी सीधे पहाड़ पर चढ़ गये। महाराजजी इसके अतिरिक्त कुछ नहीं बोले।

तपस्वी साधक पहाड़ पर चढ़े ही थे कि नीचे से आवाज आई-''महाराजजी! ओ महाराजजी! आपने उम्र कितनी बताई? मैं तो भूल गया?''

तपस्वी पुनः आये और उम्र बताकर लौट गये। एक-एक करके तीन बार तपस्वी ने ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर तक चक्कर काटे, परन्तु उनकी शान्ति-क्षमा-सहिष्णुता बनी रही।

गुरु ने शिष्य से कहा-''आपको प्रत्यक्ष समाधान मिल गया होगा? आप चाहे तो गृहस्थ बनें या साधु, आप में शान्ति होनी चाहिये, क्षमा और सहिष्णुता होनी चाहिये। मतलब आप चाहे जो बनें पूर्णता-प्राप्ति का लक्ष्य लेकर चलें। सद्गुरु का सान्निध्य हमें पूर्णता प्रदान करता है। पूर्णता पूनम की चाँदनी है।

श्रेष्ठ गुरु अपने भक्तों को श्रेष्ठ बनाता है। गुरु बनाना सरल है, किन्तु गुरु की मानना उतना सरल नहीं है। जो भी मोह और द्रोह का ध्यान न रखे, वह सद्गुरु होता है।

वस्तु, व्यक्ति और परिस्थिति मुक्ति में बाधक नहीं हैं, बाधक है आसक्ति-भाव। ज्ञानीजन कहते हैं-आनन्द आत्मा से मिलता है अनुभवियों ने ठीक ही कहा है-

मोह-नींद जब उपशमे, सद्गुरु देय जगाय।
कर्म चोर आवत रुके, तब कुछ बने उपाय।।

मोह-नींद अर्थात् आसक्ति। सद्गुरु आसक्ति से मुक्त करता है। यह शुभ संकेत है कि गुरु हमें मोह-नींद से जगाते हैं। हम बार-बार कहते हैं कि जीवन में आसक्ति से मुक्त कराने वाले सद्गुरु ही होते हैं। गुरु की आवश्यकता भी इसी बात को लेकर कही जाती है। जब हमारा हृदय उर्वरक होता है, तो वह आत्म-आनन्द की ओर बढ़ता है। अनुभवी हमें बार-बार कहते हैं कि हर परिस्थिति में आनन्द मानें। यह कब होता है? जब तन में व्याधि होने पर भी मन में समाधि हो।

आप हर स्थिति और परिस्थिति में शान्त रहें। आपको शायद यह भी ज्ञात होगा कि एक श्वान आपको भागते देखकर तेजी से आपके पीछे दौड़ता है। आप खड़े हो जाते हैं, तो वह भी वहीं ठहर जाता है। एक व्यक्ति प्रगति करता है तो उसे देखकर अज्ञानी बार-बार टोकता है-रोकता है, जबकि सच्चा गुरु अपने शिष्य की प्रगति देखकर प्रमोद का अनुभव करता है।

गुरु को शिष्य की प्रगति भाती है, सुहाती है। गुरु हमारा हितैषी है, शुभचिन्तक भी है, इसीलिए गुरु बाहर से चोट मारता है, परन्तु भीतर से सम्भालता रहता है। आपने कुम्भकार को घड़े बनाते देखा होगा। वह ऊपर से चोट मारता है तो भीतर से हाथ भी रखता है। गुरु प्रतिकूल परिस्थिति को अनुकूल स्थिति में बदलता है। गुरु के लिए आप बोलते भी हैं-

तेरे बिना गुरुवर, हमारा नहीं कोई रे।
तेरे बिना गुरुवर, सहारा नहीं कोई रे।।

आप-हम-सबको जीवन में गुरु की आवश्यकता हैं। गुरु अनुशासन के साथ मन-मन्दिर में आस्था जगाते हैं। गुरु हमारी बाधाओं को दूर तो करते ही हैं, सुख-सम्पत्ति-शान्ति-आनन्द भी देते हैं। गुरु हमारे उपकारी हैं, उनका आभार मानें और उनकी सेवा-भक्ति भी करें। गुरु-सेवा से हम अपने जीवन को आनन्दमय बना सकते हैं। ■

जीवन का सार

श्रीमती रेणु जैन 'साक्षी'

अहंकार में जीते हैं हम
अपनों को दगा दे जाते हैं
मेरे सिवा कोई नहीं दुनिया में,
ऐसा कहते जाते हैं।
फिर भी हम कहते हैं,
करता हूँ मैं जीवन से प्यार
ऐसे जीवन पर है धिक्कार
नहीं पता हमें, क्या है हमारे
जीवन का सार।
गलतियाँ पर गलतियाँ
हम करते जाते हैं
मगर, सुधरने का नाम नहीं
फिर भी कहते हैं हम,
मैं हूँ, बस मैं ही हूँ
इस मैं के चक्कर में
झगड़ों की हो जाती सीमा पार
नहीं पता हमें, क्या है हमारे
जीवन का सार।
भूखे को कभी खाना खिलाया नहीं
कभी प्यासे को पानी पिलाया नहीं और
हम कहते हैं, हमारे बिना
सूना ये संसार
अरे! इंसानियत को ही
बेच दिया हमने
नहीं पता हमें, क्या है हमारे
जीवन का सार।।

-द्वारा श्री कन्हैयालालजी जैन, आजाद नगर, भीलवाड़ा (राजस्थान)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 30
ISSN 2249-2011

प्रवचनांश

खोलकर सुन लो कान

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के सुशिष्य श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा. द्वारा जैन स्कूल, महामन्दिर, जोधपुर में पर्युषण पर्व में फरमाए गए जीवनोपयोगी बोलों का संकलन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता ने किया है।

-सम्पादक

1. धन्य-धन्य है जिनवाणी, जिसने तार दिये अनन्त-अनन्त प्राणी।
2. जो आत्मभाव में जीता है, वह आनन्द ही आनन्द पाता है।
3. अध्यात्मज्ञान ही सच्चा ज्ञान है।
4. मोह को घटाना ही धर्म है।
5. मोह होगा तो आर्त्तध्यान आयेगा ही।
6. खोलकर सुन लो कान, यहीं रह जायेंगे दुकान और मकान।
7. माता-पिता और सद्गुरु का आशीर्वाद व्यक्ति को प्रगति-पथ पर आगे बढ़ाता है।
8. कषाय आबाद तो जीवन बरबाद।
9. निमित्त नितान्त निर्दोष है; सब दोष तो मेरे अपने हैं।
10. आध्यात्मिक जगत में करुणा और कृतज्ञता दो माताएँ हैं।
11. मृत्यु की इच्छा कोई नहीं करता।
12. अप्रमत्तता में सारी साधना समाहित है।
13. ज़हर को अमृत समझकर पीने वाला जीवन निर्माण करता है।
14. आसक्ति छोड़ने पर ही जीवन में सुख-शान्ति और आनन्द आता है।
15. संसार नश्वर है और आत्मा शाश्वत है।
16. साधु-साध्वी के शुद्ध संयम की आराधना अष्ट प्रवचन माता के सहारे होती है।
17. जिसे वैराग्य आ गया वह पुण्यशाली है।
18. भावना भव-नाशिनी है।
19. कर्त्ताबुद्धि छूट गई तो मिथ्यात्व भी छूट जायेगा।
20. क्रोध के प्रसङ्ग में ज्ञाता-द्रष्टा बनो, क्रोध स्वत: छूट जायेगा।
21. वैर-विरोध की गाँठ नहीं बाँधें, गाँठ होगी तो अपनत्व नहीं रहेगा।
22. ज्ञान-दर्शन-चारित्र की साधना ही सच्ची साधना है।
23. संयमी हर स्थिति-परिस्थिति में समभाव रखता है।
24. दूसरों की बुराई देखना ही सबसे बड़ी बुराई है।
25. नहीं देखें दूसरों के दोष, दिख जायें तो रहें खामोश।
26. गुणग्राही-मोक्ष राही।
27. दूसरों को बदलने की इच्छा को बदलो, अपने-आप शान्ति होती जायेगी।
28. हमारा एक ही लक्ष्य है, सिद्ध, बुद्ध और मुक्त होना।
29. कषायों की मन्दता ही साधना की शुरुआत है।
30. मिटने वाले के पीछे मर मिटना ही मिथ्यात्व है।
31. आसक्ति हटेगी तो एक-न-एक दिन मुक्ति ज़रूर मिलेगी।
32. चाहता है शान्त सुधारस पीना, तो शुरू कर जिनाज्ञा में जीना।
33. सच्चा सुख विकारों का अभाव, झूठा सुख विकारों से लगाव।

■

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 31
ISSN 2249-2011

113वाँ जन्म-दिवस

सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक : आचार्यश्री हस्ती

डॉ. मीनाक्षी डागा

गुरु हस्ती के दो फरमान।
सामायिक-स्वाध्याय महान्।।

आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक थे। इनकी प्रेरणा वे अपने कथन द्वारा तो भक्तों को देते ही थे, साथ ही स्वयं उसके साक्षात् स्वरूप भी थे। उनका प्रवचन कोरा कभी नहीं होता था। वे जो भी प्रवचन देते थे, वह उनके जीवन में जीवन्त रूप से देखने एवं अनुभूत करने को मिलता था। वे जैनधर्म के उपदेशक मात्र नहीं थे, वरन् जैनधर्म के साक्षात् स्वरूप थे। उनके भक्तजन इसीलिए तो कहते हैं कि उनके तो दर्शन मात्र से ही धन्य हो जाते थे। ऐसा ही मेरा स्वयं का भी अनुभव है। उनके जीवन में उनकी सौम्यता, सरलता, दिव्यता, प्रखर-प्रकृष्ट वीतराग श्रद्धा, ज्ञान और आचार झलकते थे।

आचार्यश्री हस्ती ने सामायिक-स्वाध्याय को पहले स्वयं अपने जीवन में उतारा, तब ही जन-जन को इसका उपदेश दिया। दस वर्ष की लघुवय में ही दीक्षा ग्रहण करके उन्होंने जीवन भर की सामायिक ले ली। लघुवय में ही आपने सर्व चारित्र सामायिक को धारण किया था। आप पूर्ण समताभाव से शान्त और कर्मठ रूप से अपने गुरु की आज्ञा का निर्वहन करते थे। अपने से बड़े सन्तों एवं शिक्षा गुरु पण्डितजी का भी बहुत ही विनम्र भाव से आदर-सम्मान करते थे। बाहरी आगन्तुक अनुयायियों से वार्तालाप में अपना समय न लगाकर दत्तचित्त एवं एकाग्र होकर अपने विद्याध्ययन में ही लगे रहते थे। यहाँ तक कि अपने साथ ही दीक्षित अपनी माँ रूपासतीजी से भी कोई वार्तालाप नहीं करते थे। अपने विद्याध्ययन और स्वाध्याय में इतने तल्लीन रहते थे कि 15 वर्ष की आयु तक तो वे इतने निष्णात आगम ज्ञाता और चारित्रपालक बन गये कि उनके गुरु आचार्य शोभाचन्द्रजी म.सा. ने उन्हें आचार्य पद पर मनोनीत कर दिया। प्रारम्भिक अवस्था से ही सामायिक-स्वाध्याय की लगन होने से जीवन में कभी शिथिलता आयी ही नहीं। आचार्य बनने के बाद भी आप अप्रमत्त साधक, ज्ञान साधना, स्वाध्याय, लेखन और चारित्र पालन में सदैव उत्तरोत्तर विकास के नये आयाम ही रचते रहे।

'**धम्मज्झाणरए जे स भिक्खू**' अर्थात् जो धर्म-ध्यान में रत रहता है, वह भिक्षु है। आगम की यह उक्ति आचार्यप्रवर के जीवन में अक्षरश: चरितार्थ होती थी। वे सदैव स्वाध्याय, मनन, लेखन, ध्यान और भक्ति में रत रहते थे। यहाँ तक कि बीमारी में भी उनकी साधना में शिथिलता नहीं आई। सम्वत् 2023 के अहमदाबाद चातुर्मास के एक प्रसंग को यहाँ उद्धृत करना चाहूँगी। एक बार आपका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया, फिर भी आप अपनी चर्या में रत रहे। तब चिकित्सकों ने आपश्री को पूर्ण विश्राम के लिए कहा, लेकिन वे साधक अपनी साधना छोड़ने वाले कहाँ थे। उन्होंने कहा कि कोई सन्त मेरे पास बैठकर शास्त्रों का वाचन करे तो मुझे चिकित्सकों के कथनानुसार कोई श्रम भी नहीं होगा और साथ-साथ स्वाध्याय भी होता रहेगा, ऐसा ही किया गया। यह थी उनकी ज्ञान और स्वाध्याय के प्रति सच्ची लगन। अन्तिम समय में निमाज में भी गुरुदेव की साधना इसी प्रकार चली।

ऐसे अद्वितीय आगमानुरागी, स्वाध्यायनिष्ठ आत्मसाधक निस्सन्देह ही अध्यात्म पथिकों के लिए प्रेरणा स्तम्भ हैं। ये प्रसङ्ग उनकी सतत साधना के प्रतीक हैं। उनका सम्पूर्ण जीवन ही ऐसी अनवरत साधना के रूप में ही दृष्टिगोचर होता है। उनका जीवन दर्शन का सूत्र ही यही था-

खण निकमो रहणो नहीं, करणो आतम काम।
भणणो, गुणणो, सीखणो, रमणो ज्ञान आराम।।

जीवन के चरम समय में भी उन परमयोगी ने संलेखना-संथारे के रूप में सामायिक और स्वाध्याय को पराकाष्ठा तक जीया। उनकी अद्भुत, अनुपमेय और विलक्षण साधना जन-जन के लिए अनुकरणीय पाथेय बन गयी।

आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. का नाम ही सामायिक-स्वाध्याय का पर्याय बन गया। जहाँ भी सामायिक-स्वाध्याय का प्रसङ्ग सामने आता हस्ती गुरु का नाम सबसे पहले जेहन में आता, चाहे कोई भी स्थान हो या कोई भी सम्प्रदाय हो। इसका कारण है कि उनके द्वारा की गई सामायिक-स्वाध्याय की विशद व्याख्या और उसके प्रचार-प्रसार की विलक्षण विधा एवं प्रेरणा। सामायिक और स्वाध्याय, पर से स्व की ओर आने की तथा उसमें स्थित होने की साधना है। ये दोनों ही सही जीवन जीने की कला है। इनमें व्यक्ति, समाज और राष्ट्र को आगे बढ़ाने की क्षमता है और स्व-पर के कल्याण की क्षमता है।

सामायिक की नवप्रेरणा-आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. ने वर्तमान जीवन में सामायिक की प्रासंगिकता को समझाया। उन्होंने कहा कि सामायिक हमारे आन्तरिक विकास का साधन है, जो बाह्य विकास में बाधक नहीं वरन् उसका पूरक है। आज हमारे लिए सामायिक के मायने अवश्य बदल गये हैं, पर उसकी उपयोगिता नहीं बदली। क्या बिजली का आविष्कार सूरज को चुनौती दे सकता है, कभी नहीं। जिस प्रकार एक वाहन की प्रगति के लिए ईंधन के साथ जल का होना भी आवश्यक है; उचित उपयोग के आधार पर ईंधन और जल सहयोगी हैं, प्रतिद्वन्द्वी नहीं। इसी प्रकार अर्थ एवं शिक्षा रूपी ईंधन के साथ जीवन रूपी वाहन को आगे बढ़ाने के लिए समभाव रूपी जल की आवश्यकता होती है। समभाव ही सामायिक का दूसरा नाम है, जिसका समावेश जीवन में कर लेने पर जीवन के बाह्य एवं आन्तरिक दोनों ही रूप उन्नत बन सकते हैं। ममत्व के त्याग और समत्व को धारण करने से ही हमारा यह मानव-जीवन सार्थक हो सकता है।

भगवान महावीर ने स्थानांगसूत्र में सामायिक को साधु एवं श्रावक दोनों के लिए आवश्यक बताया है- **अगार समाइए चेव अणगार समाइए चेव।** सामायिक साधक के षडावश्यक में प्रथम आवश्यक है। सर्वार्थसिद्धि में कहा है-

समे एकीभावे वर्तते। एकत्वेन अयनं गमनं समयः। समय एव सामायिकम्।। (7/2)

सम का अर्थ एकरूप होना है। समय का अर्थ आत्मा है और उसके साथ एक रूप हो जाना ही सामायिक है। सम अर्थात् राग-द्वेषरहित आत्मा। एकान्त और एकाग्र रूप से आत्मा में तल्लीन हो जाना ही सामायिक है। आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. के अनुसार सामायिक तन और मन की साधना है। तन की दृष्टि से इन्द्रियों पर नियन्त्रण और मन की दृष्टि से उसके उद्वेग एवं चञ्चलता का निरोध। इसके लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है। अभ्यास से समाधि की अवस्था आती है, चाहे वह संप्रज्ञात अथवा असंप्रज्ञात हो। सामायिक में अष्टांग योग के आठों अंग स्वतः विद्यमान हैं। सामायिक का अनुष्ठान लौकिक स्वार्थ के लिए नहीं होना चाहिए। उन्होंने सामायिक का महत्त्व वैयक्तिक, सामाजिक और मानवीय धरातल पर बताया। वे कहते थे-''स्वयं सदा सामायिक में रहते हुए समाज में समता स्थापित हो, जीवन और परिवार कषायमुक्त हो, करुणा, अहिंसा, प्रेम और दया का उद्रेक हो-समता, सहिष्णुता और सरसता का सञ्चार हो-यही सामायिक का उद्देश्य है।''

स्वाध्याय की नवचेतना-पढमं नाणं तओ दया। अर्थात् प्रथम ज्ञान होना चाहिए तत्पश्चात् दया यानी आचरण। दशवैकालिक की इस उक्ति के अनुरूप ही आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. का सम्पूर्ण जीवन था। वे कहते थे कि स्वाध्याय से ही सच्ची सामायिक का मार्ग प्रशस्त होगा। सम्यग्ज्ञानपूर्वक ही सम्यग्चारित्र का पालन सम्भव है। वे स्वयं भी ज्ञान-क्रिया के अद्भुत संगम थे और इसी का प्रचार-प्रसार जीवनपर्यन्त किया। इसीलिए वे स्वाध्याय पर सर्वाधिक बल देते थे। स्वयं भी

स्वाध्याय के द्वारा उच्चकोटि के ज्ञानी बने। अत: वे जन-जन को स्वाध्याय से जोड़ना चाहते थे। वे जानते थे कि स्वाध्याय के द्वारा ही व्यक्ति का विवेक जागृत होगा और वह सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति कर सकेगा। ज्ञानपूर्वक ही कोई सम्यक् श्रद्धा प्राप्त कर सकता है। वस्तुत: सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान दोनों दो नेत्रों की भाँति हैं, जो स्वाध्याय की ज्योति से एक साथ जागृत होते हैं। तभी सम्यक् चारित्र का मार्ग प्रशस्त होता है। उनके अनुसार स्वाध्याय अपने आप में एक सम्पूर्ण साधना है।

स्वाध्याय का तात्पर्य है-स्व का अध्ययन करना। यह स्व का अध्ययन प्रारम्भिक आलम्बन के रूप में आगमों तथा ज्ञानियों द्वारा किए गए धार्मिक विश्लेषणों के अध्ययन-अध्यापन के रूप में कर सकते हैं। फिर धीरे-धीरे आत्म-तत्त्व के चिन्तन और ध्यान के रूप में भी स्वाध्याय करना चाहिए। उत्तराध्ययन सूत्र में स्वाध्याय के पाँच भेद कहे गये हैं-

वायणा पुच्छणा चेव, तहेव परियट्टणा।
अणुप्पेहा धम्मकहा, सज्झाओ पंचहा भवे।।

उत्तराध्ययनसूत्र 30/34

अर्थात् स्वाध्याय के पाँच भेद हैं-वाचना, पृच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षा एवं धर्मकथा। वाचना अर्थात् सत्शास्त्रों का अध्ययन, पृच्छना अर्थात् शंका विषयक स्थलों के सम्बन्ध में प्रश्न पूछना और समाधान पाना, परिवर्तना अर्थात् पूर्व में अध्ययन किए हुए को पुन: स्मरण करना, अनुप्रेक्षा अर्थात् चिन्तन करना तथा धर्म कथा अर्थात् सन्मार्ग में आचरण करना, ऐसे चारित्रात्माओं के जीवन को जानना, जिन्होंने धर्मानुसार जीवन जीया। स्वाध्याय की इस सम्पूर्ण प्रक्रिया के द्वारा विवेक बुद्धि जागृत होती है और मिथ्यात्व का आवरण हटता है। विवेकपूर्ण विचार की सहायता से ही आत्मबोध होता है।

आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. ने स्वानुभव के मंथन से प्राप्त इस अमृत से पूरी मानव जाति को सिञ्चित करने के अद्भुत प्रयास किए। उन्होंने आत्मविकास के साथ-साथ सामाजिक उत्थान के लिए भी स्वाध्याय को आवश्यक बताया। उन्होंने कहा कि शास्त्र ही मनुष्य का वास्तविक नयन है। स्वाध्याय चित्त की स्थिरता और पवित्रता के लिए सर्वोत्तम उपाय है। प्रत्येक व्यक्ति को स्वाध्याय करना चाहिए। स्वाध्याय व्यक्तिगत चेतना का प्रमुख साधन है। घर-घर, गाँव-गाँव और प्रान्त-प्रान्त में स्वाध्याय का प्रचार-प्रसार हो। स्वाध्याय के प्रदीप से मन का अन्धकार दूर होगा। समाज की समस्याएँ और कुरीतियाँ खत्म होंगी। समस्त सामाजिक रोगों का इलाज है- स्वाध्याय। स्वाध्याय में स्व-पर कल्याण का बल है। इससे आप स्वयं सुधरें, दूसरों को भी सुधारें। इसके लिए स्वाध्याय की मशाल हाथ में लें और जिनशासन को चमकाएँ।

आचार्यश्री ने सामाजिक उत्थान के लिए स्वाध्याय के अद्भुत प्रयोग किए। उनके अनुसार स्वाध्याय से चतुर्विध संघ में ज्योति आ सकती है। यह स्थानकवासी समाज का प्रमुख आलम्बन है। समाज के उत्थान के लिए स्व-अध्ययन के साथ अध्यापन भी आवश्यक है। अर्थात् स्वयं ज्ञान का आलोक प्राप्त कर उसकी ज्योति से दूसरों के जीवन को भी प्रकाशमान करना स्वाध्याय का मूल स्वरूप है। वर्तमान समय में विशाल जैन समाज की तुलना में साधु-साध्वियों की संख्या अत्यन्त सीमित है। फलत: प्रत्येक स्थान पर उनके चातुर्मास होने सम्भव नहीं हैं। इससे अनेकानेक स्थलों के निवासी पर्युषण में भी धर्माराधना से वञ्चित रह जाते हैं। इसी कमी को पूरित करने के दृष्टिकोण से आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. ने श्रावकों को स्वाध्यायी भाई-बहनों के रूप में प्रशिक्षण की प्रेरणा दी एवं उनके उपदेशों के प्रभाव से स्वाध्याय संघ की स्थापना हुई। यद्यपि प्रारम्भ में अन्य सम्प्रदाय वालों ने इसकी आलोचना की, फिर भी आचार्यप्रवर पूर्ण आत्मविश्वास के साथ स्वाध्यायी-निर्माण की दिशा में अनवरत प्रयासरत रहे। उनके सफल प्रयोगों के लाभप्रद परिणाम देखते हुए कालान्तर में अन्यान्य सम्प्रदायों ने भी स्वाध्याय को अपनाते हुए उनका अनुकरण किया और सभी ने अपने-अपने स्वाध्याय संघों का निर्माण किया।

इस प्रकार आचार्यश्री की दूरदर्शिता, आत्मविश्वास, दृढ़ संकल्प और अनवरत प्रयासों के लिए समग्र जैन समाज और मानवता उनके प्रति कृतज्ञ रहेगी। सौभाग्य से ही उन्हें ऐसा ज्ञानसूर्य मिला, जिन्होंने स्वाध्याय-संघों के रूप में अनेक स्वाध्याय प्रदीप प्रज्वलित कर दिये।

आचार्यश्री के उपदेशों से प्रभावित होकर, श्रावक समुदाय द्वारा प्रारम्भ की गई संस्थाएँ- सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल-जयपुर, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ-जोधपुर, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ-जोधपुर, श्री शोभाचन्द्र ज्ञान भण्डार-जोधपुर, श्री बाल शोभागृह-जोधपुर, अखिल भारतीय सामायिक संघ-जयपुर, जिनवाणी मासिक पत्रिका-जयपुर, अखिल भारतीय महावीर जैन श्राविका समिति-मद्रास, भूधर धर्मबन्धु कल्याण कोष-जयपुर, श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार-जयपुर, श्री कुशल जैन छात्रावास-जोधपुर, जैन इतिहास समिति-जयपुर, श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान-जयपुर (वर्तमान में आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान), स्वाध्याय शिक्षा पत्रिका-जयपुर, श्री जैन रत्न विद्यालय-भोपालगढ़, श्री महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ-जलगाँव, अखिल भारतीय जैन रत्न युवक संघ-जोधपुर, श्री अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्-जयपुर आदि सभी संस्थाएँ आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. के उपदेशों से प्रभावित होकर श्रावक वर्ग द्वारा स्थापित की गई। ये संस्थाएँ जैन संस्कृति के प्रचार-प्रसार और सामायिक-स्वाध्याय के संवर्धन में आज भी अति गुणवत्ता के साथ किसी न किसी रूप में गतिमान हैं।

प्रकाशित साहित्य-रचना-आचार्यश्री की वाणी एवं लेखनी से जैन साहित्य समृद्ध हुआ, जो जैनधर्म के हार्द को सहज रूप में प्रकट करता है। ये महान् कृतियाँ हैं-जैन धर्म का मौलिक इतिहास-भाग 1 से 4, ऐतिहासिक काल के तीन तीर्थंकर, पट्टावली प्रबन्ध संग्रह, जैन आचार्य चरितावली, अंतकृतदशांगसूत्र, प्रश्नव्याकरणसूत्र , उत्तराध्ययनसूत्र, दशवैकालिकसूत्र, नन्दीसूत्र, उपासकदशाङ्गसूत्र, बृहत्कल्पसूत्र, श्रमणसूत्र आदि आगमों का अर्थ, गजेन्द्र व्याख्यानमाला भाग 1 से 7, कुलक संग्रह, आदर्श विभूतियाँ, अमरता का पुजारी, आध्यात्मिक आलोक, आध्यात्मिक साधना, गजेन्द्र मुक्तावली भाग 1 से 2, प्रार्थना प्रवचन, पर्युषण पर्व पदावली, पर्युषण साधना, सैद्धान्तिक प्रश्नोत्तरी, सामायिक-स्वाध्याय पाठावली, जैन स्वाध्याय सुभाषित माला, गजेन्द्र पद मुक्तावली आदि। इस प्रकार उन महामना ने मानव मात्र पर कृपा करके साहित्य रचना का महनीय कार्य करके अनुगृहीत किया है।

आचार्यश्री सामायिक-स्वाध्याय के रूप में सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र के प्रबल प्रेरक थे। स्वाध्याय के द्वारा सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान की सुदृढ़ नींव बनती है और सामायिक के रूप में सम्यक् चारित्र के सुन्दर महल का निर्माण होता है, जिसके सिंहासन पर आत्मज्ञानी, सर्वज्ञ, केवलज्ञानी आत्मा विराजित होती है। इस प्रकार गुरुदेव ने अपने भक्तों, अनुयायियों को सामायिक और स्वाध्याय के मार्ग पर अग्रसर करके उन्हें सहज ही मोक्षमार्ग पर अग्रसर किया है। अति दुर्लभ और कठिन मोक्षमार्ग को जन-जन के लिए सहज और सरल रूप में प्रशस्त किया है।

अप्रतिम ज्ञानमय, अनवरत क्रियाशील थे, वो वरदायी।
श्रद्धेय आचार्यश्री हस्ती, गुरु हमारे प्रेरणादायी।।

-द्वारा पत्नी श्री नरेन्द्र डागा, 14 व्हाइट हाउस, पाली (राजस्थान)

- श्रद्धा का बल हो तो आपका स्मरण, सामायिक, नवकारसी, पौरसी आदि भी एक नहीं, हजारों-लाखों वर्षों के नारकी के बन्धन तोड़ने वाली है।
- सम्यक् श्रद्धा के अभाव में सारी धर्मक्रियाएँ अधूरी हैं।

-आचार्यश्री हीरा

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 35
ISSN 2249-2011

युवा-स्तम्भ

आचाराङ्ग के आधार पर एक सफल व्यक्ति के गुण

श्री निपुण डागा

जिस प्रकार बन्दूक चलाने के लिए बन्दूक का पाउडर (बारूद) जरूरी है, जबकि बन्दूक का पाउडर, गोली चलाते समय हमें दिखता नहीं है, फिर भी उसके बिना बन्दूक नहीं चलाई जा सकती। ऐसे ही हम किसी बड़े पेड़ को देखते हैं तो जिसकी वजह से वह बड़ा बनता है, ऊँचा बनता है तो उसके लिए पेड़ की जड़ें मजबूत होनी बहुत जरूरी हैं।

इसी तरह किसी बड़ी इमारत को बनाने के लिए उसकी नींव का मज़बूत होना आवश्यक है। ठीक उसी प्रकार यदि हमें हमारे जीवन को सफल बनाना है, कामयाब होना है तो हमें भगवान के द्वारा बताए गए 11 गुण अपनाकर हमारे जीवन-महल की नींव को मज़बूत करना होगा। फिर हमें सफल व्यक्ति बनने से कोई नहीं रोक सकता।

जिस प्रकार बारुद, जड़ें और नींव दिखती नहीं है, ठीक उसी प्रकार ये 11 गुण जिनकी हम चर्चा करने वाले हैं, वे आपको दिखेंगे नहीं, क्योंकि ये अदृश्य हैं। यह हमारा दृष्टिकोण है, यह हमारे जीने का तरीका है, जो हमें दिखता नहीं है। लेकिन वह ही एक ड्राइविंग सोर्स बनता है, जो हमें बहुत सफल व्यक्ति बनायेगा।

आचाराङ्गसूत्र में भगवान महावीर ने 11 गुण भिक्षु के लिए बताए हैं, परन्तु भगवान की वाणी हम जैसे अज्ञानी साधक/गृहस्थ लोगों के लिए भी पूरी उपयोगी होती है।

आचाराङ्गसूत्र के द्वितीय अध्ययन के पाँचवें उद्देशक में भिक्षु के 11 गुण बताए हैं। ये गुण होने पर ही वह भिक्षु सफल होगा, मोक्षगामी होगा। ठीक इसी प्रकार ये 11 गुण हमें अपने गृहस्थ जीवन में अपनाने चाहिए, जिससे हमारा जीवन भी सफल हो सके।

1. कालण्णे-कालण्णे अर्थात् कालज्ञ। भिक्षा के उपयुक्त समय को जानने वाला अथवा प्रत्येक आवश्यक क्रिया को करने का उपयुक्त समय जानने वाला, समय पर अपना कर्त्तव्य पूरा करने वाला कालज्ञ होता है।

हर कार्य का एक समय निश्चित होना चाहिए जैसे हमारे सोने का समय, खाने का समय, स्वाध्याय करने का समय। भगवान ने हमें उत्तराध्ययनसूत्र के 26वें अध्ययन में भिक्षु के लिए समय-सारणी बताई है कि उन्हें क्या-क्या चीजें कब करनी चाहिए। जैसे कि दिन के पहले प्रहर में स्वाध्याय, दूसरे प्रहर में ध्यान, तीसरे प्रहर में गोचरी और चौथे प्रहर में पुनः स्वाध्याय।

भगवान ने भी सभी कार्यों का समय निर्धारित करके दिया है। उसी प्रकार हम सभी को भी हमारे प्रत्येक दिन की समय-सारणी तैयार करनी चाहिए। प्रतिदिन के कार्यों की सूची बनाना जरूरी है, क्योंकि उससे हमें पता रहता है कि हमें दिन भर में क्या-क्या कार्य करने हैं।

हम किसी भी सफल व्यक्ति को देखेंगे तो पता चलेगा कि वह समय को कितना महत्त्व देता है। हमने बहुत सारे सन्त-भगवन्तों का जीवन बहुत करीब से देखा है, हम आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा., आचार्यश्री हीराचन्द्रजी म.सा. और बड़े-बड़े साधकों का जीवन देखते हैं कि वे अपने समय के कितने पाबन्द होते हैं।

आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. के जीवन के बारे में सुना है कि उनका लघुशंका एवं दीर्घशंका का भी समय निश्चित होता था। पानी पीने तथा खाना खाने का समय भी निश्चित होता था। हम सोच सकते हैं कि उन महापुरुष का समय प्रबन्धन कैसा होगा।

कहते हैं-"जो समय की पूजा करता है, समय भी उसकी पूजा करता है।" भगवान ने 11 गुणों में से 3 गुण

काल से सम्बन्धित बताये हैं। हम सभी ने 'जेफ बेजोस' जो कि अमेजन कम्पनी के संस्थापक हैं, के बारे में सुना होगा। उनका कहना है कि समय अधिक नहीं चाहिए, प्राप्त समय में अधिक क्रियाशीलता चाहिए अर्थात् समय ज्यादा नहीं, उसी समय में हमारी क्षमता बढ़ जानी चाहिए।

वर्ष 2017 में नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों ने भी सर्केडियन रिदम के द्वारा यह खोज की है कि हमारे शरीर की भी एक आन्तरिक घड़ी होती है। अगर हम उस घड़ी के अनुसार अर्थात् प्रकृति ने जिस कार्य का जो समय निर्धारित किया है, उसके अनुसार हम हमारा खान-पान, निद्रा और दिनचर्या पूरी नहीं कर रहे हैं तो उसका असर हम पर शारीरिक एवं मानसिक रूप से पड़ता है। अत: हम समय को जानें, समझें एवं उसके अनुसार सभी कार्य करें।

2. बलण्णे–अपनी क्षमता का पूरा सदुपयोग करना। किसी भी चीज में देखा-देखी न करते हुए, प्रकृति द्वारा प्राप्त जो शक्ति, सामर्थ्य है उसके अनुसार कार्य करना।

यदि कोई तपस्या करता है, जैसे किसी ने अठाई की, किसी ने मासखमण किया तो ऐसा नहीं कि इसने किया तो मैं भी करूँ। हाँ, ऐसा करने की भावना रखनी चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं है कि प्रतिस्पर्धा करने लग जाय कि इसका नाम हुआ है तो मेरा भी नाम होगा।

भगवान कह रहे हैं-'बलण्णे' अर्थात् जो भिक्षु (या सफल व्यक्ति) होता है उसे पता है कि मेरी क्या खूबी है, मेरी क्या शक्ति है, मेरा क्या दायरा है, वह सब जानता है। अधिकतर यह देखा जाता है कि दूसरों की बढ़ती को देखकर हमें ईर्ष्या भाव आने लग जाते हैं। बलण्णे से हमें सीखना है कि दूसरों की बढ़ती को देखकर हमें ईर्ष्या भाव नहीं, बल्कि प्रमोद भाव आना जरूरी है। जब मैं छठी कक्षा में था, मैं रैंकर्स में से था और मुझे हमेशा तृतीय स्थान आता था। मेरे सबसे अच्छे दोस्त का द्वितीय स्थान आता था। वैसे तो वह मेरा परम मित्र था, पर मुझे उसका द्वितीय स्थान देखकर ऐसा लगता था कि कैसे भी करके मैं द्वितीय या प्रथम स्थान पर आ जाऊँ, मुझे तृतीय स्थान आने की खुशी नहीं होती थी। मैं बस यह सोचता था कि मैं उससे आगे बढ़ जाऊँ जबकि मैं अपनी शक्ति के अनुसार कार्य नहीं करता था।

तो इस प्रकार से 'बलण्णे' द्वारा हमें यह सीखने को मिल रहा है कि यदि हम समान स्तर या बराबरी के दो लोग हैं, चाहे वे दो सन्त हों, दो बहुएँ हों, भाई हों, जो भी समान स्तर पर काम कर रहे हों, उनमें कभी न कभी ईर्ष्या की भावना आ जाती है वहाँ हमें भगवान का यह सिद्धान्त 'बलण्णे' याद रखना है। जो कह रहा है कि हमें हमारी शक्ति पर खेलना है।

श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. फरमाते हैं-

1. मिले हुए का सदुपयोग–जो हमें मिला हुआ है या जो हमसे होता है। जैसे हमसे बड़ी तपस्या नहीं होती या हमें ज्ञान नहीं चढ़ता तो कोई बात नहीं, यदि आपसे एक सामायिक होती है, आपसे एकाशन, बियासना आसानी से होता है तो आप वह कीजिए अर्थात् अपनी शक्ति के अनुसार जितना कर सकते हैं, उतना सदुपयोग कीजिए।

सिर्फ यह एक सूत्र 'मिले हुए का सदुपयोग' आपका जीवन बदल सकता है।

2. जाने हुए का आदर–जो हमने जाना है कि झूठ नहीं बोलना चाहिए, चोरी-हिंसा आदि नहीं करना चाहिए, व्यभिचार नहीं करना चाहिए, बस इसका आदर और आचरण करने लग जाओ। जितना जानते हैं उसका आचरण करो।

3. सुने हुए में आस्था/श्रद्धा–जो भगवान की वाणी हमने सुनी है, जो हम सन्त-भगवन्तों से सुनते हैं, उस पर दृढ़ श्रद्धा करना कि भगवान ने कहा है वही सत्य है-'तमेव सच्चं नीसंकं जं जिणेहि पवेइयं।' भगवान आपकी वाणी त्रिकाल में सत्य है, सत्य है, सत्य है।

भगवान की वाणी पर हमारी श्रद्धा मजबूत हो गयी

तो हमारा सम्यक्त्व भी मजबूत हो जायेगा। कहते हैं 'जहाँ श्रद्धा होती है, वहाँ शंका नहीं होती' अर्थात् भगवान ने जो कह दिया वह उत्तम है, शंका रहित है। मिले हुए का सदुपयोग, जाने हुए का आदर और सुने हुए पर श्रद्धा/आस्था यह सब 'बलण्णे' से सम्बन्धित है।

यदि हमें हमारे वास्तविक जीवन में सफल होना है तो हम जिस कार्य को करने में सक्षम हैं वह कार्य करना चाहिए। अपनी शक्ति को पहचानकर उसके अनुसार कार्य करना चाहिए, दूसरों की होडाहोड या दूसरों की शक्ति के बल पर नहीं। कुछ समय पहले जब मैं आर्टिकलशिप काल में था और एक बैंक की आडिट करता था। उस समय मेरे बॉस एवं मेरे साथी शेयर बाजार में काम करते थे और शेयर बाजार की डीलिंग करते थे। मैंने देखा कि ये लोग तो बहुत पैसा कमा रहे हैं, कोई एक दिन में 20,000/- रुपये तो कोई 50,000/- रुपये और कोई 1,00,000/- रुपये तक भी कमा रहे थे। उनको देखकर मुझे भी लगा कि अपने को भी कुछ करना चाहिए। मैं उनसे पूछने लगा कि कैसे करना, क्या करना? देखा-देखी मैं भी निवेश करने लग गया। जबकि पापा ने मना कर दिया था कि वे पहले ही शेयर बाजार में बहुत नुकसान भोग चुके हैं। अत: मुझे कुछ निवेश करने की जरूरत नहीं है। पर मैंने बोला-''पापा आपको कुछ नहीं मालूम है, हम सी.ए., एम.बी.ए., वित्तीय पेशेवर हैं। आप तो ऐसे ही कर लेते हो, हम तो जानकार हैं, हम सोच समझकर करते हैं।'' तो जब हमने प्रारम्भ में इसमें निवेश किया तो बहुत अच्छे पैसे कमाये। पहली बार में हमने चालीस-पचास हजार रुपये कमाये और बहुत खुशी हुई तथा लालच भी बढ़ा कि अब और पैसा निवेश करना है तो जब हमने दूसरी बार पैसे निवेश किये तो हमारा परिणाम निश्चित था कि अच्छे पैसे मिलेंगे, लेकिन अन्त में कुछ बैंक से सम्बन्धित कारणों की वजह से कीमत नीचे गिर गई और हमें नुकसान हुआ। फिर हमने सोचा कि कीमत नीचे गिरी है तो और खरीद लेते हैं ताकि जब कीमत बढ़ेगी तो फायदा होगा और अगले दिन यह हुआ कि कीमतें और नीचे गिर गई। ऐसे करते-करते हमारा 70,000/- रूपये का नुकसान हुआ और पापा ने कहा अब जो भी शेयर हैं उनको बेच दो तथा जितना नुकसान हुआ है, उसके लिए यह समझना कि लर्निंग है तुम्हारी।

यह हमारे जीवन की बहुत बड़ी लर्निंग रही। मैंने दूसरों के बल पर कार्य किया, जिसकी मुझे शून्य जानकारी थी। बस देखादेखी में कार्य किया। दूसरों के बल पर कार्य करने से व्यक्ति असफल होता है। इसलिए भगवान ने सफल होने के लिए रास्ता पहले ही बता दिया कि अपनी शक्ति के अनुसार कार्य करना ही 'बलण्णे' है।

3. मातण्णे-भोजन आदि उपयोग में लेने वाली प्रत्येक वस्तु का परिमाण जानने वाला। भगवान कह रहे हैं कि यदि कोई व्यक्ति सफल होना चाहता है तो उसे पता होना चाहिए कि उसे किस चीज की और कितनी आवश्यकता है। ऐसा नहीं कि अनावश्यक अतिरिक्त चीजें लाना शुरू कर दे।

यदि कोई व्यापारी है और वह व्यापार के क्षेत्र में सफल होना चाहता है तो उसे पता होना चाहिए कि उसको किनसे कच्चा माल खरीदना है, कौनसे उत्पाद खरीदने हैं, अधिक संग्रह करके नहीं रखना, क्योंकि जितना सीमित या कम से कम रखेंगे, उतना फायदे में रहेंगे। इसे ही अर्थशास्त्र में संसाधनों का इष्टतम उपयोग अर्थात् हमारे पास जो सामग्री है, उससे कैसे फायदा निकाला जा सकता है, कहा जाता है। 'मातण्णे' के सिद्धान्त में यही चीज साधुओं को पहले ही बता दी है।

'मातण्णे' के माध्यम से भगवान ने साधुओं को उद्बोधन दिया है। साधुजी को भी अलग-अलग चीजें लेनी पड़ती हैं। उनको भी वस्त्र, पात्र रखने पड़ते हैं तो ऐसे ही हमें मालूम होना चाहिए कि हमें जिन चीजों की आवश्यकता है, बस उतनी ही चीजें रखें।

आज भी हमारे समाज में ऐसे घर हैं जहाँ फ्रिज भी नहीं है और बिना फ्रिज के वे अपने घर का प्रबन्धन करते

हैं। जहाँ हम फ्रिज के बिना घर की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं वहाँ वे लोग उसके बिना रह रहे हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि आज के दिन में जितनी चीज का उपयोग करना है, वे उतनी ही लेंगे। अधिक लेंगे तो वे खराब हो जायेंगी।

हम भी इन सबसे प्रेरणा लेकर ऐसी कोशिश कर सकते हैं कि कम से कम अनावश्यक वस्तुएँ हमारे घर में न हों। जैसे हमारे पास जितने कपड़े हैं, उनसे हमारा काम चल रहा है तो हम अनावश्यक खरीददारी नहीं करें।

हमें ऐसे लोगों से प्रेरणा लेनी चाहिए जो गृहस्थ जीवन में रहते हुए अपनी धार्मिक चर्या को करते हुए अपने जीवन को पूर्णत: संयमित रखते हैं।

जब-जब हम आदर्श व्यक्तित्व को देखते हैं तो उनके जैसा बनने की कोशिश करते हैं। उनके संयमित जीवन को देखकर हम भी जिन चीजों की हमें आवश्यकता है बस उनसे ही अपना काम चलाते हैं। अनावश्यक वस्तुएँ नहीं रखना 'मातण्णे' है।

4. खेयण्णे-क्षेत्रज्ञ अर्थात् जो जहाँ रहते हैं या विचरते हैं, उस जगह के बारे में सम्पूर्ण जानकारी रखते हैं। जैसे हमारे साधु भगवन्त जिस क्षेत्र में विराजते हैं तो वहाँ के सारे रास्ते, कौन-कौनसे हमारे जैनों के घर हैं, कहाँ-कहाँ गोचरी जाना है, कहाँ-कहाँ विचरना है, इन सबका चित्र उनके दिमाग में अंकित हो जाता है। यह उनकी विशेषता होती है, क्योंकि साधु को तो घर-घर पर जाना होता है उनको मालूम होना चाहिए, कौनसी चीज कहाँ मिल सकती है, उनके अनुकूल वस्त्र, पात्र जो सभी जगह नहीं मिलते तो जो अनुभवी साधु होते हैं उन्हें पता होता है कौनसी चीज कहाँ मिल सकती है।

यही गुण 'खेयण्णे' हम व्यावहारिक जीवन में भी लागू कर सकते हैं। आजकल एक शब्द आता है Street Smart (समझदार व्यक्ति) कई लोगों को आज भी रास्ते याद नहीं रहते, भूल जाते हैं, ऐसा क्यों? क्योंकि अभी हम 'खेयण्णे' नहीं हुए हैं, क्षेत्रज्ञ नहीं हुए हैं और वहीं दूसरी ओर कई लोग उत्कृष्ट स्मृति वाले होते हैं। उनको हर एक रास्ते, हर एक चीज याद रह जाती है, क्योंकि वे 'खेयण्णे हैं', वे उन सब चीजों के बारे में ज्ञानी हैं।

आजकल के बच्चों में ये गुण होने चाहिए, किन्तु आजकल हम 'गूगल' के सहारे हो गये हैं। गूगल के मानचित्र पर हर चीज डाल देते हैं और हमें रास्ता मिल जाता है।

हमें हमारे मानचित्र स्वयं भी तैयार करने आने चाहिए। भगवान कह रहे हैं खेयण्णे हो जाओ, ज्ञानी हो जाओ।

खेयण्णे का दूसरा अर्थ है खेदज्ञ अर्थात् दूसरों के दु:ख एवं पीड़ा आदि को समझने वाला। यह बहुत महत्त्वपूर्ण अर्थ है कि जो 'खेयण्णे' होता है वह सामने वाले व्यक्ति को देखकर समझ जाता है कि यह व्यक्ति उदास है, परेशानी में है। खेयण्णे जो होता है, वह ऐसा कोई कार्य नहीं करता, जिससे दूसरों को दु:ख या पीड़ा हो। दु:खी व्यक्ति के दु:ख को दूर करने वाला भी खेयण्णे होता है, यह गुण हर किसी में नहीं हो पाता।

आजकल अवसाद के बहुत मामले चल रहे हैं। भारत में 2016 में नेशनल सर्वे हुआ और उसमें पता चला कि भारत में हर एक घण्टे में एक युवा आत्महत्या करता है। हम यह समझ सकते हैं कि किस हद तक वे अवसाद, तनाव या तरह-तरह के दबाव में चलते रहते हैं। जो जितना सजग है अपने आत्म भावों के बारे में, अपनी काया, अपने क्षेत्र के बारे में तो वह 'खेयण्णे' है। एक तो बाहरी क्षेत्रज्ञ होता है, जिसे बाहरी चीजों का ज्ञान हो और एक भीतरी क्षेत्रज्ञ होता है। आचाराङ्गसूत्र की गाथा में आता है-**आयतचक्खू लोकविपस्सी** अर्थात् जो लोक की विचक्षणा करना जानता है। जिसे आन्तरिक आत्मभावों का ज्ञान होने लगता है और जुड़ाव टूटने लगता है, ऐसी सजगता खेयण्णे है।

हमें हमारे आसपास के लोगों को देखना चाहिए कि कोई परेशानी में है या तनाव में है तो उन्हें हम सुनें, उनकी तकलीफ दूर करने की कोशिश करें। हम उनके लिए खेयण्णे बनें; यह हमारा कर्त्तव्य है। जैसे कोई हमारा

कर्मचारी है और वह दु:खी है तो उसकी बात सुनें, समझें और उसके दु:ख को दूर करें। इसके लिए आजकल बड़ी-बड़ी कम्पनियों में भावनात्मक बुद्धिमत्ता पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है। भावनात्मक बुद्धिमत्ता का अर्थ भी यही है कि एक व्यक्ति कितना 'खेयण्णे' है। वह दूसरों के दु:खों को, दूसरों की भावनाओं को कितना जल्दी समझ लेता है और उनके अनुसार अपनी टीम को प्रबन्धित करता है। इसीलिए बड़ी कम्पनियों में नेतृत्व क्षमता उन्हीं व्यक्तियों को दी जाती है जिनमें उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता होती है और आज का कॉर्पोरेट जगत् इसी मान्यता पर अपने नेतृत्व की पहचान करता है। इसीलिए भगवान ने हमें ऐसे गुण बताए हैं जो हमें सफल बनाते हैं।

आजकल के 90 प्रतिशत लोगों को सिर्फ हम सुन लेते हैं, उससे भी उनका दु:ख कम हो जाता है, क्योंकि आजकल लोगों की सुनने वाला कोई है ही नहीं, इसीलिए भगवान कहते हैं 'खेयण्णे' बनो।

5. खणयण्णे-खण अर्थात् क्षण/समय। खणयण्णे अर्थात् समय को जानने वाला। समय काल की सबसे छोटी इकाई है। समय अविभाज्य है।

इसीलिए भगवान महावीर गौतम स्वामी को कहते हैं-**'समयं गोयम! मा पमायए'** अर्थात् हे गौतम! समय मात्र का भी प्रमाद मत करो। एक मिनट, एक सेकण्ड भी बर्बाद नहीं होना चाहिए। इस लाइन को सुनकर इस स्तर की क्षमता आ जानी चाहिए।

हम कितना समय मोबाइल फोन में बर्बाद करते हैं, जबकि इतने शास्त्र, ग्रन्थ और आगम हैं, क्यों मैं इन सब को नहीं पढ़ रहा, क्यों मैं समय बर्बाद कर रहा हूँ?

खणयण्णे वर्तमान उपहार है अर्थात् जो वर्तमान में है वह सबसे बड़ा उपहार है, इसलिये समय को जानो।

भगवान कह रहे हैं कि यह मनुष्य भव दुर्लभ है, बार-बार नहीं मिलने वाला। भगवान मनुष्य जीवन की महत्ता बताते हैं कि इसका सदुपयोग करो और समय को जानो।

केवली भगवान से एक शिष्य पूछता है कि भगवान मेरी कितनी उम्र शेष है या मेरे कितने भव हो चुके हैं। तो भगवान फरमाते हैं कि तू अब जितने साल जीयेगा, तेरे उतने भव हो चुके हैं। (जैसे 70 साल की आयु होगी तो 70 भव हो चुके होंगे) तो शिष्य बोलता है कि इतने ही भव हुए हैं क्या?

भगवान फरमाते हैं कि नहीं, तेरे 70 भव नहीं, जितनी मेरी आयु है और मेरे जीवन पर्यन्त तक तेरे ही भव बताता रहूँ, उतने तेरे भव हो चुके हैं। तो फिर शिष्य बोलता है कि इतने ही भव हुए हैं क्या भगवन्? तो भगवान फरमाते हैं कि नहीं। मेरे जैसे 23 तीर्थंकर भगवान उनके पूरे जीवन काल तक तुम्हारे भव बताते रहे, उतने तुम्हारे भव हो चुके हैं। शिष्य के पूछने पर पुन: भगवान फरमाते हैं कि नहीं-नहीं सुन। अनन्त चौबीसी हुई हैं उनके सभी भवों में अगर लगातार तेरे भव बताते रहें, उतने भव हुए हैं, तो फिर शिष्य बोलता है कि इतने ही भव हुए हैं क्या भगवान? तो भगवान कहते हैं कि नहीं। एक समुद्र है और समुद्र के एक तट पर कौआ है। कौआ वहाँ अपनी चोंच से पानी पी रहा है और एक बूँद पानी उसने अपने मुँह में लिया। जितनी एक बूँद कौए ने अपने मुँह में ली है, बस उतने ही जन्म मैंने तेरे बताये हैं और यह जितना विशाल समुद्र दिख रहा है उतने भव तो मैंने तेरे बताये ही नहीं।

हम इस दृष्टान्त के माध्यम से समझ सकते हैं कि हमारे जीव ने कितने भव किये हैं। हम संख्या में उनकी गणना नहीं कर सकते और इतने जन्मों बाद हमें यह मानव भव मिला है। अब मुझे एक समय भी बर्बाद नहीं करना है।

इसीलिए भगवान कहते हैं 'खणयण्णे' बनें और समय को जानें। अपने समय को सद्कार्यों में लगायें, इससे आपका जीवन स्वत: ही उन्नति की ओर अग्रसर होगा।

मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. फरमाते हैं-''हर समय कोई काम होना चाहिए और हर काम का कोई समय होना चाहिए।''

6. विणयण्णे–जीवन में सफल होने के लिए विणयण्णे अर्थात् विनय होना बहुत ही आवश्यक है। विनय के बिना हम जीवन में कभी आगे नहीं बढ़ सकते। यदि आप किसी क्षेत्र में आगे बढ़ भी गये, विशेषज्ञ हो गये और फिर भी आप में विनय गुण प्रकट नहीं हुआ, आप झुके नहीं तो समझ लेना आपके वे गुण धीरे-धीरे समाप्त हो जायेंगे।

यह बहुत जरूरी है कि हम जितने ऊँचे/बड़े बनें उतने ही विनम्र बनें। भले ही हमारे में ज्यादा ज्ञान नहीं हो, परन्तु विनय गुण होना ही चाहिए। कहते हैं-

'विद्या ददाति विनयं, विनयाद् याति पात्रताम्।
पात्रत्वात् धनमाप्नोति, धनात् धर्मं ततः सुखम्।।

जब विनय आ जाता है तो पात्रता भी आ जाती है, पात्रता आने पर पैसा अपने आप आ जाता है और जो विनयवान होता है उसे कभी पैसे की टेंशन नहीं होती, क्योंकि उसकी मानसिक शान्ति सदैव बरकरार रहती है।

यदि व्यक्ति के जीवन में विनय गुण नहीं हो तो बाकी सारे गुण अपने आप समाप्त हो जायेंगे। विनय समस्त गुणों की नींव है।

उत्तराध्ययनसूत्र के पहले अध्ययन 'विनयश्रुत' में विस्तार से इसका विवेचन मिलता है।

विनयज्ञ कौन? ज्ञान, दर्शन, चारित्र का विनय करने वाला विनयज्ञ कहलाता है।

जिसे व्यवहार के औचित्य का ज्ञान हो और जो लोक-व्यवहार का ज्ञाता हो अर्थात् जिस समाज में हम रहते हैं उसकी हमें जानकारी होनी चाहिए और उसके अनुसार कार्य होना चाहिए, उसके अनुसार हमारा आचार-विचार होना चाहिए। हमारा आचरण, हमारे सम्बन्ध भी वैसे ही होने चाहिए। वैसा व्यक्ति या साधु लोक-व्यवहार का ज्ञाता होता है। आजकल के बच्चों में ऐसा अधिक चलता है कि 'मेरा जीवन, मेरे नियम।' जबकि ऐसा नहीं होना चाहिए। भगवान कहते हैं, 'विणयण्णे' बनो, लोक व्यवहार के ज्ञाता बनो और सबको समझकर, सबको साथ लेकर चलो। इसीलिए कहा जाता है-व्यवहार में तो अपनत्व और निश्चय में एकत्व ऐसी हमारी साधना होनी चाहिए अर्थात् हमारा व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि सबसे अपनत्व हो। **मित्ती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झं न केणइ।**

विनय का एक अर्थ आचार भी बताया गया है अर्थात् जो हम सुनते, समझते और जानते हैं, उसका आचरण करना।

7. कालाणुट्ठाई–कालानुष्ठायी अर्थात् समय पर उचित उद्यम एवं पुरुषार्थ करने वाला। जो सही समय पर सही चीज करता है वह होता है कालाणुट्ठाई।

श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. कहते हैं-लक्ष्य पर दृष्टि, भावों की पवित्रता और कार्य में कुशलता। कार्य में कुशलता 'कालाणुट्ठाई' का गुण है। जो कार्य जिस समय पर किया जाना चाहिए उसी समय पर करना। इसीलिए कहते हैं-सही बात, सही समय और सही जगह पर होनी चाहिए।

संसार में समय बहुत महत्त्व रखता है। गाथा में भी आता है-

सुत्तेसु यावि पडिबुद्ध जीवी, ण वीससे पंडिए आसुपण्णे।
घोरा मुहुत्ता अबलं सरीरं, भारण्डपक्खीव चरेऽप्पमत्तो।।

(उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 4, गाथा 6)

अर्थात् साधु को आसुपण्णे (आशुप्रज्ञ) होना चाहिए, जो शीघ्रता से समझ जाए कि किस समय पर किस काम को करना है। यदि हम अपने कार्य यथासमय करें तो हम अपने कार्य में विशेषज्ञता हासिल कर लेते हैं। सही समय पर अवसर को पकड़ना कालाणुट्ठाई है।

8. भावण्णे–भावज्ञ अर्थात् जो व्यक्ति के भाव, चित्त के अव्यक्त आशय को चेष्टा एवं विचारों से ध्वनित होते हुए गुप्त रूप से समझ लेता है वह भावज्ञ होता है।

जैसे वैयावृत्त्य करते समय गुरु को समझाना पड़ रहा है कि यह काम कर लो, तो समझना कि अभी हम गुरु को और उनके इशारों को समझ नहीं पाये।

जो 'भावण्णे' होते हैं वे चेहरे पर दिखने वाले

हाव-भाव को समझ जाते हैं। सामने वाला व्यक्ति क्या बोलना चाह रहा है या किसी को कोई चीज पसन्द नहीं आ रही है तो इसको भावज्ञ बिना बोले जान लेता है। जब तक कार्य में गोपनीयता नहीं होगी, तो कार्य में सफलता नहीं मिल पायेगी। इतनी गोपनीयता से हमारा काम होना चाहिए कि बिल्कुल भी दिखावा न हो। काम का बखाण कर दिया, मतलब काम नहीं किया। 'काम करो और दरिया में डालो।'

चाहे हम सेवा कर रहे हों, व्यापार कर रहे हों जितना गुप्त रूप से करेंगे, चाहे हम किसी की वैयावृत्य कर रहे हों तो उस व्यक्ति को भी मालूम नहीं पड़ना चाहिए अर्थात् आपके मुँह से इस बात की चर्चा नहीं होनी चाहिए कि आपने सेवा की।

इसीलिए उत्तराध्ययनसूत्र के 35वें अध्ययन में 17वीं गाथा आती है-

अच्चणं रयणं चेव, वंदणं पूयणं तहा।
इड्ढी सक्कार सम्माणं, मणसा वि ण पत्थए।।

अर्थात् मेरी ऐसी दशा हो कि सत्कार, सम्मान, वन्दन, पूजन की मेरे मन में भी इच्छा/ चाह न हो अर्थात् मेरे मन में ऐसे भाव भी न हों, तब व्यक्ति आगे बढ़ पाता है। इसीलिए कहते हैं भावण्णे अर्थात् जो सामने वाले के मन के भावों को जान लेता है। ऐसी गुणवत्ता एक सफल व्यक्ति के पास होती है।

अपने गुरुजन, बड़े जन या नियमित रूप से जो साथ रहते हैं, उनके भावों को समझकर हम अवश्य भावज्ञ हो जायेंगे।

9. परिग्गहं अममायमाणे-यहाँ परिग्रह का अर्थ शरीर एवं उपकरण लिया गया है। जो साधु होता है, वह शरीर एवं उपकरणों पर मूर्च्छा एवं ममत्व नहीं रखता। यह साधु का एक विशेष गुण है कि जहाँ साधु रहते हैं, उनके पास वस्त्र, पात्र आदि जो भी चीजें हैं, वे उनके प्रति ममत्व नहीं रखते। उन्हें किसी प्रकार का लोभ, आसक्ति और जुड़ाव नहीं होता है।

'सुत्तेसु यावि पडिबुद्ध जीवी' अर्थात् साधु अनेक प्रकार के लोगों के बीच रहते हैं, अनेक लोगों से मिलते हैं। जो मोह में डूबे हुए हैं, जुड़ाव में डूबे हुए हैं, मोह की नींद में सोये हुए हैं, ऐसे लोगों से प्रतिदिन मिलते हैं, परन्तु साधु तो प्रतिबुद्ध जीवी हैं वे भीतर से अलिप्त हैं, वे बाहर में मोह में डूबे हुए लोगों के साथ रहते हुए भी अन्दर से एकत्व की साधना में रहते हैं।

जो निश्चय में एकत्व में रहते हैं वे बाहर से सबको अपनत्व देते हैं, आत्मीयता देते हैं, परन्तु अन्दर से साधना में रत हैं, क्योंकि उन्हें किसी से जुड़ाव ही नहीं है।

प्रसिद्ध विचारक, ध्यानी श्री कन्हैयालालजी लोढ़ा साहब 93 वर्ष की उम्र में भी फटाफट सीढ़ियों से ऊपर-नीचे आ जाते थे। उनसे पूछते थे कि आपको इतनी एनर्जी कहाँ से आई? तो वे उत्तर देते हैं कि मैं कभी शरीर से जुड़ता ही नहीं हूँ, जो शरीर से जुड़ता है, उसे थकान होती है। मैं शरीर से जुड़ता नहीं हूँ, इसीलिए मुझे थकान नहीं होती। हम हमारे साधु-सन्तों को देखते हैं, वे इतने एकाशन, बियाशन, एकान्तर आदि तपस्याएँ करते हैं, क्योंकि उनका शरीर से जुड़ाव नहीं होता है।

शक्ति खाने-पीने से नहीं आती। शक्ति तो हमारा शरीर से जुड़ाव कैसा है, उस पर निर्भर है। हम जितनी आसक्ति, जुड़ाव रखते हैं, शरीर से उतनी ही हमारी एनर्जी समाप्त होती जाती है और यदि हम शरीर से जुड़ाव, ममत्व नहीं रखते हैं, परिग्रह नहीं रखते हैं तो हमारे भीतर ऊर्जा आती है। हमें किसी चीज से जुड़ाव (मोह) नहीं रखना है, क्योंकि दशवैकालिकसूत्र में कहा है-**कामे कमाहि कमियं खु दुक्खं** अर्थात् जहाँ कामना है, वहाँ दुःख है। यह संसार का नियम है कि जहाँ कामनाएँ और मोह है, वहाँ निश्चित ही दुःख है।

हम यदि दुःख नहीं चाहते हैं तो किसी भी चीज से जुड़ना ही नहीं, परिग्रह रखना ही नहीं है।

जीवन बहुत सरल है, हम इसे कठिन बनाते हैं। इसे कठिन मत बनाओ। कोई भी काम करो, जुड़ो मत, श्री सुशीलजी वैद्य वैयावृत्त्य का अर्थ बताते हुए कहते हैं-'वैयावृत्त्य अर्थात् जिसकी पुनः आवृत्ति नहीं हो

अर्थात् यदि हमने किसी की सेवा की, मैंने किसी को कुछ दिया, सम्मान दिया, किसी को दान दिया या आज मेरी बदौलत कोई खड़ा हुआ है, या मैंने किसी को ज्ञान दिया, इसीलिए वह सीख रहा है, अगर यह आवृत्ति भी हमारे सामने आ गई तो हमारी वैयावृत्त्य नहीं, वह हमारी स्वार्थ पूर्ति थी।

हमारी ऐसी साधना हो कि सेवा करने के बाद उसकी छवि भी सामने न आए। ऐसा करेंगे तब महान् कर्मों की निर्जरा होगी। नहीं तो, वैयावृत्त्य भी हमारे लिए प्रशंसा का एक साधन बन जायेगा और सेवा का काम भी हमारे लिए कर्मबन्ध का कारण बन जायेगा।

इसीलिए वैयावृत्त्य करें और उसकी आवृत्ति भी न आए, ऐसी हमारी भावना होनी चाहिए।

इसीलिए 'परिग्गहं अममायमाणे' अर्थात् कोई भी काम हो, हम बिना परिग्रह, बिना जुड़ाव के करें। जितना हम परिग्रह कम करेंगे, जितना हम अपने हाथ से दान करेंगे, उतना लाभ हमें मिलेगा। अपनी धन-सम्पत्ति आने वाली पीढ़ी के लिए सञ्चय मत कीजिए। मारवाड़ी में कहावत है-**पूत सपूत तो क्यूँ धन सञ्चै, पूत कपूत तो क्यूँ धन सञ्चै** अर्थात् पूत सपूत है तो उसके लिए धन का सञ्चय क्यों करना, उसकी पुण्यवानी से वह स्वयं कमा लेगा और यदि पूत कपूत है तो भी धन सञ्चय क्यों, वह तो वैसे भी बर्बाद करेगा।

जितना पैसा/परिग्रह आपके पास है, उसे स्वयं कम करें, क्योंकि जो हम देंगे वह हमारी निर्जरा करवायेगा, वह हमारे आगे का आरक्षण करायेगा।

इसीलिए परिग्रह को यहीं छोड़ें, शरीर एवं खाने से ममत्व तोड़ें। अभी से इसका अभ्यास करें।

10. समयण्णे-समयण्णे अर्थात् जो अपने सिद्धान्तों के बारे में जानता है। जो अपनी परम्परा को जानता है वह होता है समयण्णे।

गुरु भगवन्त फरमाते हैं-'सिद्धान्त से समझौता नहीं और व्यवहार में कटुता नहीं।'

अपने सिद्धान्त पर दृढ़ रहना और किसी को कभी नीचा नहीं दिखाना। यदि हम किसी को नीचा दिखा रहे हैं कि हम जैन हैं, हम ऊँचे हैं, हमारा धर्म इतना महान् है, तुम तो ऐसे हो, नीचे हो या उनको निम्न श्रेणी का दिखाना। तो समझना आप कट्टरवादी हो, दृढ़वादी नहीं हो।

भगवान ने कहीं भी कट्टरवाद की प्ररूपणा नहीं की है, उन्होंने हमेशा दृढ़ता की प्ररूपणा की है और आगम में कथन है कि जीव अन्यलिङ्ग से भी मोक्ष गये हैं ऐसा नहीं है कि सिर्फ हमारे लिंग से ही मोक्ष गये हैं।

कभी भी कोई भी निर्णय देते समय हमें ध्यान रखना है कि हम कट्टरवादी नहीं दृढ़धर्मी श्रावक हैं। इसीलिए हमें ऐसा कोई निर्णय नहीं देना कि ये मिथ्यात्वी हैं, ये सम्यक्त्वी हैं, ये कट्टरवादी हैं और ये जैन ही नहीं हैं। कोई यह भी बोल देते हैं कि ये साधु ही नहीं हैं। हम किस आधार पर ऐसा निर्णय दे सकते हैं और अपने निर्णय में कभी भी कट्टरपना नहीं लायें, अपितु दृढ़ रहें।

मान लीजिए आपसे किसी ने कह दिया कि मेरे साथ शराब पी लीजिए, मैं आपके साथ व्यापारिक सौदा करूँगा। तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार हो जायेगा और तुम्हें अच्छा फायदा दिलाऊँगा। बस तुम मेरे साथ ड्रिंक कर लो और मांसाहार कर लो, तो क्या हम हमारे सिद्धान्तों में समझौता करेंगे। क्या उस लालच के लिए हम अपने सिद्धान्तों को छोड़ेंगे? बिल्कुल नहीं। हम अपने सिद्धान्तों के साथ कभी समझौता नहीं करेंगे, परन्तु हम व्यवहार में भी उनके साथ कटुता एवं द्वेष नहीं रखेंगे।

आजकल हमारे धर्म में भी अलग-अलग मत एवं परम्परा को लेकर लोग भिड़ते रहते हैं। किसी और के सिद्धान्त कुछ और हैं और बाकी दूसरे के कुछ और। हमें इन सबमें उलझना नहीं है कि इनकी परम्परा में ऐसा होता है, हमारी परम्परा में ऐसा होता है। मेरी ऊँची परम्परा है, इनकी नीची परम्परा है। अगर हम यह सब कर रहे हैं तो मतलब अभी तक हमने धर्म को समझा ही नहीं है। हमें उन पर करुणा के भाव आने चाहिए कि उन्होंने धर्म को जाना और समझा नहीं है, बस देखा-

देखी में लड़ने लग गये हैं। इसीलिए हमें अपनी बात, अपने सिद्धान्तों से समझौता नहीं करना है, अपितु उन पर दृढ़ता रखनी है। शास्त्र में भी दृढ़धर्मी श्रावक का ही वर्णन मिलता है, कट्टरवादी का नहीं।

11. अपडिण्णे–अप्रतिज्ञा अर्थात् किसी चीज का निदान नहीं करने वाला। उत्तराध्ययनसूत्र के 35वें अध्ययन की गाथा 18 में कहा है–

सुक्कज्झाणं झियाएज्जा, अणियाणे अकिंचणे।
वोसट्ठकाए विहरेज्जा, जाव कालस्स पज्जओ।।

अर्थात् जो साधु शुक्लध्यान में रहता है वह निदान नहीं करता। निदान अर्थात् जैसे मैंने आज सामायिक की तो मुझे उसका फल मिलना चाहिए कि मेरी अच्छी कमाई हो। आज मैंने साधुओं की सेवा की तो मेरी पुण्यवानी इतनी बढ़ जानी चाहिए कि मेरा एक बड़ा बंगला हो और मेरा आज तक जितना भी धर्म का फल हो तो उसमें मुझे करोड़ों की सम्पत्ति, सुख-सुविधा मिल जानी चाहिए। ऐसी चाहना करना निदान है। निदान करना अर्थात् हीरे के समान मूल्यवान वस्तु को कोड़ी/मिट्टी के भाव बेचना। इतने मूल्यवान धर्म को ऐसी तुच्छ वस्तुओं की चाहना में बेच देना निदान है।

गीता में भी वर्णन चलता है–**कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन** अर्थात् कर्म कर, फल की चिन्ता मतकर। भगवान भी यही कहते हैं कि निदान मत कर।

इसीलिए जो सफल व्यक्तित्व होते हैं या सफल बनना चाहते हैं वे निरन्तर गतिशील होकर धैर्यपूर्वक काम करते रहते हैं, अपेक्षा नहीं रखते कि प्रतिफल में कुछ प्राप्त होगा। जब काम पूरी शिद्दत, पूरे मन से किया जाता है तो परिणाम शत-प्रतिशत मिलता है।

जाँचे सुर तरू देह सुख, चिन्तित चिन्ता रैन।
बिन जाँचे बिन चिन्तिये, धर्म सकल सुख दैन।।

अर्थात् धर्म कार्य कभी बेकार जाने वाले नहीं हैं, धर्म तो सुख देने वाला है। यहाँ अप्रतिज्ञा का एक अर्थ अभिग्रह भी आता है, अर्थात् भिक्षु अभिग्रह भी धारण करने वाला होता है। जैसे कोई तपस्या करते हैं तो पारणे में कुछ भी छोटा सा अभिग्रह धारण करे।

अभिग्रह मतलब अगर ये काम होगा तो मैं पारणा करूँगा। ऐसा करना निदान नहीं अभिग्रह है। जैसे हम अभिग्रह लें कि यदि सन्त-गोचरी पर पधारें तो मैं पारणा करूँगा या किसी ने ऐसा कहा तो पारणा करूँगा, तो ये होता है अभिग्रह। ऐसे कई अभिग्रहधारी साधक भी होते हैं।

अभिग्रह बताता है कि आप दृढ़ता वाले बनो, हल्के मत बनो, क्योंकि हमें सफल होना है तो दृढ़ बनना पड़ेगा, दृढ़ता लानी होगी। अप्रतिज्ञा का एक और अर्थ है कि वह किसी भी चीज में अग्रणी नहीं होता है। वह व्यक्ति प्रत्येक चीज को अनेकान्त दृष्टि से देखता है, वह अपडिण्णे होता है। कभी हम किसी चीज में आग्रह बुद्धि ले आते हैं कि नहीं ऐसा तो ऐसे होना चाहिए, मैं बोलूँ वैसा हो, ऐसा नहीं होना चाहिए। इसीलिए गुरुदेव कहते हैं-'कुछ मत सीखो, सीखो सबसे पहले मन का दृढ़ निश्चय करना।'

आज भी हमारे जिनशासन में ऐसे तपस्वी साधक हैं जो अपने मन को दृढ़ करके अभिग्रह धारण करते हैं और जब तक अभिग्रह नहीं फलता, तब तक तपस्या बढ़ाये जाते हैं। हमें ऐसे तपस्वी साधकों के प्रति अहोभाव आना चाहिए कि ऐसे महान् साधक हमारे जिनशासन में मौजूद हैं।

हम भी हमारे जीवन में कुछ चीजों को लेकर कामनामुक्त हों। जैसे हमें कोई काम करना है तो उसकी समय सीमा बाँधो कि जब तक यह काम नहीं होगा तब तक मैं अमुक चीज का त्याग कर दूँगा या किसी से बात नहीं करूँगा। तो वह कार्य जल्दी होगा। हमें अपने कार्य में कामनामुक्त होना, अभिग्रह लेना और मजबूती लाना है।

ऐसा करने से हम अपने जीवन में सफल हो जायेंगे। ये जो 11 गुण भगवान ने आचाराङ्गसूत्र में फरमाए हैं, यदि हम इन्हें अपने जीवन में अपनायेंगे तो निश्चित ही हम सफल होंगे।

-बी-13, सेठी कॉलोनी, जयपुर-302004
(राजस्थान)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 44
ISSN 2249-2011

English-section

Voluntary Death in Non-Jaina Traditions with Special Reference to Sallekhanā

Dr. S. P. Pandey

Sallekhanā, a highly respected practice among the Jains has got a prime place in Jaina ethics. It is a Jaina practice of voluntarily step by step termination of body with full awareness, wisdom and insight. It can be observed by an ascetic or a lay-devotee voluntarily when he or she is nearing his/her end and when normal life according to religion is not possible due to old age, incurable disease, severe famine etc. Then the *sādhaka*, after melting all his passions and abandoning all worldly attachments, observes severe austerities with a progressive withdrawal of food and water, meditating on the real nature of the self until the soul sheds off his mortal coil. This practice is also known as *Santhāra* and *Smādhimaraṇa*.

The similar practice of voluntary death has been prevalent in some of the non-Jaina traditions. Society and religions in the past approved different forms of voluntary deaths as acts of pity, conducive to religious merit. Sometimes such acts have been condemned as repugnant to all morals and human conscience. History records that in ancient civilizations, including India, voluntary death was accepted. The Hindu *Dharmaśāstras* sanction various modes of death and accordingly have laid down various rules for the conduct of forest hermits. We have references of similar words coined for voluntary death in Hindu *Dharmaśāstras* also.

The more specific equivalent of *Santhārā* or *Sallekhanā* in Hinduism is *Prāyopaveśa*, where a person with no remaining desires or responsibilities can undertake a fast unto death. In Vedic literature the method of voluntary death is called as *'prāyopaveśa'* or *'prāyopaveśana.'* *Pāyopaveśana* literally means resolving to die through fasting or abstaining from food and awaiting in a sitting posture the approach of death- *prayāḥa anasanamṛtyave upaviṣṭaḥ* sthitaḥ/ *saṁkalpapūrvakaṁ sakalakāryyat-yāgena anaśana maraṇārthamudyame.*[1] The word *prāyopaveśana* is used in two terms : 1. It is used for the act of termination of body maintaining all its pre-requisites of taking *prāyopaveśana*, when the *sādhaka* foresees his death nearer due to incurable disease, famine or any other natural calamity. The word *prāyopaveśana* is also used for the act of relinquishing the body due to failure in duty or success or due to getting annoyed. *Prāyopaveśa* offers us the opportunity to arrange our own death, if and when the time is right. In cases of terminal disease or great disability, religious self-willed death through fasting - *Prāyopaveśa* - is permitted. The gradual nature of *Prāyopaveśa* is a key factor distinguishing it from sudden suicide, for it allows time for the individual to settle all differences with others, to ponder life and draw close to God, as well as for loved ones to oversee the person's gradual exit from the physical world. In the ideal practice, one begins by obtaining forgiveness and giving forgiveness. Thereafter, attention is to be focused on scripture and the guru's noble teachings. Meditation on the innermost,

immortal Self becomes the full focus as one gradually abstains from food.

Observing *prāyopaveśana* is bound by very strict regulations. Only a person who has no desire or ambition left and no responsibilities remaining in life is entitled to perform it. The decision to do so must be publically declared well in advance. Ancient lawmakers stipulated the conditions that allow *prāyopaveśana*. There is one's inability to perform normal bodily purification, death appears imminent or the physical condition is too bad to move, then there *prāyopaveśana* is allowed. The Hindu tradition refers *Pāṇḍavaṁśī* king *Parīkṣita* who was cursed by *Śṛṅgī Ṛṣi* to die after seven days as the deadly snake king *Takṣaka* would bite him. Having known that he will die after seven days *Parikṣita* observes *prāyopaveśana* and *Bhāgavata Purāṇa* was narrated to him by the sage *Śukadeva*, son of *Vyāsa*.[2] *Maharṣi Khaṭvāṅga* knowing the end of life nearer only in two hours takes *prāyopaveśana* and got became immortal.[3] According to *Mahābhārata* when the *Pāṇḍavas* were in exile Duryodhana quarreled with Chitrasena and was imprisoned by him with all his family. Instructed by *Yudhiṣṭhira*, Arjuna freed Duryodhana from the clutches of Chitrasena. Duryodhana becomes infuriated as he was freed by his biggest enemy and decided to observe *prāyopaveśana* to end his life-*niściteyaṁ maṁ matiḥ* sthiti *prāyopaveśane*.[4] But being persuaded by elders, he took his decision back.

According to *Vāyu Purāṇa, Sukarmā,* after Indra killed all his disciples, practiced vow of *prāyopaveśana-pāyopaveśam karottato, sau śiṣyakāraṇāt.*[5]

According to *Vālmīki Rāmāyaṇa* when time frame fixed by *Sugrīva* to find out *Sītā* got elapsed and monkeys were afraid if they go to *Kiṣkindhā* barren *Sugrīva* will take them to task, they thought that we all be sinner, therefore it is pertinent for all of us forest dwelling monkeys to voluntarily undertake fasting un-to-death-*prāyopaveśanayuktaṁ sarveṣāṁ* ca *banaukṣām.*[6]

In another reference by the same treatise, *Hanumāna* faces the sort of mental depression and there was once a tendency in his mind to commit suicide by performing *prāyopaveśana* entering into the fire and shedding his mortal coil being failed to find out the facts about *Sītā.*[7]

We have multiple references of *prāyopaveśana* in *Manusmṛti, Yajáavalkya-smṛti, Gautamasmṛti, apastamba-sūtra, Mahābhārata and Matsya Purāṇa.*

Manusmṛti[8] says that a *Vānaprasthī sādhaka* who sheds his mortal coil without grieve and fear by entering in river or jumping from mountain or entering into fire or by fasting meets direct to Brahma and gets liberated. Manusmṛti again says if the forest hermit suffers from some incurable diseases and cannot properly perform his duties or feels death to be near, he should start on the great journey *(mahāprasthāna)* turning his face to *Iṣāna* direction or towards the North-East, subsisting on water and air only, till the body falls to rise no more.[9] The same is observed in *Yāgyavalkyasmṛti* also.[10] *Prāyopaveśa* is only for people who are fulfilled, who have no desire or ambition left, and no responsibilities remaining in this life. It is really only suitable for elderly ascetics. According to *Rajatara-ṅginī* there were certain officers appointed by the king to superintend *Prāyopaveśa.*[11]

Here we see that *Prāyopaveśa*, or fasting to death, is an acceptable way for a Hindus to end their life in certain circumstances. *Prāyopaveśa* is very different from what most people mean by suicide :-

- it's non-violent and uses natural means;
- it's only used when it's the right time for

this life to end - when this body has served its purpose and become a burden;

- unlike the suddenness of suicide, Prāyopaveśa is a gradual process, giving ample time for the patient to prepare himself and those around him for his death;
- while suicide is often associated with feelings of frustration, depression, or anger, *prāyopaveśa* is associated with feelings of serenity.

The conditions for *prāyopaveśa* are :-

- inability to perform normal bodily purification
- death appears imminent or the condition is so bad that life's pleasures are nil
- the decision is publicly declared
- the action must be done under community regulation

Thus Hindu *Dharmaśāstras* cite several instances in Hindu mythology and history of saints undertaking fasts and relinquishing the body through the practice of *Samādhi Maraṇa* called as *prāyopaveśana.* It is important to discuss here that apart from *prāyopaveśa,* Hindu *Dharmaśāstras* frequently refer other means of religious suicide. A forest hermit may resort to the distant journey or may enter water or fire or may throw himself from a rock face.[12]

Such type of suicidal efforts have been condemned and regarded as a great sinful act by the *Dharmaśāstra.* In spite of this general attitude, says Dr. Kane, 'exceptions were made by the *Smṛtis*, epics and *Purāṇas*. At extremely holy places like *Prayāga*, the *Sarasvatī* and *Kāśī* (Benaras) persons were allowed to kill themselves by drowning with desire of securing release from *Saṁsāra.* The *Śalyaparva* of *Mahābhārata*[13] states: 'Whoever abandons his body at *Pṛithūdake* on Northern bank of *Sarasvatī* after repeating the Vedic prayers would not be troubled by death thereafter? The *Anuśāsana-parva* of *Mahābhārata*[14] says that if a man knowing Vedanta and understanding the ephemeral nature of life abandons life in the holy Himalayas by fasting, he would reach the world of Brahma. The *Matsya-purāṇa*[15] eulogizes the peak of *Amarakaṅṭaka* by stating, 'whoever dies at *Amarakaṅṭaka* by fire, poison, water or fasting enjoys the pleasures described in verses 28-33. He who throws himself from the peak never returns to *Saṁsāra. ṇdipurāṇa* refers to *Mahāprasthāna* and other forms of committing suicide by entering into fire or water or falling from a rock face and says that such person does not incur any sin but on the contrary goes to heaven'.[16]

It however appears that the *Ṛgveda* and the *Brāhmaṇas* do not contain verses sanctioning or approving religious suicide. The *Brahmapurāṇa* says drowning, or falling from cliff or a tree, should be classed with those who commit *Mahāpākas* (cardinal sins)[17]. It is only in such late works as the *Jābāla* and *Kaṅṭhaśruti Upaniṣads* that it is expressly laid down that the *saṁnyāsina* who has acquired full insight, may enter upon the great journey, or chooses death by voluntary starvation, by drowning, by fire or by hero's fate.[18]

The practice of Sati in Hindu tradition is self immolation of wife on the pyre of her husband is famous incident of Indian History. The *Mahābhārata*, the *Rāmāyaṇa*, and the *Viṣṇu Purāṇa* contain instances of such immolation. Dr. Upendra Thakur in his famous work 'History of Suicide in India' quotes from *Mitākṣarā* on *Yajáavalkya-smṛti*[19] to show that the object behind the practice was religious merit. She who follows her husband in death dwells in heaven for as many years as there are hairs on the human body or 3.5 crores

years. But such type of practices are opposed by many of the authors.

We have historical examples of such type of practices supplied by epigraphy. The Khairha plates *Yaśaḥkaraṇadeva* (dated Calcuri saṁvat 823 i.e 1073 AD) narrates that king Gaṅgeya obtained release along with his one hundred wives at the famous banyan tree at *Prayāga*. (E. I Vol. XII p. 205 at p. 211). The *Cālukya* King *Someśvara* after performing Yoga rites drowned himself in the *Tuṅgabhadrā* in 1068 A D. The *Raghuvaṁśa*[20] poetically describes how Aja in his old age when his health was shattered by disease resorted to fasting and drowned himself at the confluence of the holy rivers, the *Gaṅgā* and *Sarayū* and immediately obtained the position of denizen of heaven. So the religious voluntary death apart, ordinary forms of self-murder are generally criticized, of course with a few exceptions.

The practice of Satī and Jauhar is also a form of voluntary death prevailed in Hinduism. The burning of widow on the death of husband is called sahamaraṇa, sahagamana or *anvārohaṇa*. The burning of widows was not peculiar to Brahmanism as many are prone to believe. There is no Vedic passage which can be cited as in-controvertibly referring to widow-burning as then current, nor is there any mantra which could be said which could be repeated in very ancient times. It therefore appears that the practice of *Satī* arose in Brahmanical India before few centuries before Christ. None of the *Dharmaśāstra* except *Viṣṇu* contains any reference to *Satī*. The *Viṣṇudharamaśātra* says that 'On her husband's death the widow should observe celibacy or should ascend the funeral pyre after him'.[21] *Mahābhārata* is sparing in its references of widow burning. *Mādrī*, the favorite wife of *Pāṇḍu*, burnt herself with her husband's body.[22] The *Bhāgavatpurāṇa*[23] speaks of *Gāndhārīs's* burning herself on the death of her husband, *Dhṛitarāṣṭra*. We also have references of other people other than wives who burnt for their king. The *Harṣacarita* describes how many of the king's ministers, servants, and favorites killed themselves on the death of *Prabhākaravardhana*.[24] It seems that in *Mahābhārata* period the practice was confined to royal families and great warriors.

The institution of Jauhar was another medieval institution which flourished side by side with that of *Satī*. *Jauhar* is a name to conjure with in the history of medieval Hindu India which unfolds the glorious chapter of *Rājapūta* heroism and their splendid sacrifice. *Jauhar* was in a sense a form of mass suicide; of we have numerous examples recorded in the annals of several other nations. In India its origin can be traced as far back 4th cent. BC and after that early century of Christian era. The fate of *Rājapūta* princes was one of appalling hardships. The loss of the battle or the capture of a city is a signal to avoid captivity and its horror which to the *Rājaputānī* are worse than death.[25] The defeat of the gallant *Rājapūta* by Ala-ud-Din Khilji and Bahadur Shah was writ large on the horizon of Chittore which witnessed devastating flames up in the sky of Rajasthan. We have references of commencing *Jauhar* by twenty-four thousand females, from infancy to old age some by the sword and others in the volcano of fire. So it was a kind of voluntary death but sometimes forced to embrace death. It was a seer self-destruction barbarous one and was devoid of any spiritual ting whatever.

The Buddhists were entirely opposed to this practice of achieving nirvana. From the *Makhādeva* and *Lomahaṁsa Jātakas* we learn the futility of ascetic self-mortification. The Buddha himself all through his preachings condemned this practice as absurd and

delusory.

It is true, they allow a man under certain circumstances to take his own life, but at the same time they maintain that generally dire miseries are in store for the self murderer. Thus, Buddhist tradition, though it condemns the act of committing suicide, but we have scattered reference in Buddhist literature which advocate voluntary death *(icchāmaraṇa)*.

Notwithstanding the opposition of Buddha, the Buddhist literature is full of various kinds of suicide. The underlying spirit of Buddhism and its philosophy may be seen in the fact that Buddhists object to both, 'thirst for existence' *(bhavatṛṣṇā)* and 'thirst for non-existence' *(vibhavatṛṣṇā)*. Accordingly a saint must abide in indifference 'without caring for life, without caring for death'. A monk or follower is explicitly told that he would not commit suicide in order to reach nirvana sooner. In spite these strong strictures against suicides or self-immolation; we have, none the less, a number of stories recorded in Buddhist scriptures which prove beyond doubt that Buddhism in certain cases and in certain circumstances admitted suicide. In some cases it may be premature and sinful, but in other cases we find arhats indulging in self-destruction. The story relating to suicide of *Sīhā, Sappadāsa, Vakkali* and *Godhika* bear out this view.

Sīhā was distressed at not obtaining spiritual progress after seven years of endeavor. She said: "what have I to do with this wretched life *(pāpajīvita)* ? I will die through hanging! But just as the rope was tied round her neck, she was turning her thought towards enlightenment *(vipassanā)* as was her former habit. She attained arhatship and at this very moment the rope loosened her throat and fell.[26]

The story of *Sappadāsa* informs us that the monk *Sappadāsa* was overpowered by passion and never obtained concentration. This distressed him so much that he was to commit suicide with a razor or a sword when he suddenly realized the inward vision.[27]

Vakkali was very fond of looking Buddha. In order to create him a holy fear, the Buddha commanded him to go. Desperate at being no longer able to see the Master, he decided to commit suicide. Vakkali was suffering from a painful illness. Buddha came to him and comfort him and said 'your death will be a holy one, an auspicious one, - *āuso* Vakkali, *evemāhamā bhāyi apāpakaṁ te maraṇam.*[28] In other story of *Saṁyuttanikāya*, Chhanna, who was suffering from incurable disease, informed Buddha about his decision to end his life as the pain was unbearable. - sattha *āuso Sāriputta, āharissāmi navaaṁkhaṁ jīvitaṁ ti.*[29]

Godhika was unable, because of disease, to remain in a certain state of meditation that is why he wanted to end his life. *Māra* approached Buddha and told him your disciple wants to die, he has resolved to die, prevent him. But as it is explained in *Abhidharmakośavyākhyā*, Godhika reached *arhat* ship just after he had begun cutting his throat.[30]

Śākyamuni had a voluntary death. As *Mahāprajāti* had to obtain permission of *Śākyamuni* before she resolved to die, hers was voluntary death, though of a slightly different character. The *Prateyakabuddhas*, like *Śākyamuni*, decided for themselves when the time came and rising a few cubits above the ground, burned themselves.[31]

Besides, self-surrender culminating in voluntary death was held in great honor in many Buddhist countries. It happens that Chinese monks beg for fuel, build a funeral pyre, sit cross legged on it, cover their leg with linen soaked in oil and set themselves on fire. With some branches of the Chinese

Mahāyāna, the burning of the skull was an essential part of the ordination as a future Buddha. The practice of *Harkari* is in vogue even today which ultimately means embracing death. It was of two fold-obligatory and voluntary. Where obligatory is punishment, voluntary harikari is practiced out of loyalty to dead superior.

Islam has neither advocated nor sanctioned voluntary deaths in any form. As a matter of fact, Islam condemns suicide as an act interfering with the decrees of God and the Muhammadans believe that 'it is greater sin for a person to kill himself than to kill a fellowman.[32] The Quran says : 'It is not for any soul to die, save by God's permission ordained for an appointment time.. spend in the way of Allāh and cast not yourselves to perdition with your own hands.'[33]

The attitude of Muhammad has no doubt been correctly interpreted by Hadiths which Bukhari accepts as genuine: 'Whosoever shall kill himself shall suffer in the fire of hell... .. ..shall be excluded from heaven for ever.[34]

So, for several centuries past there has been unanimity of opinion throughout the Muslim world that suicide is a violation of a divine command contained in the *Qurān* and the *Sunnah* of the prophet. Suicide to Muslim is an act of revolt against God and the perpetrator of the act risks the wrath of God and the indescribable penalties of the fire.[35] There is a tradition among the Muslims that once 'Muhammad refused to burry a suicide, and his example has established a law to that effect in Islam.[36] In the medieval age suicides did occur among the Muslims in India. In some cases they were even greatly eulogized. *Jahangir* in his Memoirs historical instance of *Babar* offering his own life to save his son *Humāyun* who was on death bed that *'E Khudā tu merīi jāna lele lekin Humāyun ko ṭhīka kara de'* is very popular even among students.

Christianity does not substantiate the practice of voluntary death. The commandment is : 'Thou shalt not kill', neither thyself nor another. The Church treated the dead bodies of suicides with no mercy and the usual services and rituals were denied to them. It appears that the earlier fathers approved of suicides which were committed to secure martyrdom, to avoid apostasy or to protect virginity.

In ancient Greece and Egypt there appear to have been instances of forced or voluntary self immolation of women. History records instances of vassals and slaves committing suicide with their kings or noblemen on the same principle of the Hindu belief underlying the Sati. Reference may be made to whole community in the seventeenth and eighteenth centuries having resorted to death or burnt themselves to death from religious motives. Opposition seems to be voiced from time to time against such practices because being self-destruction it was most horrible. Plato and Aristotle object to self-destruction as cowardice and an offence against the state which loses an individual.

From the above accounts Dr. Thakur summaries the position thus: it is clear that religious suicide was approved long in India. But the most significant point to remember is that it only those persons who lived fully and acquired high ascetic power were authorized to undertake such type of act. To others not having requisite merits it was generally denied.[37]

So we find the similar practices of voluntary death in non-Jaina traditions also.

Jainism endorses the spirit of voluntary death behind it but does not agree with the system or means they follow. Because there is latent desire for heavenly pleasure first, and secondly, in those systems the use of water, fire, jumping from mountains and the like

areallowed as a means for voluntary death but such practices are not allowed in Jainism. Jainism strongly condemns such practices for *Sallekhanā*. But there is comparatively little distinction between the 'practice of austerities to a pitch which deprives the ascetic of all mental and physical activity' and 'the actual termination of life.

The basic concept underlying the vow is that man who is the master of his own destiny should face death in such a way as to prevent influx of karmas even at the last moment of his life and at the same time liberate the soul from karmic bondage. The norms and procedure of taking *Santhārā* or *Sallekhanā* is widely discussed in *Jaina ṇgamas* and post *ṇgamic* literature. The treatise like *Antakṛddaīā, Daśavaikālika-sūtra, Uttarādhyayana, Śrāvaka-prajáapti, Dharma-bindu, Nava-pada-prakaraṇa, Tattvārtha-bhāṣya, Ratnakarṇḍaśrāvakācāra, Cāritrasāra, Yoga-śāstra, Sāgāradharmāmṛta* throw light on the practice of *Sallekhanā*. We have a long history and chain of those monks, nuns, kings, Śreṣṭhis and householders who practiced *Sallekhanā* at the end of their life. Justice T. K. Tukol[38], in his work 'Sallekhana is not Suicide, has contributed a chapter under the title, *'Sallekhanā* in practice' in which he has elaborately discussed the *sādhakas* who observed this great practice. We have multiple literary as well as epigraphical evidences of practicing *Sallekhanā* in Jaina traditions.

The vow of *Sallekhanā* can be adopted by a householder as well as by a monk or a nun, when they foresee that their end is near. There is comprehensive exposition of this vow, both as to its content and manner of observance in *Ratnakaraṇḍaśrāvakācāra* by *Samanta-bhadra* (2nd Cent. AD). *Samantabhadra* defined *Sallekhanā* as 'a vow to be adopted for seeking emancipation of the soul from the body as a religious duty during a calamity, severe famine, old age or incurable illness. During the period he should wholly efface from his mind all grief, fear, regret, affection, hatred, prejudice etc. and with calm mind he should keep his mind supremely happy with the nectar of spiritual knowledge. He should gradually give up first solid food then liquid, then water and the end observe total fast with full resolve, fixing the mind on holy *Navakāra Mantra*. Doing so, he would peacefully and blissfully abandons his body.

It is ordained that during the observance of *Sallekhanā*, he should avoid the five transgressions :[39]

1. A feeling that it would have be better if death would come a little latter.
2. Wishing for a speedy death
3. Entertaining fear as to how he would bear the pangs of death
4. Remembering friends and relative at the time of death
5. Wishing for a particular kind of fruit as a result of penance.

Out of these transgressions, anyone can affect the poise and tranquility of the mind and divert the attention from meditation to mundane thought so as to affect the very nature of the meditation itself. *ṇcārāṅga-sūtra* has explained three forms of death or *Sallekhanā-Bhakataprtyākhyāna, Ingitamaraṇa* and *pādapopagamana*. The last two are distinguished by restriction of the movement of the person and the motion of limbs. The *Bhaktaprtyākhyānī* should subdue all passions and take little food and at proper time meet death with equanimity when the end comes to him.

Difference between *Sallekhanā* and similar concept available in non-Jaina traditions:

Jainas are particularly offended by the comparisons drawn between *Santhārā*, suicide and euthanasia. There is nothing common between the three except voluntary

death. There is a fine distinction between the three. The aim of euthanasia and suicide is to be free from misery, which is a desire. *Santhārā* is about the end of all desire. In non-Jaina traditions we have similar concept of voluntary death but except *prāyopaveśa*, in which die for religious reasons is allowed, all other concepts are somehow or other similar to suicide or selfdestruction which is strongly condemned by Jainas.[40] Now when we examine the psychological and sociological aspects of *Sallekhanā*, we have at least four parameters: (1) intention, (2) situation (3) the means adopted and (4) the outcome of the action or its consequences. The intention of the observer of *Sallekhanā* is spiritual where as that who commits suicide, his intention is temporal. The person adopting the vow of *Sallekhanā* wants to be liberated from worldly transmigration. Contrary to the suicidal intention there is no desire to put an end to life immediately by some violent means. There is no question of escaping from any shame, frustration or emotional excitement. The observer of *Sallekhanā* to ensure complete purity of mind subjugates all attachments and possessions. He puts an end to all family or friendly ties by disclosing his intention and by asking their forgiveness. But one who suicides, escapes from pangs of life and terminates his life without informing his family and dear ones. He in the wake of fits of the passions ends his life by violent means like hanging, poisoning, entering in fire, stabbing, shooting or drowning in deep water or jumping from hill's top.

Comparing *Satīprathā* recently the Rajasthan High Court had given decision that *Santhārā* is not different and it is also a process to commit suicide in the name of religion as in the case of *Satī*. There is no need to protect the practice of *Santhārā* by the state. But this is not the case in Jaina concept of *Santhārā*. In *Satī-prathā*, the women has attachment towards her husband she cannot imagine the life without him. In such a condition, she voluntary or out of respect for her cultural tradition jumps on the humeral pyre of her husband and ends her life. But a person abide by the vow of *Santhārā,* dispassionately gives up body for or attaining the higher purpose i.e. emancipation from the cycle of birth and death. There is difference between the consequences of *Sallekhanā* and suicide. The consequences of *Sallekhanā* are neither hurtful nor sorrowful to any. There is no mourning after *Sallekhanā* where as the consequences of suicide is always hurtful and sorrowful. There is nothing in common between suicide and *Sallekhanā* except that in both cases there is death. In case of suicide, death is brought about by objectionable means because harm is caused to one's own body and to the interests of the relatives and friends.

The instances of voluntary death cited in non-Jaina tradition, except a few, are mostly confined to suicidal approach. In Hindu *Dharmaśāstra*, instances describing voluntary death or *prāyopaveśa* observed to get rid of worldly transmigration can be equated with *Sallekhanā* but if it is observed to get heavenly pleasure it does not endorse the practice of *Sallekhanā*. In Shravanbelgola there are epigraphical proofs of more than 2000 years of practicing *Sallekhanā*. Even in modern times the practice is in vogue. *Sallekhanā is* neither custom nor a tradition. It is a way of life. Death is its result not its goal.

LIST

1. Bhā. Va. Verse 250, referred in *Vācaspatyam* (Ṣaṣṭho Bhāgaḥ), Chaukhambha Sanskrit Series, 1990, p. 4529
2. *iti vyavachhidya sa pāṇḍaveyaḥ prāyopaveśaṁ prati visṇupadāṁ/ Śrīmadbhāgavata* 1/19/5-7) Gita Press Gorakhpur, third edition p. 138
3. *Śrīmadbhagavata* 1.2.13
4. *naivaṁ bhogeśca me kārye mā vihantya gchchata/ niściteyaṁ maṁ matiḥ sthiti prāyopaveśane//*

Mahābhārata, Vanaparva, 249/20, 251,14-15
5. *anadhyāyeīvadhīyānaṁstādjaghān śatkratu pāyopaveśam karottato,sau śiṣyakāraṇāt// (Vāyupurāṇa* 43/29) Part TT, Edited by Pt. Shriram Sharma Acharya, Sanskriti Sansthana, Barelli, 1969, p.13
6. *bandhanat cha avasādāt me śreyaḥ prāyopaveśanam/ Vālmīki Rāmāyaṇa, Kiṣkindhākāṇḍa* 4/53/28) *tasminnatītakāle... .....prāyopaveśanayuktaṁ sarveṣāṁ ca banaukṣām/ Vālmīki Rāmāyaṇa, Kiṣkindhākāṇḍa,* 4/55/11=12)
7. *adṛṣṭvā kiṁ pravakṣyāmi tamahaṁ janakātmajāṁ/ dhruvaṁ prāyamupaiṣyanti kālasya vyativartane// (Vālmīki Rāmāyaṇa,Sundarakāṇḍa,* 12/8).
8. *Manusmṛti*- 6/32
9. Ibid- 6/31
10. *vāyubhakṣaḥ prāgudīcīṁ gachchedva, varṣmsaṅkṣayāt/ Yājáavalkya Smṛti* 5/55.
11. *Rājataṅgiṇī,* VII, 1411
12. *History of Dharmaśāstra,* P. V. Kane, Vol. II, Part II, p. 32
13. *Mahābhārata , Śalyaparva,* 39,33-34
14. *Mahābhārata, Anuśāsana-parva* -25, 62-64
15. *Matsya-purāṇa*-28-33
16. History of *Dharmaśāstra*, P. V. Kane, Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona, 1941,Vol. II, Part III, p. 386
17. Cited by Dr. Upendra Thakur in The History of Suicide in India, p. 54
18. Encyclopedia of Religion an Ethics, Vol. XII. P. 32
19. *Yajáavalkya-smṛti* 1.86
20. *Raghuvaṁśa* VIII.94
21. *mrite bhartari brahmacaryaṁ tadanvarohaṇaṁ vā / Vishnudharmashaśāstra 25 quoted by Mitākṣarā), History of Dharamaśāstra*, PV Kane, Ch. XV, p. 626
22. *Tatraina citāgnistham Madrī samanvārūroha/ Mahābhārata, ṇdiparva,* 95.65.
23. *Bhāgavatpurāṇa* 1.13.57
24. *History of Dharamaśāstra,* PV Kane Chap. XV p. 630
25. Todd, *Annals*, vol. I, pp. 215, 249, 473, 507
26. *Therīgāthā,* 77
27. *Therigatha* 408
28. *Saṁyuttanikāya, Vakkalisutta,* 22.87
29. *Saṁyuttanikāya, Chhannasutta* 35-87-88
30. *Kathāvatthu* I, 2
31. *The History of Suicide in India,* Upendra Thakur, p. 109
32. Westcott, *Suicide*, p. 12
33. M. Muhammad *Ali, The Holy Quran*, IV,33
34. *Encyclopedia of Religion and Ethics*, Vol. xii, p.38
35. *Encyclopedia of Religion and Ethics,* Vol. Xii, p.38
36. *The History of Suicide in India,* Dr. Upendra Thakur, p. 66
37. Ibid, p.110
38. Justice T K Tukol, *Sallekhana is not Suicide*, L D Institute of Indology, Ahmedabad 1976, pp.18-63.
39. *jīvitamaraṇāśaṁsṛ bhayamitrasmṛtinidānanāmānaḥ /Sallekhanāticāraḥ paáca jinendraiḥ samādiṣṭāḥ// Ratnakaraṇḍaśrāvakācāra,* 29
40. *Satthagahaṇaṁ visabhkhaṇaṁ.....bandhaṅti, Uttarādhyayana,* 36.267

यह वर्ष कुछ ख़ास हो

श्री राजेन्द्र जैन 'राजा'

मन में हर्ष और उल्लास हो
यह वर्ष कुछ ख़ास हो।
दरकते रिश्तों में, परस्पर विश्वास हो
हार का डर न हो कभी
मन में विजय की आश हो
यह वर्ष कुछ ख़ास हो।
आदर्शमय हो जीवनशैली
व्यसन मुक्त परिवेश हो
तनाव चिन्ता का युवाओं को
लेशमात्र भी न क्लेश हो
यह वर्ष कुछ ख़ास हो।
भय मुक्त रहे जग का हर प्राणी
करुणा सौहार्द का मधुमास हो
शाकाहार अपनाये जीवन में
सम्यक्त्व का आत्मा में उजास हो
यह वर्ष कुछ ख़ास हो।
देव, गुरु और धर्म पर मेरा
अटूट श्रद्धा और विश्वास हो
संघ-सेवा और समर्पण में
यथाशक्ति नितप्रति प्रयास हो।
यह वर्ष कुछ ख़ास हो।

-मानसरोवर, जयपुर-302020 (राज.)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 53
ISSN 2249-2011

प्रासङ्गिक

नूतन वर्ष के ये अक्षर, प्रस्फुटित कर रहे आनन्द के स्वर

श्रीमती अंशु संजय सुराणा

वर्ष 2022 का दिसम्बर माह घोषणा कर रहा है स्वयं के समापन और नूतन वर्ष के आगमन की। नव वर्ष भी मानो बहुत हर्षित है, वह भी सभी के जीवन को खुशियों से भरने को लालायित है। इसके हर अक्षर में जीवन निर्माण का सूत्र समाया है। उसको समझने का प्रयत्न करेंगे। इन सूत्रों को अपनायेंगे तो जीवन खुशहाल बना पायेंगे।

H Hate the sin not the sinner-

प्रभु वीर ने सूत्र दिया 'मित्ती मे सव्वभूएसु' अर्थात् प्रत्येक जीव के साथ मैत्री भाव हो। संसार के सभी जीवों में अच्छे-बुरे, पापी-पुण्यशाली, ज्ञानी-अज्ञानी सबका समावेश होता है और सभी से मैत्री भी करनी है। इससे यह तथ्य सिद्ध होता है कि घृणा पाप से करो, पापी से नहीं। पापी के साथ भी मैत्री भाव। भगवान ने तो गौशालक, संगम, अर्जुनमाली पर भी करुणा ही बरसायी। हमें पापी से द्वेष करने के बजाय उसके अज्ञान को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। उसकी आत्मा को ऊपर उठाने में साधक बनना चाहिए।

A Appreciate the qualities of virtuous-

गुणी जनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आए।
बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पाए।।

दूसरे की प्रशंसा वही कर सकता है जिसका हृदय उदार होता है। प्रेम, प्रशंसा और प्रोत्साहन गुणों को बढ़ाने में सहायक होते हैं। दूसरी बात यह भी है कि प्रत्येक जीव में कोई न कोई गुण अवश्य होता है। यदि हम उन गुणों को हृदय से सम्मान देंगे तो निश्चित रूप से वे गुण हमारे अन्दर भी समाहित हुए बिना नहीं रहेंगे। गुणी जनों के गुणगान से जिह्वा पवित्र होती है और कर्मों की निर्जरा भी होती है।

P Positive Thinking-

'जो हुआ वह अच्छा हुआ और जो होगा वह अच्छा होगा।' वाक्य को अनुभूति में उतार लेने वाले प्राणी को नकारात्मक सोच छू नहीं पाती। आज तनाव की गम्भीर बीमारी, जिसे depression के नाम से जाना जाता है, ने अपने पैर इतने पसार लिए हैं कि विश्व के मानव समूह का एक बड़ा हिस्सा इससे ग्रसित है। न जाने कितनी दवाइयों का सेवन इससे निजात पाने के लिए हो रहा है। आत्महत्या की बढ़ती दर के कारणों में भी यह प्रमुख कारण है। नकारात्मक सोच से निराशा उत्पन्न होती है, वही इस तनाव को जन्म देती है। इसलिए हर पल सोच में सकारात्मकता रहनी चाहिए। कठिन से कठिन परिस्थिति का सामना सकारात्मक विचारधारा का व्यक्ति हँसते-हँसते कर लेता है।

P Pack your anger-

'हे जीव! तू शान्त रह।' यह वाक्य शान्तिपूर्ण जीवन का अनमोल सूत्र है। क्रोध की कषाय सामने वाले को बाद में कष्ट पहुँचाती है उससे पहले तो स्वयं को शारीरिक, मानसिक पीड़ा झेलनी पड़ती है। क्रोध प्रीति का नाश कर देता है इसलिए इसे वश में करने की कोशिश करनी चाहिए। शान्ति वहीं है जहाँ क्रोध की सार-सम्भाल कोई नहीं करता। जिसके कारण क्रोध आया वह व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति निमित्त मात्र है। ऐसा सोचकर निर्जरा का प्रयास करना चाहिए।

Y Your present action determine your future-

हर कार्य को करते समय सजगता, सावधानी रखनी चाहिए, क्योंकि वर्तमान का किया गया कार्य भविष्य निर्धारित करता है। जैनदर्शन में कर्मों की प्रकृति को समझने का विशेष प्रयत्न किया गया है। बच्चा पढ़ता है,

मेहनत करता है तो भविष्य में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होकर सफल हो जाता है। आज की पढ़ाई से आने वाले समय को उज्जवल बनाया जा सकता है तो आज की एक गलती भी भविष्य में दुर्गति का मेहमान बना सकती है। एक अच्छाई से अच्छी गति को प्राप्त किया जा सकता है।

N No one can harm you more than yourself-

जब हम किसी दूसरे से जुड़ जाते हैं, चाहे राग की परिणति में अथवा द्वेष की परिणति रूप में तब हम स्वयं ही स्वयं का बहुत बड़ा नुकसान कर बैठते हैं। जबकि सत्य तो यह है कि सामने वाला आपके शरीर और बाहरी उपधि को ही आघात पहुँचा सकता है, पर हम स्वयं आन्तरिक आत्मा को हानि पहुँचा रहे हैं। आत्मा को स्वभाव दशा से विभाव दशा में भटका कर स्वयं को बहुत बड़ी क्षति का अधिकारी बना रहे हैं।

E Every day has new begining-

न भूतकाल का चिन्तन, न ही भविष्य की चिन्ता, मात्र वर्तमान में जीने वाला ही लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। प्रतिदिन प्रातःकाल प्रभु को धन्यवाद देना चाहिए कि दुनिया में जितना दुःख है प्रभु उसकी तुलना में मैं अत्यन्त आनन्द में हूँ। आपकी कृपा से जो भी मुझे प्राप्त है वह मेरे लिए पर्याप्त है।

W Watch your Action, Words, Thought-

अपने मन के विचारों पर, वचनों पर और काया से किए जाने वाले क्रियाकलापों पर हमेशा निगरानी रखनी चाहिए, क्योंकि ये तीनों चीजें जितनी उच्च होंगी, जीवन भी ऊँचा बनेगा। तीनों चीजों के निष्कृष्ट होने पर अधोगति में जाने की मुहर लग जायेगी। इसलिए मन से किसी का बुरा सोचना नहीं, वचन से अपशब्द कहना नहीं और काया से किसी को नुकसान पहुँचाना नहीं।

Y Your happiness depend on yourself-

इस पूरे जीवन में बहुत सी परिस्थितियाँ आती हैं जो हमें सुख या दुःख पहुँचाती हैं, ऐसा हमने मान लिया है, पर सत्य तो यह है कि सुखी होना या दुःखी होना हमारे हाथ की बात है। किसी भी परिस्थिति में इतना सामर्थ्य नहीं होता है कि वह हमें सुखी या दुःखी बना सके। हर परिस्थिति को मात्र ज्ञाता-द्रष्टा भाव से देखो और जानो, क्योंकि परिस्थितियों से जुड़ना ही कष्टों की जननी है।

We need much less than we think need.

वास्तव में हमारी आवश्यकताएँ हमारी इच्छाओं से अत्यन्त सीमित हैं। जो यह जान लेता है और मान लेता है, फिर वह हर स्थिति में आनन्द का अनुभव करता है।

E Every moment is valuable, don't wait it-

उत्तराध्ययनसूत्र के दसवें अध्ययन में प्रभु महावीर गौतमस्वामी को फरमा रहे हैं-समयं गोयम! मा पमायए अर्थात् हे गौतम! क्षण भर का प्रमाद मत करो। बीता हुआ समय वापस नहीं आता। जो समय की कीमत जानता है समय उसे कीमती बना देता है। इसलिए जितना हो सके प्राप्त समय का सदुपयोग करें। समय आत्मा को भी कहते हैं और सिद्धान्त को भी। समय (आत्मा) के लिए समय (काल) का सदुपयोग ही समय (सिद्धान्त) है।

A Always See our's disqualities and others qualities-

स्वयं के दोष और दूसरे के गुणों को देखने वाला व्यक्ति निर्दोष और गुणवान बन जाता है। स्वयं की एक छोटी गलती भी बड़ी लगनी चाहिए और दूसरों की बड़ी गलती भी छोटी लगनी चाहिए। दूसरों के दोष देखते रहने से स्वयं के निर्दोष बनने की भावना समाप्त हो जाती है। अपनी कमियों को देखेंगे, मानेंगे और दूर करने का प्रयत्न करेंगे तो वे समाप्त हो जायेंगी। दूसरे के गुणों को देखेंगे, मानेंगे और उनकी प्राप्ति का प्रयास करेंगे तो उन्हें आत्मा में समाहित कर पायेंगे।

R Remember the ultimate goal of life-

जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त करना है, यह हमेशा याद रहना चाहिए। मानव-भव का एक मात्र लक्ष्य मुक्ति की प्राप्ति है। यदि यह प्रतिपल स्मरण रहेगा तो हमारे कार्य भी उसी को ध्यान में रखकर होंगे। एक

क्रिकेटर का लक्ष्य अधिक रन बनाना, विद्यार्थी का लक्ष्य अधिक अंकों से उत्तीर्ण होना, व्यापारी का लक्ष्य लाभ कमाना होता है। सभी अपने-अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भरपूर प्रयास और पुरुषार्थ करते हैं और सफलता को प्राप्त करते हैं। यदि हम भी अपने सर्वोत्कृष्ट लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति के लिए अथक प्रयास और सम्यक् पुरुषार्थ करेंगे, हमारा उस लक्ष्य की प्राप्ति की ओर ध्यान रहेगा तो निश्चय ही यह आत्मा एक न एक दिन लक्ष्य प्राप्ति में सफलता हासिल कर लेगी।

नववर्ष के अनमोल अक्षर,
जागृति पैदा कर रहे हैं भीतर।
चिन्तन चलता रहे इन पर,
पायेंगे भरपूर आनन्द के अवसर।।

-एस 149, महावीर नगर, टोंक रोड़, जयपुर-302018 (राजस्थान)

महावीराष्टक
(हिन्दी पद्यानुवाद)

डॉ. मनोज जैन 'निर्लिप्त'

जिनके केवल-चेतन में,
दर्पणवत् चेत-अचेत पदार्थ।
अनन्तकाल तक झलकें युगपत्,
ध्रौव्य-व्यय-उत्पाद हि साथ।।

रवि प्रकाशे जगती को त्यों, मुक्ति-मग-प्रकाशी जो।
ऐसे महावीर स्वामी मम, नयनों के पथगामी हों।।1।।

जिनके नयन-कमल लालिमा, रहित और टिमकार-रहित।
बाह्याभ्यन्तर क्रोध आदि से, रहित ज्यू लोगों को प्रकटित।।
परम शान्त, अति निर्मल मुद्रा, ही जिनकी प्रस्फुटित हो।
ऐसे महावीर स्वामी मम, नयनों के पथगामी हों।।2।।

नमते इन्द्र-मुकुट-मणियों के,
प्रभा-जाल से वेष्टित हो।
शोभित जिनके पग-कमलों का,
सुमिरन भी जग-जीवों को।।

है सक्षम जल-सम इतना कि, करे शान्त भव-ज्वाला को।
ऐसे महावीर स्वामी मम, नयनों के पथगामी हों।।3।।

जिन प्रति प्रमुदित मन से पूजा,
भाव यहाँ धरि मेढ़क ने।
पाई गुण-निधि सुख-समूह युत,
स्वर्ग-देव हो क्षण भर में।।

तब विस्मय क्या, मिले मुक्ति-सुख, भण्डारा सद्भक्तों को।
ऐसे महावीर स्वामी मम, नयनों के पथगामी हों।।4।।

तन स्वर्णिम आभायुत फिर भी,
तन-विरहित धरि ज्ञान-शरीर।
अनेक ज्ञेय-ज्ञानी पर एकल,
सुत-सिद्धार्थ जन्म-विहीन।।

श्रीयुत फिर भी, जगत-राग बिन, धारी अद्भुत गति के जो।
ऐसे महावीर स्वामी मम, नयनों के पथगामी हों।।5।।

जिनकी वाणी-गंगा की बहु, निर्मल नय-तरंगों युत।
विपुल ज्ञान-जल से जग-जीवों, का न्हवन सन्ताप-शमक।।
अब तक भी परिचित ये गंगा, विद्वत् रूपी हंसों को।
ऐसे महावीर स्वामी मम, नयनों के पथगामी हों।।6।।

तीव्र वेगधारी त्रिलोकजयी, काम विकट है योद्धा जो।
कुमार-काल में ही निज-बल से, जीत लिया जिनने उसको।।
स्फुरायमान नित-आनन्दी, प्रशम राज्य-पद भोगी जो।
ऐसे महावीर स्वामी मम, नयनों के पथगामी हों।।7।।

गहन मोह-आतंक-शमन को, तत्पर आकस्मिक जो वैद्य।
बन्धु निरापेक्ष महिमावन्त, एवं मंगलदायी सदैव।।
भव-भीरू सज्जन जीवों के, शरण श्रेष्ठ गुणधारी जो।
ऐसे महावीर स्वामी मम, नयनों के पथगामी हों।।8।।

(सोरठा)-'भागेन्दु' भक्तिवश, महावीराष्टक कीन।
जो पढ़े या सुने भी, होए श्रेष्ठ गति लीन।।

(दोहा)-धन्य हुआ 'निर्लिप्त' भी, करि हिन्दी-अनुवाद।
मनन करे शुभ भाव से, ताकु सौख्य अपार।।

-18, ब्रज-विहार ए.डी.ए. कॉलोनी, (बन्ना देवी), दिल्ली रोड़, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 56
ISSN 2249-2011

प्रासङ्गिक-चिन्तन

कोशिश

श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'

11 दिसम्बर 2022,जोधपुर। सर्दी की सुबह ..लगभग 8 बजे ...मेरे साधर्मिक मित्र गौरवजी द्वारा...मेरे पारणे के लिए आत्मीय आग्रह पर...मैं उनकी कॉलोनी में पहुँचा। गौरवजी घर के बाहर ही मोटरसाइकिल पर बैठे हुए दूध वाले भाई से बात कर रहे थे ...मैंने मुस्कुराते हुए ..मित्र को जय जिनेन्द्र कहा एवं दूध वाले भाई को मुस्कान भरी नज़रों से देखा ...तो सहज ही उसकी नजरों में चमक और होंठों पर मुस्कान आ गयी ...उसने भी झुकते हुए अभिवादन किया। गौरवजी दूध लेकर घर के अन्दर गए...तब तक मैंने उससे बात की ..नाम चैनाराम ...उम्र लगभग 28 वर्ष। उसने मुझसे पूछा कि भाईसाहब! आप क्या व्यापार करते हो? ...मैंने कहा कि मैं वह व्यापार करता हूँ जिसका मुनाफ़ा साथ चलता है ...जन्म-जन्म तक। उसके मन में जिज्ञासा के भाव जगते देख, मैंने कहा कि देखो भाई चैनारामजी..मेरी कोशिश से यदि कोई व्यक्ति गुटखा या अन्य किसी तरह का नशा छोड़ देता है तो उस व्यक्ति का और उसके पूरे परिवार का आशीर्वाद मुझे मिलेगा या नहीं? ...बात सीधे दिल से निकली थी इसलिए सीधी दिल पर लगी। कुछ क्षण सोचने के बाद चैनारामजी बोले.. मुझे भी गुटखा तो छोड़ना ही है पर....। लगभग 10 मिनट की समझाइश की और चैनारामजी ने उसी समय ...जीवन भर के लिए गुटखा न खाने तथा अन्य कोई भी प्रकार का नशा न करने के नियम लिए। मैंने भगवान की जय बुलवाई ...मेरे संकेत पर गौरवजी घर के अन्दर से इलायची और मुखवास ले आये...उन्हें खिलाया ...और प्रसन्न चेहरे से खूब धन्यवाद बोलते हुए चैनारामजी रवाना हुए।

मैं गुरुदेव के अनन्त कृपाप्रसाद को रोम-रोम से महसूस कर पा रहा था। अल्पाहार के बाद वहाँ से मैं प्रवचन में गया ...दिन भर सन्त-सती मण्डल की सेवा पर्युपासना का लाभ मिला।

शाम को सोसाइटी में गाड़ी को पार्क करके फ्लैट की तरफ बढ़ा ...पता नहीं क्यों ...एक प्रेरणा-सी हुई और मैं नियमित रास्ते से न जाकर दूसरे रास्ते से बढ़ा...पास वाले ब्लॉक के नीचे एक ऑटो रिक्शा दिखा...शायद किसी फ्लैट वालों ने बुलवाया था। ...ऑटो में बैठे ड्राईवरजी शायद उन्हीं सवारी का इन्तजार कर रहे थे। मेरे देखते ही देखते ...उन्होंने अपनी जेब से मिराज (गुटखा) का पैकेट निकाला और खाने ही वाले थे कि मेरा उनके एकदम नजदीक से गुजरना हुआ ....मुस्कराहट दी तो वह भाई भी मुस्कुराया। उन्होंने नाम बताया महबूब खान ...उम्र लगभग 40 वर्ष...बात करते हुए बताया कि वह एक दिन में गुटखे के कम से कम 7-8 पाउच तो खाते ही हैं...करीब 5 मिनट की समझाइश के बाद उनके हाथ जुड़ गए और खूब दुआएँ देते हुए ...मुझसे बोले कि वह अगले दिन से ही कम करते करते 31 दिसम्बर 2022 से पहले पहले गुटखे का त्याग कर देंगे। ..और अपने परिवार को याद करते हुए यह संकल्प किया कि 1 जनवरी, 2023 यानी नए वर्ष की शुरुआत से ही ...वह जीवन भर के लिए गुटखे या अन्य किसी भी प्रकार के नशीले पदार्थ का सेवन नहीं करेंगे। तब तक उनकी सवारी भी आ चुकी थी... मुस्कुराते हुए ..वे भी आगे बढ़ गए और मैं भी।

थोड़ी देर बाद सोसाइटी के पार्क के बाहर टहलते हुए मैंने देखा ...समीप ही प्रोविजन की दुकान को एक लड़का सम्भाल रहा था ...नाम पूछा...तो बताया नीरज ...दिखने में एकदम होशियार ...उम्र लगभग 16 साल। उसकी दुकान में अनेकों तरह के किराने के सामान के साथ-साथ ही ...कई तरह के गुटखे के पाउच भी सजे

हुए थे ..ठीक वहीं जाकर मेरी नज़र रुक गई। दो-तीन मिनट उसके कैरियरके बारे में बात करके मैंने पूछा कि नीरज...जो ज़हर अपन नहीं खाना चाहते ...फिर उसे बेचते क्यों हैं? करीब 5 मिनट की समझाइश के बाद उसने मुस्कुराते हुए मुझे कहा ...कि वह अपने पापा से जरूर यह कहेगा ...कि ये गुटखे के ज़हरीले पाउच सभी कम्पनियों को रिटर्न कर दे और एक जनवरी 2023 से दुकान में कभी नहीं बेचें। उसको मैंने खूब धन्यवाद दिए और दो दिन बाद उसके पापा भरतजी से भी वहीं पर मुलाकात हुई ...और उन्होंने भी खुश होकर अपने बेटे नीरज की शुभ भावना का समर्थन करते हुए, पूरी तैयारी कर ली ...अपनी दुकान से गुटखे को अलविदा करने के लिए... मैंने भी मुस्कुराते हुए ...खूब-खूब धन्यवाद देते हुए उनसे विदा ली।

मैं घर लौटते हुए...गुरुदेव को मन ही मन अनन्त आभार ज्ञापित करते हुए ...यही सोच रहा था कि क्या गुरुदेव की महानता कि ....व्यसनमुक्ति अभियान के संयोजन से ...मेरे जैसे अनेकों संघसेवकों को कर्म निर्जरा के महान् अवसर प्रदान करते हैं। परन्तु हम सभी को यह अवश्य समझना होगा ...कि व्यसनमुक्ति के सिर्फ नारे लगाने से नहीं ...बल्कि व्यसनमुक्ति के लिए भरपूर और निरन्तर कोशिश करते रहने से ही सफलता मिलेगी। आओ मित्रों! हम सभी यह संकल्प करें कि नये वर्ष 2023 में...नई ऊर्जा के साथ ...नई उमंग के संग...कम से कम 23 व्यक्तियों को व्यसनमुक्त करके ...उनके जीवन को और उनके जीवन से जुड़ी उनके परिवार की खुशहाली को ...बचाने के लिए कोशिश अवश्य करेंगे ।

-'जिनशासन', 14, अग्रहारम स्ट्रीट, चिन्तादरीपेट, चेन्नई-600002 (तमिलनाडु)

संयम-यात्रा

श्री विजेन्द्र जैन

छोड़ दी सारी मोह माया
छोड़ दिया संसार रिश्ते छोड़े, ममता त्यागी
त्यागा घर-परिवार
धन्य धन्य हो गुरुवर-गुरुणी वन्दन बारम्बार।
वैराग्य को धारण करके
जान लिया जीवन का सार
दीक्षा लेकर बन गए अब तो
सबके तारणहार
धन्य धन्य हो गुरुवर-गुरुणी वन्दन बारम्बार।
पंचाचार का पालन करते
त्याग तपस्या खूब ये करते
कष्टों को समभाव से सहते
करते हैं हम सब पर उपकार
धन्य धन्य हो गुरुवर-गुरुणी वन्दन बारम्बार।
उपदेश सुनाते दुनिया को सुन्दर
जीवन में अब नहीं कोई सार
मत कर अब तू तेरा-मेरा
कर ले भव सागर को पार
धन्य धन्य हो गुरुवर-गुरुणी वन्दन बारम्बार।
जीवन को यह जीना सिखाते
आत्मबोध का परिचय कराते
ज्ञान प्रकाश को ये फैलाते
मोक्ष मार्ग को यह समझाते
खोलें मोक्ष के द्वार
धन्य धन्य हो गुरुवर-गुरुणी वन्दन बारम्बार।
स्वयं तिरे औरों को तिराते
राग-द्वेष से मुक्त कराते
अहिंसा का मार्ग बतलाते
जिनवाणी का श्रवण कराते
ये हैं अपने तारण हार
धन्य धन्य हो गुरुवर-गुरुणी वन्दन बारम्बार।

-77/235, अग्रवाल फार्म, मानसरोवर, जयपुर (राजस्थान)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 58
ISSN 2249-2011

तत्त्व-चर्चा

आओ मिलकर कर्मों को समझें (24)

(समकित मोहनीय)

श्री धर्मचन्द जैन

जिज्ञासा– समकित मोहनीय किसे कहते हैं?

समाधान–क्षयोपशम समकित प्राप्त हो जाने पर भी जिसके कारण समकित में चल, मल और अगाढ़ आदि दोष रह सकते हैं उस कर्म प्रकृति को समकित मोहनीय कहते हैं।

चल दोष का तात्पर्य धर्म साधना-आराधना के बदले भौतिक सुख चाहना, किसी तीर्थंकर विशेष की स्तुति से ही विशेष फल प्राप्ति मानना। जैसे- शान्तिनाथजी साता करने वाले हैं, पार्श्वनाथजी प्रत्यक्ष परिचय दिखाते हैं आदि। मल दोष के कारण सूक्ष्म, गहन तथा अरूपी तत्त्वों के बारे में, पल्योपम-सागरोपम, 14 पूर्व आदि के बारे में संशय बना रहता है। अगाढ़ दोष के कारण व्यक्ति में क्षेत्र-विशेष, भक्त-विशेष, गुरु-विशेष, क्रिया-विशेष आदि के प्रति भीतर में आसक्ति बनी रहती है।

जिज्ञासा– समकित मोहनीय प्रकृति किसमें बाधक बनती है?

समाधान–समकित मोहनीय प्रकृति का जब तक किसी जीव के विपाकोदय होता है, तब तक उसे क्षयोपशम समकित तो रहती है, किन्तु अधिक विशुद्धि वाली उपशम समकित तथा क्षायिक समकित प्राप्त नहीं हो पाती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि समकित मोहनीय का उदय द्वितीयोपशम समकित तथा क्षायिक समकित प्राप्ति में बाधक बनता है। जब समकित मोहनीय का पूर्णत: उपशम होता है तब उपशम समकित तथा जब क्षय होता है तब क्षायिक समकित की प्राप्ति होती है।

जिज्ञासा– समकित मोहनीय का उदय किन-किन जीवों के होता है?

समाधान–क्षयोपशम समकित वाले सभी जीवों के समकित मोहनीय का उदय रहता ही है। इतना विशेष समझना चाहिए कि जो क्षयोपशम समकिती जीव द्वितीयोपशम प्राप्ति की प्रक्रिया में जब तक रहते हैं, तब तक उनमें भी समकित मोहनीय का उदय रहता है। साथ ही जो क्षयोपशम समकिती जीव क्षायिक समकित प्राप्ति की प्रक्रिया में रहते हैं, तब तक उनमें भी समकित मोहनीय का उदय रहता है।

जिज्ञासा– समकित मोहनीय का उदय कितने काल तक रहता है?

समाधान–समकित मोहनीय का उदय 4 से 7 गुणस्थानवर्ती क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि जीवों में रहता है। इन गुणस्थानों में सम्मिलित रूप से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त से लेकर उत्कृष्ट 66 सागरोपम झाझेरी काल तक रह सकता है। यदि अलग-अलग गुणस्थानों की अपेक्षा विचार किया जाये तो चौथे गुणस्थान में 33 सागरोपम झाझेरी तक, पाँचवें गुणस्थान में देशोन क्रोड़ पूर्व तक तथा छठे-सातवें गुणस्थान में दोनों में अलग-अलग तो अन्तर्मुहूर्त्त तक, किन्तु दोनों में मिलकर देशोन क्रोड़ पूर्व काल तक समकित मोहनीय का उत्कृष्ट उदय रह सकता है।

जिज्ञासा– समकित मोहनीय की सत्ता किन-किन गुणस्थानों में रह सकती है?

समाधान–जिन जीवों ने सम्यक्त्व प्राप्ति के लिए त्रिपुञ्ज किया है, उन जीवों में जब तक वे समकित मोहनीय की उद्वलना नहीं कर दें तब तक समकित मोहनीय की सत्ता रहती है। मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती जीवों को समकित मोहनीय की उद्वलना करने में

पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग जितना असंख्यात काल लगता है। समकित मोहनीय के दलिकों को मिथ्यात्व मोहनीय में संक्रमित करने की प्रक्रिया विशेष उद्वलना है। गुणस्थानों की अपेक्षा विचार करें तो पहले से लेकर ग्यारहवें गुणस्थान तक के जीवों में समकित मोहनीय की सत्ता रह सकती है।

जिज्ञासा– श्रमण निर्ग्रन्थों में समकित मोहनीय का उदय किन-किन कारणों से होता है?

समाधान–अपनी बुद्धि की न्यूनता से, यथातथ्य समझाने वाले गुरु के अभाव से, गहन-गंभीर ज्ञेय पदार्थों का स्वरूप एवं तथाविध हेतु, दृष्टान्त आदि नहीं समझ पाने से, श्रमण निर्ग्रन्थों को भी समकित मोहनीय का उदय हो जाता है। भगवतीसूत्र शतक प्रथम उद्देशक तृतीय में बताया गया है कि श्रमण निर्ग्रन्थों को कांक्षा मोहनीय के रूप में समकित मोहनीय का उदय-1. एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान का अन्तर नहीं समझ पाने से, 2. दर्शन का अन्तर नहीं समझ पाने से, 3. चारित्रान्तर, 4. लिंगान्तर, 5. प्रवचनान्तर, 6. प्रावचनिकान्तर, 7. कल्पान्तर, 8. मार्गान्तर, 9. मतान्तर, 10. भंगान्तर, 11. नयान्तर, 12. नियमान्तर और 13. प्रमाणान्तर इन तेरह कारणों से हो सकता है।

जिज्ञासा– समकित मोहनीय के उदय को कैसे रोका जा सकता है?

समाधान– 'तमेव सच्चं णीसंकं, जं जिणेहिं पवेइयं।' अर्थात् सर्वज्ञ भगवन्तों के वचन, उनका कथन पूर्णत: सत्य है। मेरी बुद्धि की कमी है, मुझमें ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम की मन्दता है अथवा मेरे पुरुषार्थ में कमी है। जिनेश्वर भगवन्त तो उपकार नहीं करने वालों पर भी उपकार करते हैं। वे राग-द्वेष और मोह के पूर्ण विजेता हैं, इसलिए असत्यवादी हो ही नहीं सकते। इस प्रकार अपने मन को आश्वस्त कर स्थिर रहते हुए सन्देहों, संशय से रहित बना जा सकता है।

जिज्ञासा– समकित मोहनीय का उदय देशघाती रूप में होता है अथवा सर्वघाती रूप में?

समाधान– जैसाकि हम जानते हैं कि समकित मोहनीय का बंध नहीं होता, यह मिथ्यात्व मोहनीय के दलिकों के अनुभाग (रस) के आधार पर त्रिपुञ्ज करने पर सत्ता में आती है। मिथ्यात्व मोहनीय के दलिक त्रिपुञ्ज करते समय अनुभाग के आधार पर तीन भागों में विभक्त हो जाता है। इनमें जो एकस्थानिक तथा मन्द द्विस्थानिक रस देशघाती रूप में जिन पुद्गलों में रहता है, वे समकित मोहनीय के दलिक कहलाते हैं। जिनमें मध्यम द्विस्थानिक रस सर्वघाती रूप में होता है, वे मिश्र मोहनीय के दलिक कहलाते हैं तथा जिनमें तीव्र द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक तथा चतुस्थानिक रस होता है, वे दलिक मिथ्यात्व मोहनीय के कहलाते हैं।

इनमें समकित मोहनीय के दलिक देशघाती रूप होते हैं, मिश्र तथा मिथ्यात्व मोहनीय के दलिक सर्वघाती रूप होते हैं। अत: समकित मोहनीय के उदय को देशघाती रूप माना जाता है।

दूसरे शब्दों में हम समझ सकते हैं कि मिथ्यात्व मोहनीय तथा मिश्र मोहनीय, ये दोनों तो समकित गुण का पूरी तरह घात करते हैं, इसलिए इन दोनों का उदय सर्वघाती माना जाता है, किन्तु समकित मोहनीय का उदय समकित गुण का पूर्णत: घात नहीं करता, लेकिन उपशम तथा क्षायिक समकित को नहीं आने देता, इस कारण से समकित मोहनीय के उदय को देशघाती माना जाता है।

जिज्ञासा– समकित मोहनीय की कितनी स्थिति रहने पर जीव निश्चय नय से दर्शन मोहनीय का क्षपक कहलाता है?

समाधान– जब कोई क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि मनुष्य क्षायिक समकित प्राप्ति की प्रक्रिया प्रारम्भ करता है। विशुद्धि से प्रक्रिया में आगे बढ़ते-बढ़ते जब अनन्तानुबन्धी चतुष्क, मिथ्यात्व मोहनीय, मिश्र मोहनीय, इन छह प्रकृतियों का क्षय कर देता है तथा समकित मोहनीय के दलिकों की सत्ता भी घटाते-घटाते जब आठ वर्ष प्रमाण रह जाती है, उस समय वह जीव

दर्शन मोहनीय का क्षपक कहलाता है। विघ्नरूपी सर्वघाती मिथ्यात्व और मिश्र मोहनीय का सर्वथा क्षय कर दिया और समकित मोहनीय की शेष बची स्थिति (8 वर्ष प्रमाण) का भी अन्तर्मुहूर्त्त में क्षय कर देगा, इस कारण से उसे दर्शन मोह का निश्चय नय से क्षपक कहा जाता है।

जिज्ञासा– कृतकरण किसे कहते हैं?

समाधान– कृतकरण का अर्थ है–जिसने अनिवृत्ति-करण पूर्ण कर लिया है। जब समकित मोहनीय के दलिकों के चरम खण्ड को उद्वलित करते गुणश्रेणि शीर्ष से ऊपर स्थानों में दलिक बिल्कुल भी स्थापित नहीं करता है, तब वह क्षपक जीव कृतकरण कहलाता है।

जिज्ञासा– क्या कृतकरण की अवस्था में जीव का मरण हो सकता है?

समाधान– जब कोई कर्मभूमिज मनुष्य क्षयोपशम समकित से क्षायिक समकित प्राप्ति की प्रक्रिया करता है, तब अन्तिम अन्तर्मुहूर्त्त में कृतकरण कहलाता है। कृतकरण होता हुआ यानी अनिवृत्तिकरण पूर्ण करने के बाद किसी जीव का मरण भी हो सकता है तथा जहाँ की आयु पूर्व में बाँध रखी है, वहाँ चारों गति में जाकर उत्पन्न हो सकता है। वहाँ उत्पन्न होकर समकित मोहनीय की शेष बची अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति को भोग कर क्षायिक समकित प्राप्त कर लेता है। ग्रन्थकारों के मतानुसार शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले-पहले वह क्षायिक समकित प्राप्त कर लेता है।

कृतकरण वाला जीव यदि पूर्वबद्धायु है तो नरक गति में प्रथम तीन नरक में, तिर्यञ्च गति में स्थलचर युगलिक में, मनुष्य में 30 अकर्म भूमि में, 5 भरत-5 ऐरवत के 1 से 3 पल्योपम की स्थिति वाले युगलिकों तथा देवगति में 35 वैमानिक देवों में (3 किल्विषी छोड़कर) जाकर उत्पन्न हो सकता है। यदि कृतकरण वाला मनुष्य अबद्धायु है तो वह मरण को प्राप्त नहीं होता है। वहीं मनुष्य भव में अन्तर्मुहूर्त्त में समकित मोहनीय को भोग कर क्षायिक समकित को प्राप्त कर लेता है।

जिज्ञासा– क्या समकित मोहनीय के उदय रहते कोई जीव नारकी-देवता में उत्पन्न हो सकता है?

समाधान– जिस जीव ने पूर्व में नरक अथवा देव की आयु का बन्ध कर लिया है तो ऐसे मनुष्य-तिर्यंच में सैद्धान्तिक मतानुसार मरण के समय में समकित मोहनीय का उदय रह सकता है तथा वह जीव समकित मोहनीय के उदय में 1 से 6 नरक तक में जाकर उत्पन्न हो सकता है। सातवीं नरक में तो उत्पन्न होते समय मिथ्यादृष्टि होने की नियमा है, इसलिए सातवीं नरक में उत्पन्न नहीं होता है। देवताओं में मनुष्य तो 81 जाति के देवों में (15 परमाधार्मिक तथा 3 किल्विषी को छोड़कर) उत्पन्न हो सकता है, लेकिन सन्नी तिर्यञ्च आठवें देवलोक तक उत्पन्न हो सकता है। इनमें भी इतना अवश्य जानना चाहिए कि समकित मोहनीय के उदय में यदि कोई मनुष्य-तिर्यञ्च आयु का बन्ध करता है तो वह वैमानिक देवों की ही आयु बाँधता है। इस कारण से वह वैमानिक देवों में ही उत्पन्न होता है, वह नारकी में उत्पन्न नहीं होता है।

-रजिस्ट्रार, अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर (राजस्थान)

सुबुद्धि आपे अन्तश्चेतन

श्री यल्लप्पा

जड़ पुद्गल सूँ निर्मित, शरीर रूपी आभवन।
आत्मा अमर अविनाशी, सुबुद्धि आपे अन्तश्चेतन।
सुबुद्धि आपे अन्तश्चेतन, भूल्या जिकोने निज ठौड़ लावे।
भेद ज्ञान के अभाव में, विभाव दशा चेतन परभावे।

कालराम आ धमक्यो जद, आ इमारत ढह जासी।
हँसा उड़ जावे इकलो, जड़ काया पुद्गल विलमासी।।

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 61
ISSN 2249-2011

आध्यात्मिक

जीवन की विदाई : मृत्यु

श्रीमती रतन चोरड़िया

ज़िन्दगी भर का कमाया, साथ में क्या जायेगा,
इस धरा का इस धरा पर, सब धरा रह जायेगा।
बीतने वाली घड़ी को, कौन लौटा पायेगा,
यह सुअवसर खो दिया, तो अन्त में पछतायेगा।।

जन्म और मृत्यु जीवन के दो छोर हैं। जन्म, मृत्यु का प्रारम्भ है। जो जन्मा है, वह अवश्य मरता ही है। हम भी प्रतिक्षण मर रहे हैं। क्षण-क्षण हमारा मरण हो रहा है। प्रतिक्षण हम मृत्यु के नजदीक जा रहे हैं। मृत्यु का बोध जीवन का सबसे बड़ा बोध है। मृत्यु जीवन का सबसे बड़ा शास्त्र है। प्रतिक्षण मृत्यु का सतत चिन्तन वैराग्य भावना को जन्म देता है। कर्मों के बन्धन से देह मिलती है एवं देह धारण करने वालों की मृत्यु निश्चित है। अत: मरने वाले के मन के परिणामों को शान्त करना चाहिए। आप कभी भी मरने वाले जीव को हमदर्दी के शब्द बोलकर मोह से विकल मत करिए। जैसे अभी छोटी उम्र है, छोटे-छोटे बच्चे हैं, सिर पर कर्जा है, बूढ़ी माँ है इनका क्या होगा? ऐसा अविवेक का कभी परिचय मत दीजिए। एक तो वह पहले ही मर रहा है, ऊपर से ऐसे मोह बढ़ाने वाले शब्द बोलकर आप उसे और मार रहे हो। ऐसा करने वाला स्वजन नहीं, दुर्जन है। मित्र नहीं, शत्रु है जो अन्त समय में भी मोह बढ़ाने का निमित्त बनता है। मृत्यु के समय हिम्मत दिलाने वाला चाहिये, जो पदार्थों से, सम्बन्धों से मोह विच्छिन्न कर सके, भेदज्ञान करवा सके। जो सम्यग्दर्शन को पुष्ट करे, उनको पास में रहना चाहिये। जो यह बताये कि आत्मा परमात्मा कैसे बनें।

अपने सच्चिदानन्द स्वरूप को हम समझें। आत्मा कभी नहीं बदलती है। वह सभी गतियों में, जातियों में, शरीरों में वही रहती है। यह शरीर मरणधर्मा है, पर आत्मा शाश्वत है और जन्म-मरण से परे है। मृत्यु को जानना ही जीवन का मर्म पाना है। जिसने जन्म लिया, उसके प्राण एक न एक दिन अवश्य छूटेंगे। कोई कितना ही शोक करे, दु:ख से मूर्च्छित हो जाये, रोये, चिल्लाये, छाती-माथा कूटे, पर मरा हुआ व्यक्ति कभी जीवित नहीं हो सकता। कोई भी व्यक्ति बुढ़ापे और मौत को लाँघ नहीं सकता। एक ही झपट्टे में बाज जैसे बटेर को मार डालता है वैसे ही आयु क्षीण होने पर मृत्यु जीवन को समाप्त कर देती है। मृत्यु का समय आने पर सारे मन्त्र-तन्त्र, औषध, जप-तप, डॉक्टर, वैद्य कोई भी बचा नहीं सकता।

मृत्यु अतिथि है, वह कभी भी आ सकती है। उसके आने की तिथि कभी निश्चित नहीं होती है। संसार का प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह राजा हो, सेठ हो, मन्त्री हो, पदाधिकारी हो, सभी मृत्यु की लाइन में लगे हैं। संसार घाट पर मरने वाले की लाइन लगी हुई है। पूरी दुनिया महा शमशान है। जिस स्थान पर आज हम बैठे हैं, उसी स्थान पर कितने ही मुर्दे दफ़ना दिये गये हैं। अत: किसी की आकस्मिक मृत्यु हो जाने पर आश्चर्य मत करना कि बेचारा बैठे-बैठे मर गया, चाय पीते-पीते मर गया। ट्रेन में, प्लेन में, आग में, पानी में, समुद्र में कब काल आ धमकता है पता नहीं चलता। मनुष्य नदी, तालाब में तैरने के लिये जाता है और डूब जाता है। अचानक आग लगती है और जल जाता है। अचानक मकान गिरता है और दब जाता है। घर से बाहर गया हुआ व्यक्ति वापस घर पहुँचेगा, किसको पता। सड़क पार करते हुए ही अचानक दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है। तुम बैठे हो सोफे पर, अचानक झटका लगा और हार्ट फैल हो गया। हल्का-सा बुखार आया और चल बसे, नहाते-नहाते पैर

फिसला और श्वास निकल गया। निमित्त चाहे कोई भी हो, मृत्यु का हमला होते ही यह शरीर मुर्दा बन जाता है, तब स्वजन इसे श्मशान में ले जाकर अग्नि में जला देते हैं। यह सत्य होने पर भी जीव को समझ में क्यों नहीं आता?

हमारे न चाहने पर भी शरीर में जानलेवा रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कभी हम मूर्च्छित होकर 'कोमा' में चले जाते हैं। मृत्यु की अग्रिम सूचना हमको कभी नहीं मिलती। काल को न कोई प्रमाद है और न लिहाज है तथा न किसी प्रकार की अनुकम्पा है। यह देह तो मिट्टी का खिलौना है, इसका टूटना तय है। जो श्वास भीतर जा रही है वह लौटकर आयेगी ही, इसकी भी कोई गारण्टी नहीं है। प्रत्येक श्वास लेते समय यह सोचना – हो न हो यह मेरी अन्तिम श्वास हो। जहाँ जिस रूप में मृत्यु होनी होती है वहाँ काल पहुँच ही जाता है अथवा व्यक्ति स्वयं काल तक पहुँच जाता है।

मृत्यु एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। जैसे हम पुराने कपड़े फट जाने पर उन्हें उतारकर नये कपड़े पहनकर प्रसन्नता का अनुभव करते हैं उसी प्रकार से यह शरीर भी जब वृद्ध या रोगग्रस्त होता है तब आत्मा इस जीर्ण-शीर्ण शरीर का त्याग कर नया शरीर धारण करती है। उस समय प्रसन्न होने के बजाय बाल एवं अज्ञानी जीव मृत्यु से डरते हैं, रोते एवं बिलखते हैं। मृत्यु का नाम सुनकर अच्छे-अच्छे व्यक्तियों के रोंगटें खड़े हो जाते हैं। लेकिन जो ज्ञानी होते हैं वे मृत्यु का स्वागत करते हैं। वे समझते हैं कि किये हुए कर्मों का फल भोगे बिना छुटकारा नहीं हो सकता। ज्ञानी हमें समझाते हैं कि-हे जीव! तू मृत्यु से भाग कर जायेगा कहाँ? वह तो छाया की तरह हर क्षण तेरे साथ-साथ चलती है। कर्मों को भोगने में समर्थ होने पर भी तू क्यों जी चुराता है? वृथा क्यों ब्याज बढ़ाता है? बुद्धिमानी इसी में है कि आर्त्त-रौद्रध्यान को दूर हटाकर समभाव रखकर शीघ्रातिशीघ्र सारा कर्जा चुका कर, अपने को हल्का कर लें। शरीर की क्षणभंगुरता और नश्वरता की सम्यक् जानकारी हमें हो जाये तो आत्मा को कर्मों की कैद से मुक्त किया जा सकता है। रोगों के डर से व्यक्ति गलत खाना तो बन्द कर देता है, पर दुर्गति एवं मरण के भय से पाप करना बन्द नहीं करता; यह कैसा आश्चर्य है?

अत: रोग के आने पर तुम सोचो कि शरीर रोग एवं बीमारियों का घर है। इसलिये मेरे शरीर में असहनीय पीड़ा हो रही है। शरीर को परिपूर्ण बनने में भले ही पूरे नौ महीने लगते हैं, पर मिटने में एक क्षण भी नहीं लगता। माँ के गर्भ में सवा नौ महीने गर्भावास की पीड़ा भुगत कर मेरा यह जीव बाहर आया है। वहाँ कैसी दुर्गन्ध से भरी एवं संकड़ी काल कोठरी थी। पूरे नौ महीने औंधा लटक कर वहाँ मैंने कितनी वेदना सही। वहाँ पर न खिड़की थी, न पंखा, न ए.सी. था और न कूलर था। किन्तु आज इस छोटे से रोग ने मुझे बेचैन कर दिया, इस वेदना को मैं सहन नहीं कर पाता हूँ। इस आत्मा ने अनन्त दु:ख नरक और तिर्यञ्च में अनिच्छा तथा परवशता में, अनन्त बार सहन किये हैं। उनके सामने यह छोटा सा दु:ख कुछ भी नहीं है। चारगति रूप दु:ख के सागर इस संसार में सुख कहाँ है? जिन्हें हम सुखी समझते हैं वे भी अन्दर में दु:खी हैं।

ऐसा बार-बार सोचे कि यह दु:ख, रोग, असाता मुझे मजबूत बनाने के लिए आते हैं। यह दर्द, पीड़ा मेरी सहनशीलता की परीक्षा लेने आते हैं। मुझे सजग एवं जागृत बनाने के लिए आते हैं। मेरी साधना को उज्ज्वल बनाने, मेरे जीवन को सुन्दर एवं श्रेष्ठ बनाने के लिए आते हैं। मुझे शरीर और रोगों की चिन्ता करके दु:खी नहीं होना है। बल्कि आत्म-रमणता में लीन बनने का पुरुषार्थ अधिक से अधिक कर जीवन को सफल बनाना है। दु:ख के समय धैर्य रखने से, समभाव से कर्म का फल भोगते हुए भी कर्मों का बन्ध नहीं होता।

यह देह भले ही अपवित्र है, बीभत्स है, अशुचि का भण्डार है, मल-मूत्र की खान है, रोगों का घर है, पर मुक्ति नगर में पहुँचाने वाली है, अत: दुर्लभ है। ज्ञानी कहते हैं कि अशुचि से भरे इस तन का सार यही है कि तू चाहे तो इसी शरीर से मोक्ष प्राप्त कर सकता है। हमें जो

यह देह मिली है वह व्यर्थ न जाये। इस स्वर्णिम अवसर को पाकर समभाव एवं सहनशील बनकर शुद्ध भावों में लीन बनकर मुक्ति की साधना कर लेनी चाहिए।

यह घर, मकान, धन-दौलत तभी तक हैं जब तक आँख खुली है। आँख मूँदते ही सब कुछ लुट जाता है। शत्रु-मित्र, अपने-पराये सब खत्म हो जाते हैं। यह महल, मकान, बंगले, तिजोरियाँ, हीरे-पन्ने, गहने सब ज्यों के त्यों पड़े रह जाते हैं। मनुष्य के साथ मात्र उसके अच्छे-बुरे कर्म जाते हैं। अन्तिम समय में पैसा बैंक में, गाड़ी गैरेज में, पत्नी बंगले में, परिवार श्मशान में, शरीर चिता पर लेटा रहता है। जीव अकेला ही यहाँ से चला जाता है। मुर्दा कभी राग-द्वेष नहीं करता, कारण शव में अनुभूति नहीं, शव में चेतना नहीं। किसी शव ने आज तक नहीं कहा कि यह मेरे हाथों की कमाई है। मेरे भुजाओं की कमाई है। मैंने बड़ी मेहनत से जोड़-जोड़ कर यह बंगला बनाया है, तुम कौन होते हो मुझे यहाँ से ले जाने वाले। ऐसा कहने की ताकत शव में नहीं। जैसे ही सच्चिदानन्द आत्मा निकली, शरीर को चौक में लाकर सुला दिया जाता है। इसलिये घर में प्रवेश करें तो श्मशान को याद करें। पलंग पर बैठें तो चिता को याद करें। नये कपड़े पहनने पर कफ़न को याद करें और वाहन पर बैठें तो सीढ़ी को याद करें। अन्तिम समय का दृश्य आपके सामने आ जायेगा।

जब तेरी डोली निकाली जायेगी,
बिन मुहूर्त्त के उठा ली जायेगी।
हे मुसाफ़िर! क्यों पसरता है यहाँ,
यह किराये का मिला तुमको मकाँ।।
कोठडी खाली करा ली जायेगी.....।।

देह में बैठे पंछी ने पंख फैला दिये हैं। प्राणों का पंछी उड़ान भरने की तैयारी कर रहा है। वह जल्दी ही उड़ान भर लेगा, फिर तुम कुछ नहीं कर पाओगे, हाथ मलते रह जाओगे। इसलिये जो करना है अभी कर लो। प्राण पखेरू उड़ें, उससे पहले अपने पूरे जीवन का निरीक्षण कर आलोचना द्वारा पापों का प्रायश्चित्त कर शुद्धि कर लो।

चिन्तन करें जिन विचारों से, जिन भावों से मेरी आत्मा मलिन बन रही है। ऐसे भावों से मैं कैसे अपनी आत्मा को बचाऊँ। जिससे संयोग में, वियोग में, सुख में, दुःख में, अनुकूलता-प्रतिकूलता में, हर्ष एवं शोक में, जिन्दगी के हर उतार-चढ़ाव में, आधि-व्याधि एवं उपाधि में, विषमता-विचित्रता में शान्ति और समता की अनुभूति कर सकूँ।

हम समझें कि अभी मेरा अंतिम समय चल रहा है। मेरे भाव अब अत्यन्त शुभ एवं शुद्ध हों। शरीर, परिवार, उपाधि सबका मोह धीरे-धीरे छूट जाय। अब मैं सभी जीवों से क्षमायाचना करूँ। किसी भी जीव के प्रति मन में वैर-विरोध-कटुता न रहे। मेरा ज्यादा से ज्यादा समय अब मौन में, सम्यक् चिन्तन तथा त्याग-प्रत्याख्यान में रहें। मेरा ध्यान अब पंच परमेष्ठी के चिन्तन में रहें। अब मेरी आत्मा का स्थानान्तरण होने वाला है। स्थानान्तरण में सब परिचित लोग, स्थान, सम्बन्ध, मकान आदि छूट गये, किन्तु ये सब नये मिल जायेंगे वैसे ही जैसे शादी होने के बाद लड़की के सब रिश्ते बदल जाते हैं। स्थानान्तरण हम स्वयं करते हैं कोई दूसरा नहीं करता। इस देह में जो तादात्म्य बुद्धि है, देह में जो आत्मबुद्धि है, पर पदार्थों में जो लगाव है, सम्बन्धी से जो मोह है उन सब निमित्तों में जीव राग-द्वेष आदि भाव करता है। यही भाव फिर से हमारी जन्मपत्री बनाते हैं। जैसा जीवन हमने जिया और जैसा जियेंगे, वैसी ही हमारी जन्मपत्री बनेगी। अतः जिन विचारों से, जिन भावों से मेरी आत्मा मलिन बन रही है, दुर्गति का मेहमान बन रही है ऐसे भावों से मैं अपनी आत्मा को कैसे बचाऊँ, जिससे जिन्दगी के हर उतार-चढ़ाव में, आधि-व्याधि एवं उपाधि में शान्ति तथा समता की अनुभूति कर सकूँ। तभी इस मनुष्य जन्म को पाने का सार समझ में आयेगा।

यह शरीर जिसे तू अपना मानकर ममत्व कर रहा है, आज तक इसे खिलाया, पिलाया, नहलाया, साज

शृङ्गार किये, फिर भी क्या हाल हो गया है। सिर के बाल सफेद, नेत्र ज्योति क्षीण, कानों से पूरा सुनाई नहीं देता, आँखों से पूरा दिखाई नहीं देता, दाँतों से पूरा चबाया नहीं जाता, हाथ-पैर ढीले हो गये, कमर और गर्दन झुक गई है। शरीर का एक-एक अंग कमजोर हो गया है, फिर भी मन का घोड़ा तेजी से दौड़ रहा है। अब तो इच्छाओं पर विराम लगा दो।

मृत्यु अनेक बार आई है, इस बार भी आयेगी, उसका हँसते-हँसते स्वागत करना है। उसकी सच्चाई को पहचानना है। यदि दुनियादारी की चिन्ता में उलझा रहा, मकान-दुकान, पुत्र-पत्नी की ही चिन्ता करता रहा तो मृत्यु विकराल बनकर तुझे दु:खी कर देगी। अत: अपनी भूलों का चिन्तन कर। जिन-जिनके साथ वैर की ग्रन्थी बन्धी है, उनसे क्षमायाचना कर ले। अपने कटुतापूर्ण व्यवहार के लिए पश्चात्ताप कर। कैसा भी कष्ट आये, उसे समभाव से सहन कर।

मृत्यु से समझौता नहीं होता,
रिश्वत लेना-देना भी नहीं होता,
हे प्रभो! जब भी मेरी मृत्यु हो,
मुझे आपकी शरण हो, सद्गुरु की कृपा हो,
धर्म एवं जिनवाणी मेरे रोम-रोम में गूँजती रहे।
सारे ममत्व भावों एवं पापों का मैं त्याग करूँ।।

हे प्रभो! मेरे घर में, मेरे द्वारा या मेरे पूर्वजों के द्वारा बसाया गया जो भी सामान हो, उसको मैं वोसिराती हूँ। मेरी मृत्यु के पूर्व ही मैं उन सबका त्याग करती हूँ। मेरे बाद उनका कोई भी उपयोग करें, उसका पाप मुझे न लगे।

हे प्रभो! मेरी मृत्यु पर कोई रोयेगा, कोई पानी गिरायेगा, कोई नहायेगा अथवा मेरे इस नश्वर शरीर में जीवोत्पत्ति होने के बाद उसका अग्नि संस्कार करेगा, उसका पाप मुझे न हो।

मेरा किसी भी जीव के साथ, किसी भी प्रकार का वैर-विरोध, शत्रुता का भाव नहीं है, विश्व के सभी जीवों के साथ मेरा मैत्री भाव है।

-फ्लेट नं. 301, रिद्धी टॉवर, रतन नगर, एम्स रोड़, जोधपुर-342008 (राज.)

मोक्ष-प्राप्ति-मार्ग

डॉ. रमेश 'मयंक'

मोक्ष प्राप्ति के मार्ग में
आगे बढ़ने के लिए जरूरी है-
जानना, मानना,
चलना और पालना
जानने हेतु-ज्ञान
मानने के लिए श्रद्धा
चलने के लिए चारित्र

और-
पालने के लिए पथ्य
यही है शाश्वत सत्य
पथ्य की युक्ति काम आएगी
धीरे-धीरे बीमारी दूर हो जाएगी,
चारित्रिक बल की शक्ति
श्रद्धा भाव जगाकर
विनयशील-सेवा भावी बनाएगी,
ज्ञान-प्राप्ति-पिपासा
स्वाध्याय-ध्यान-तप बढ़ाएगी

पानी-भाप में परिवर्तित होकर
हजारों टन वजन
इंजन के सहारे खींच पाता;
सद्वृत्तियाँ अपनाने वाला व्यक्ति
आत्मा को परमात्मा से मिलाता
साधक मोक्ष की मञ्ज़िल पर पहुँच जाता

-बी 8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़-312001 (राजस्थान)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 65
ISSN 2249-2011

संस्कृति-रक्षण

अपनी संस्कृति और संस्कारों को बचाओ

श्री शुभम बोहरा

एक लड़की से मैंने पूछा-बहन! तुमने यह Artificial Ear Rings, Locket और Ring क्यों पहनी है। तुम्हारे Branded कपड़ों से तो तुम गरीब नहीं लग रही।

लड़की-भाई! आजकल असली गहने पहनने का जमाना नहीं है, गली-गली में चोर घूम रहे हैं। घरवाले और पुलिस वाले हर कोई मना करता है असली गहने पहनने को।

मैंने पूछा-बहन! कोई तुम्हें ऐसा करने से कैसे रोक सकता है, जबकि यह तुम्हारा अधिकार (Rights) है। कानून भी तुम्हें ऐसा करने से नहीं रोक सकता। फिर तुम पर ऐसी पाबन्दी क्यों?

लड़की-तुम पागल तो नहीं हो गए। आज कल गली-गली चोर बदमाश घूम रहे हैं, क्या मैं इतने कीमती जवाहरात ऐसे ही लुटवाती रहूँ। अधिकार (Rights) तो तुम्हें याद हैं, पर कर्त्तव्य (Duty) भूल गए।

मैं बोला-बहन! मैं तुम्हें यही बताना चाहता था। तुम्हारे शरीर, तुम्हारी इज्जत से कीमती गहना कोई नहीं है। सोने, चाँदी, हीरे के गहने तो तुम छुपा कर रखती हो, पर अनमोल गहने की तुम नुमाइश कर रही हो।

जबकि तुम्हें भी पता है कि गली-गली दरिन्दे, हैवान घूम रहे हैं। छोटे कपड़े पहनना तुम्हारा अधिकार है, पर जैसे तुम सोना, चाँदी के गहनों को सम्भालना अपना कर्त्तव्य समझती हो, वैसे ही इज्जत को भी पर्दे में रखना तुम्हारा कर्त्तव्य है। चोर हो या बलात्कारी, उन्हें शिक्षा-संस्कार-इज्जत से कुछ लेना-देना नहीं है। हमें खुद ही सम्भल कर चलना पड़ेगा। अपनी आँखों पर से पश्चिमी सभ्यता का चश्मा उतारना होगा। नारी के जरा से वस्त्र खींच लेने मात्र पर महाभारत लड़ने वाले इस देश की आज दुर्दशा देखिये.....।

आज उसी नारी को शरीर पर दुपट्टा रखने को बोल दो तो महाभारत हो जाती है।

दस-पन्द्रह साल पहले के भारत की युवा बेटियाँ आमतौर पर घरों में से बाहर आरामदायक सलवार सूट पहने और दुपट्टा ओढ़े दिखाई देती थीं। अब हम कितने घरों में बेटियों को दैनिक जीवन में सलवार सूट पहने हुए शालीनता से दुपट्टा लिये हुए देखते हैं।

आजकल सम्भ्रान्त घरों की युवतियाँ भी न सिर्फ कॉलेज, वर्कप्लेस पर, बल्कि घरों में भी टाइट जींस, कैप्री, शॉर्ट्स आदि पहने रहती हैं। ऐसी पोशाकों में शरीर ढँकने का तो सवाल ही नहीं है और दुपट्टे के हटने से लुप्त होती लज्जा धीरे-धीरे टॉप, टी-शर्ट आदि पहनते-पहनते समाप्त ही हो जाती है।

कौन तो पूरा ढँका हुआ सलवार सूट पहने और कौन दुपट्टा सँभालता फिरे। इस विषय पर बात करना ही एक टैबू बना दिया गया है। फिर कहा जाता है कि कपड़े नहीं, तुम्हारी सोच खराब है। ऐसी कन्याओं द्वारा सलवार सूट आज भी अगर कभी पहना जाता है तो जब परम्परागत दिखने का ढोंग करना हो, मन्दिर जाना हो, इंस्टाग्राम, फेसबुक पर दीवाली पूजा की फोटो डालनी हो तब पहना जाता है।

खैर, यह रोग तो अब लाइलाज हो चुका। बरसों पहले दुपट्टा हटा चुकी पीढ़ी को चुनरी की लाज समझाने की फुर्सत किसे है? वैसे भी यह परिदृश्य यहाँ उदाहरण मात्र के लिए, यह बताने के लिए था कि बॉलीवुड किस प्रकार हमारे अचेतन मन पर नियन्त्रण करके हमारी पहनने-ओढ़ने, खाने-पीने की आदतों एवं हमारे सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव डालता है। हर समय दुपट्टा

लेना सम्भव नहीं है मैं समझ सकता हूँ, पर निरन्तर पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण करते-करते हमें जहाँ दुपट्टा लेना चाहिए, वहाँ भी लेना बन्द कर दिया है, क्योंकि सामान्यतः टॉप, टी-शर्ट आदि पहनते हैं तो अब बिना दुप्पटे के असहज नहीं लगता।

मेरा प्रश्न तो यह है कि आखिर भारतीय युवतियों के वस्त्रों में इतना बदलाव आया कैसे कि आज इस मुद्दे पर बात करना तक दूभर हो गया है। समाधान है निरन्तर बॉलीवुड द्वारा किये जा रहे मैनीपुलेशन से, ब्रेनवॉश से। फिल्मों में हीरोइनों के अधनंगे कपड़ों से प्रभावित होकर उनका अन्धानुकरण करते-करते हमारी पूरी युवापीढ़ी अपनी संस्कृति और संस्कार को भूलकर अपने आदर्श नायक-नायिका जैसे दिखने की आस में पूरी तरह गुमराह हो चुकी है।

गर्भवती अभिनेत्रियों द्वारा पूर्ण विकसित गर्भ के साथ पेट से कपड़े उघाड़कर फोटो सेशन कराने का एक नया फैशन चला है। जिस प्रकार बॉलीवुड के अन्धानुकरण के कारण हमारे परिवारों में आज वैलेंटाइन डे, हैलोवीन और प्रिवैडिंग शूट आदि धूमधाम से मनाये जाने लगे हैं, कल को हमारे परिवार की गर्भवती महिलाओं को भी तो फोटो शूट करवाने की इच्छा होगी। सोचिए, क्या आप अपनी पुत्री या पुत्रवधू को ऐसा फोटो सेशन करवाते देखकर प्रसन्न होंगे? यह अनावश्यक नग्नता मातृत्व का सम्मान है या अपमान? आखिर इस नग्नता दिखाने वाले बॉलीवुड और टी.वी. सीरियल का पूर्ण बहिष्कार करने के लिए हमें और कितने कारण चाहिए।

-संस्कार की पाठशाला, जलगाँव (महाराष्ट्र)

ऐ मेरे आत्मन्!

श्री धर्मेन्द्र कुमार जैन

ऐ मेरे आत्मन्! अपनी आत्मा ही अपने कर्मों को करने वाला और उनके फल को भोगने वाला है। अपनी आत्मा ही अपना दुश्मन और मित्र है। अच्छे रास्ते पर चलने वाला आत्मा अपना मित्र तथा बुरे रास्ते पर चलने वाला आत्मा अपना शत्रु होता है। अपने अच्छे आचरण या कर्मों द्वारा यह आत्मा अपने पास रहने वाली पत्नी, सन्तान, माता-पिता, निकटतम रिश्तेदार, अच्छे-सच्चे मित्र सभी को सुख देने वाला होता है। इसके विपरीत जो व्यक्ति बुरा आचरण करता है वह अपने निकट स्थित समस्त परिजनों को दुखी करता है। अच्छे कर्म से तात्पर्य है कि जिस कार्य से स्वयं का, पारिवारिक सदस्यों का और रिश्तेदारों का सम्मान बढ़े। दुराचरण करने वाले लोग अपने कर्मों को अच्छा मानते हैं और वे कहते हैं कि मैं किसी को दुःख नहीं देता, मैं किसी को धोखा नहीं देता। परन्तु वास्तव में वह सही नहीं कहता है। यह सच है कि वह व्यक्ति बुरा नहीं है, लेकिन उसके कर्म बुरे हैं।

आज यदि वह बुरे कर्मों को अपने विवेक या ज्ञान से जान ले, सच्चे हृदय से उन्हें बुरा जानकर अलग हो जाए, उनको छोड़ दें और जीवन में पहले की हुई गलतियों को दुबारा नहीं करें तो वह व्यक्ति अच्छा बन जाता है।

जब व्यक्ति झूठ बोलने लग जाता है, अपने दोषों को छिपाता है, अपनी गलतियों को छिपाने के लिए योजना बना कर झूठ बोलता है तो वे बुराइयाँ अपने अन्दर अड्डा जमा लेती हैं और वे बुराइयाँ भी मनुष्य को अच्छी लगने लगती हैं।

अतः वास्तव में जो व्यक्ति अपने जीवन को ईमानदारी से अच्छा बनाना चाहता है, उसे अपने पूर्व काल में किए गए दोषों को तथा वर्तमान में अपने भीतर स्थित दोषों को जानना होगा और जानकर त्याग करना होगा। तब ही वह अपने लिए, परिवार के लिए, समाज के लिए उपयोगी हो सकता है। स्वयं को तथा दूसरों को भी सुखी बनाने में समर्थ होता है। यदि वह ऐसा नहीं करता है और बुरे कार्यों को अच्छा मानकर करता रहता है तो अपनी करणी का फल स्वयं भोगता है।

-55-56, क्यूब लोट्स, फ्लेट नं. 102, अमृत नगर, इस्कॉन रोड़, जयपुर-302020 (राज.)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 67
ISSN 2249-2011

परिवार-स्तम्भ

अपने वचनों को सम्भालो

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

रिश्ते क्यों बिगड़ जाते हैं? सम्बन्धों में दरारें क्यों आ जाती हैं? आपस में झगड़े होने के कारण क्या हैं? वैर-भाव क्यों उत्पन्न हो जाता है? अपने ही बेगाने क्यों हो जाते हैं? परिवार में टकराव क्यों पैदा हो जाता है?

इन सब बातों का एक उत्तर है-वचनों को सम्भाल कर नहीं बोला, वचनों का सदुपयोग नहीं किया। ज्ञानीजन फरमाते हैं कि पहले वचनों को तोलो और फिर बोलो।

वचन, वचन का आँतरा, वचन के हाथ न पाँव।
एक वचन है औषधि, एक वचन है घाव।।

तलवार से दिया हुआ ज़ख्म ठीक हो सकता है, लेकिन वचनों के बाणों से दिया हुआ घाव कभी ठीक नहीं होता। व्यक्ति ताउम्र उसको भूलता नहीं है। कटुता की बातें रह-रहकर उसे पीड़ा पहुँचाती हैं। इसीलिए ज्ञानीजन हमें समझाते हैं कि अपने वचनों को सम्भालो और विवेकपूर्वक उनका उपयोग करो। ऐसा करने से परस्पर सम्बन्धों का माधुर्य कायम रहेगा।

किसी कवि ने ठीक कहा है-

मधुरभाषी मानव, जग को अपना बनाता है,
भाषा-विवेक रखना ही तो, धर्म सिखाता है।
दुनिया के आधे झगड़े, बोलने से होते हैं,
बोलकर बढ़ाता इज्जत, बोलकर ही खोते हैं।
कड़वी वाणी बोलकर, पहचान क्यों गँवाता है,
भाषा-विवेक रखना ही तो, धर्म सिखाता है।
शब्द की बड़ी है ताकत, शब्द मन्त्र होता है,
एक तो हँसाता जग को, दूसरा रुलाता है।
तौलकर के शब्द बोलो, मौन शक्ति दाता है,
भाषा-विवेक रखना ही तो, धर्म सिखाता है।।

पूर्वभव में वचनों का आदर नहीं करने से व्यक्ति गूँगा बन जाता है, बहरा बन जाता है अथवा बोलने में तुतलापन आ जाता है। आदेय नाम कर्म के उदय से आदर मिलता है और अनादेय नाम कर्म के उदय से अनादर होता है।

तीर्थंकर भगवान जब छद्म अवस्था में रहते हैं, वे प्राय: बोलते नहीं हैं। केवलज्ञान प्राप्त करने के बाद ही वाणी का उपयोग करते हैं। तीर्थंकर की देशना श्रोताओं को बहुत प्रिय लगती है।

चिन्तन करें कि मुझे कैसा बोलना है? आवश्यकता अनुसार बोलना, थोड़ा बोलना और मीठा बोलना, ये श्रावक की भाषा के गुण हैं। मनचाहा बोलने से, ज्यादा बोलने से अनचाहा सुनना पड़ता है। अतएव वाणी का उपयोग सम्यक् ढंग से होना चाहिए। प्रियवचन सबको अच्छे लगते हैं, इनसे सम्बन्धों में घनिष्ठता बढ़ती है।

स्मरण रहे ज्यादा बोलने वाली पायल पैरों में पहनी जाती है, चुप रहने वाला मुकुट सिर पर धारण किया जाता है। ज्ञानी फरमाते हैं कि हे भव्य आत्मन्! अपने वचनों को आदरणीय बनाओ।

1. जब काम पड़े तब बोलना चाहिए-बिना कारण बोलना अपनी प्रतिष्ठा को घटाना है। बड़े भाग्य से यह जिह्वा मिली है, इसका कभी भी दुरुपयोग नहीं करें। वचनों को कीमती मानकर अपनी जिह्वा का सही उपयोग करना चाहिए। बड़बोलेपन से सदैव बचना चाहिए। बिना आवश्यकता के बोलने की प्रवृत्ति से द्वन्द्व उत्पन्न होने का भय बना रहता है। हम अपनी प्रवृत्ति को सुधारें, आवश्यकता अनुसार ही वचनों का प्रयोग करें, जिससे रिश्तों में सामञ्जस्य बना रहेगा।

2. अभिमान रहित वाणी बोलना-स्वयं की

प्रशंसा करना निम्न स्तर का आचरण है। अहंकारपूर्ण भाषा बोलना अपनी पुण्यवाणी को घटाना है, वचन पुण्य को कम करना है। भाषा में विनय एवं सरलता होनी चाहिए। अहंकार की भाषा बोलने वाला व्यक्ति अपने परिवार, संघ-समाज और आध्यात्मिक क्षेत्र में अपना महत्त्व घटाने का कार्य करता है।

3. वचनों में तुच्छ शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए-बोलने में हमेशा ऊँची भाषा ही बोलनी चाहिए, उससे कुलीन घराने की पहचान होती है। जिसकी भाषा ऊँची रहती है वह विनयवान कहलाता है। सामने वाले के ऊपर उसके आदर्श व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ता है और बड़प्पन झलकता है। वहीं तुच्छ शब्दों का प्रयोग करने वाला व्यक्ति अपनी गरिमा को खो देता है। हल्की भाषा बोलकर द्वन्द्व को निमन्त्रण देता है। तुच्छ शब्दों से सामने वाले के दिल को गहरा आघात लगता है। भाषा की निम्नता महाभारत खड़ा कर देती है।

4. पहले वचनों को तोलो फिर बोलो-इस बात का ध्यान रखना है कि बोलने से पहले विचार कर लें कि क्या बोलना है और क्या नहीं बोलना है। बात रखने का ढंग सही होना चाहिए। मर्मकारी भाषा कभी नहीं बोलना चाहिए। भाषा का स्तर सही होने से एवं विवेकपूर्ण अपनी बात रखने से वार्तालाप सफल हो जाता है और कभी टकराव की स्थिति उत्पन्न नहीं होती। बोलने में कभी भूल से भी अपशब्दों का प्रयोग न हो, इसका पूरा ध्यान रखना चाहिए।

5. वचनों के प्रयोग की निपुणता होनी चाहिए-वचनों को व्यवस्थित तरीके से प्रस्तुत करने की कला हमारे पास होनी चाहिए। मधुर वाणी बोलने से हम सभी का मन जीत सकते हैं। अपने विचारों को संस्कारित रूप से अभिव्यक्त करना चाहिए। बोलने में तानाकशी नहीं करनी चाहिए, ताना मारने से तिल का ताड़ बन सकता है और सम्बन्धों में दरार पड़ सकती है।

भाषा की शालीनता नहीं रहने से, अशोभनीय भाषा बोलने से, यह कर्मबन्ध का कारण बन जाती है। इस कारण दु:स्वर नाम कर्म का उदय होता है और सुस्वर पाने के लिए तरसना पड़ता है।

ऊँचा जिनशासन मिला है अत: सदैव अपने विचारों को मधुर एवं पवित्र बनाने का प्रयास करना चाहिए। ज्ञानी फरमाते हैं कि दुर्लभ मनुष्य भव मिला है अत: मधुर वचन ही बोलें। वचनों पर नियन्त्रण रखकर अपने जीवन को सार्थक बनाया जा सकता है।

-जनतरा साड़ी सेण्टर, फरिश्ता कॉम्प्लेक्स, स्टेशन रोड़, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

जय-जय हस्ती श्रमण

श्री दिलीप गाँधी

महान् है श्रमणत्व आपका, जय-जय हस्ती श्रमण।
पावन हुई धरा वह, जहाँ पहुँचे आपके चरण।।
जिनवाणी को जन-जन पहुँचाने, आप चले अविराम।
हर शबरी की कुटिया पावन, करते रत्नसंघ के राम।
पुरुषोत्तम आपने किया, मर्यादा मूल्यों का जागरण।
महान् है श्रमणत्व आपका, जय-जय हस्ती श्रमण।।
सामायिक-स्वाध्याय से, युग धारा में भरे प्राण।
दृष्टि आपकी हो सदा, राष्ट्र का सर्वाङ्गीण निर्माण।
नई पीढ़ी को मिलता रहे, संस्कारों का सिञ्चन।
महान् है श्रमणत्व आपका, जय-जय हस्ती श्रमण।।
छाई है खुशियाँ संघ में, मना रहे हम जन्मोत्सव।
आपकी अमृत वर्षा गण में, खिलाती रहे नव पल्लव।
युगों-युगों तक प्रज्ञा पुरुष को, संघ करे नमन।
महान् है श्रमणत्व आपका, जय-जय हस्ती श्रमण।।
होगा बेड़ा पार, मुझ शरणागत को है विश्वास।
आप ही मेरे प्राण हो, और आप ही मेरे श्वास।
नाम आपका हो जयवन्ता, 'गाँधी' हर पल हर क्षण।
महान् है श्रमणत्व आपका, जय-जय हस्ती श्रमण।।

-117, कैलाशपुरी, निम्बाहेड़ा रोड़, चित्तौड़गढ़-312001 (राजस्थान)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 69
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

जैसा खाए अन्न वैसा होए मन

श्री जयदीप ढड्ढा

हम जो भी खाते हैं, उसका असर हमारे शरीर पर ही नहीं, आचार-विचार पर भी पड़ता है। हमारे शास्त्र ही नहीं, विज्ञान तक मानता है कि यदि अन्न मेहनत और ईमानदारी से कमाया हुआ नहीं है, तो इसका असर हमारी सोच पर भी हो सकता है। इसका भी प्रभाव पड़ता है कि वह भोजन कितने मन से बनाया और परोसा है? खाते समय आप किसी तनाव में तो नहीं थे?

आहार का विचारों के साथ गहरा सम्बन्ध है। इसलिए कहा जाता है, जैसा खाए अन्न वैसा होए मन। मांसाहार को तामसिक भोजन माना गया है। तामसिक भोजन से मन अशान्त होता है। यह हमारे अच्छे गुणों को नष्ट कर देता है। यह तनाव, टकराव और हिंसा पैदा करता है। उन्माद पैदा करता है। व्यक्ति में सही-गलत का विवेक नहीं रहता। ब्लड प्रेशर, हृदयाघात, किडनी और लीवर से जुडी बीमारियाँ होने की आशंका रहती है। भारत में तो यह दृष्टिकोण शुरू से ही रहा है कि सात्त्विक भोजन अमृत और तामसिक भोजन ज़हर के समान है। सात्त्विक आहार के बिना विश्व शान्ति का सपना कभी सफल नहीं हो सकता। इसलिए यहाँ विश्व की तुलना में ज्यादा शाकाहारी हैं।

अब तो विश्व के कई देश मांसाहार छोड़कर शाकाहार अपनाने लगे हैं। वे केवल शाकाहार ही नहीं वीगन डाइट तक के पक्ष में हैं। एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार ब्रिटेन, इजरायल, आस्ट्रेलिया, थाइलैण्ड, श्रीलंका, जर्मनी, ताईवान, अमरीका, इण्डोनेशिया ये सभी वीगन डाइट को महत्त्व देने लगे हैं। इसलिए यहाँ वीगन रेस्टोरेंट आसानी से देखने को मिल जाते हैं। कहने को वेजीटेरियन और वीगन दोनों ही शाकाहारी हैं, पर थोडे अन्तर के साथ। शाकाहारी को पशुओं की खाल से बने परिधान पहनने में कोई हिचक नहीं होती, न ही डेयरी उत्पादों का उपयोग करने से कोई परहेज। इसके विपरीत वीगन डेयरी उत्पाद सहित सभी तरह के पशु प्रदत्त उत्पादों को खाने और पहनने का निषेध करते हैं। वे उनका किसी भी रूप में प्रयोग नहीं करते। उनकी भावना और कोशिश यही रहती है कि पशुओं का जहाँ तक सम्भव हो सके शोषण नहीं हो। उनका मानना है कि पृथ्वी के सभी जीवों को जीने का और आजादी से रहने का अधिकार है, इसलिए सभी प्रकार की जीव हत्या का वे डटकर विरोध करते हैं। वे उनका दूध पीने तथा दूध से बनी वस्तुओं का उपयोग करने तक का विरोध करते हैं। उनका तर्क है कि दूध के और भी विकल्प हैं जैसे प्राचीन काल से चला आ रहा नारियल-दूध, सोया तथा बादाम दूध आदि। वे इस बात का भी दावा करते हैं कि डेयरी उत्पाद सेहत के लिए सही नहीं हैं।

वीगन डाइट वाले मानते हैं कि उनके आहार में शरीर के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्त्व होते हैं। आज विज्ञान ने भी शाकाहारी और वीगन डाइट को सात्त्विक भोजन माना है। इसे औषधि के रूप में मान्यता दी है। इसलिए यह विश्व स्तर पर लोकप्रिय हो रहा है। ब्रिटिश डाइटेटिक असोसिएशन और अमेरिकन एकेडमी ऑफ न्यूट्रिशन एण्ड डाइटेटिक्स दोनों की मान्यता है कि वीगन डाइट हर उम्र के लिए उपयुक्त है। कुछ शोधों का निष्कर्ष है कि वीगन डाइट उच्च रक्तचाप और कोलेस्ट्रोल को नियन्त्रित करती है। हृदय रोग, टाइप 2 मधुमेह और कुछ प्रकार के कैंसर से भी बचाव करती है तथा ऑटिज्म के रोगियों में सुधार लाने में भी मदद मिलती है। पशु उत्पादों से परहेज करने का मतलब यही है कि वीगन डाइट वाला दुनिया के किसी भी कोने में पशुओं पर हो रही क्रूरता के विरुद्ध है। यह अहिंसा की ओर एक सशक्त क़दम है।

-ढड्ढा मार्केट, जौहरी बाजार, जयपुर-302003

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 70
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

धर्म का मूल आधार : आत्मा और परमात्मा

श्री ओ. पी. चपलोत (सी.ए.)

विश्व के समस्त धर्मों का मूल आधार है- आत्मा और परमात्मा। इन्हीं दो तत्त्व रूप स्तम्भों पर धर्म का भव्य भवन खड़ा होता है। इनमें से विश्व की कुछ धर्म परम्पराएँ आत्मवादी होने के साथ-साथ ईश्वरवादी हैं और कुछ अनीश्वरवादी।

ईश्वरवादी परम्परा वह है जिसमें सृष्टि का कर्त्ता-धर्ता या नियामक एक सर्वशक्तिमान ईश्वर या परमात्मा माना जाता है। सृष्टि का सब कुछ उसी पर निर्भर है। उसे ब्रह्मा, विधाता, परमपिता आदि कहा जाता है। इस परम्परा की मान्यता के अनुसार भू-मण्डल पर जब-जब अधर्म बढ़ता है, धर्म का ह्रास होता है, तब-तब भगवान अवतार लेते हैं और दुष्टों का दमन करके विश्व में सदाचार का बीज वपन करते हैं।

दूसरी परम्परा आत्मवादी होने के साथ-साथ अनीश्वरवादी है, जो व्यक्ति के स्वतन्त्र विकास में विश्वास करती है। प्रत्येक व्यक्ति या जीव पुरुषार्थ के बल पर अपना सम्पूर्ण विकास कर सकता है। अपने में राग-द्वेष विहीनता या वीतरागता का सर्वोच्च विकास करके परमपद को प्राप्त करता है। वह स्वयं ही अपना नियामक या सञ्चालक है। वह स्वयं ही अपना मित्र एवं शत्रु है। जैनधर्म इसी परम्परा का प्रतिपादक स्वतन्त्र वैज्ञानिक धर्म है। यह परम्परा संक्षेप में श्रमण-संस्कृति के नाम से पहचानी जाती है। इस आध्यात्मिक परम्परा में बोद्ध आदि अन्य धर्म भी आते हैं। ईश्वरवादी भारतीय परम्परा बाह्मण संस्कृति के नाम से जानी जाती है।

जैनधर्म के मुख्य सिद्धान्त है

(I) आत्मा है।

(II) संसारी आत्मा का पुनर्जन्म होता है।

(III) वह कर्म की कर्त्ता है।

(IV) वह कृत कर्म के फल का भोक्ता है।

(V) बन्धन है और उसके हेतु हैं।

(VI) मोक्ष है और उसके हेतु हैं।

जैनदर्शन के अनुसार कर्म मुक्त जीव ही परमात्मा होते हैं

इस सिद्धान्त के अनुसार हर आत्मा में परमात्मा होने की क्षमता है। काल, स्वभाव, नियति, पुरुषार्थ आदि का उचित योग मिलने पर ही आत्मा परमात्मा हो जाती है। बन्धन से मुक्त होकर अपने विशुद्ध रूप में प्रकट हो जाती है। यही जैनदर्शन का आदि से अन्त तक आध्यात्मिक दर्शन है। उसका समग्र चित्र आत्मकर्त्तव्य की रेखाओं से निर्मित है। जैनधर्म का मूल लक्ष्य है- मनुष्य वीतराग बने और वीतराग बनकर परमात्मपद को प्राप्त करे।

वस्तु का स्वभाव ही वस्तु का धर्म है

वत्थुसहावो धम्मो, खमादिभावो य दसविहो धम्मो।
रयणं तयं च धम्मो, जीवाणं रक्खणं धम्मो।

अर्थात् वस्तु का स्वभाव ही उसका धर्म है। क्षमा आदि दस प्रकार के भाव धर्म के लक्षण हैं। ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूप रत्नत्रय धर्म है। जीवों की रक्षा करना धर्म है। जैसे-मिश्री का स्वभाव मिठास, अग्नि का स्वभाव उष्णता, पानी का स्वभाव शीतलता है, उसी प्रकार आत्मा का स्वभाव ज्ञान, दर्शन, सुख एवं वीर्य है। मुख्यता से कहें तो ज्ञाता-द्रष्टा भाव ही आत्मा का स्वभाव है और द्रव्य का जो स्वभाव होता है, उसके बिना उसका अस्तित्व सिद्ध नहीं होता है, अत: आत्मा का स्वभाव हुआ ज्ञान-दर्शन। आत्मा ज्ञानदर्शन रूप एक शाश्वत, नित्य एवं ध्रुव द्रव्य है। ज्ञानदर्शन आदि स्वभाव गुण के अतिरिक्त अन्य सभी भाव जो परद्रव्य

के निमित्त से हों, वे बहिर्भाव हैं, संयोगी भाव हैं। इसी को स्पष्ट करते हुए आगे कहा गया है–

एगो मे सासओ अप्पा, नाणदंसणसंजुओ।
सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संजोगलक्खणा।।

द्रव्य या वस्तु अपने ही स्वभाव में रह सकती है। स्वभाव त्रैकालिक होता है। सर्व अवस्थाओं में उसका अस्तित्व रहता है। यदि अग्नि के संयोग से पानी उष्ण भी हो गया हो तो अग्नि–संसर्ग के परे होते ही वह स्वयमेव शीतल हो जाता है। उष्णता असहज है, विभाव है, शीतलता सहज है। जिस समय अग्नि के संसर्ग से उष्णता आई भी हो तो वहाँ सत्ता में तो शीतलता पड़ी ही है। वस्तु के ये विभाव परिणमन, पर संयोग (पानी का अग्नि से संयोग) से होते है अत: पर भाव है, संयोगी भाव है।

दशवैकालिकसूत्र की प्रथम गाथा में ही जैनधर्म की महत्ता निम्न श्लोक में दर्शायी है–

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसा संजमो तवो।
देवावि तं नमंसंति जस्स धम्मे सया मणो।।

धर्म उत्कृष्ट मंगल है। अहिंसा, संयम और तप धर्म के तीन रूप हैं। जिसका मन (विश्वास) धर्म में स्थिर है, उसे देवता भी नमस्कार करते हैं।

अर्थात् अहिंसा, संयम और तपमय धर्म उत्कृष्ट मंगल है। मात्र अहिंसा नहीं अहिंसा के साथ तप और संयम होने पर ही आत्म धर्म प्रकट होता है यानी इन तीनों के संयोग से ही आत्मा विभाव दशा से हटकर अपनी शुद्ध स्वभाव दशा में आकर मोक्ष की ओर अग्रसर होती है।

दो विरोधी गुण एक साथ कैसे रह सकते हैं?

मन में एक प्रश्न उठता है कि दो विरोधी स्वभाव एक साथ कैसे रह सकते हैं। इसको एक दृष्टान्त से समझें। ऊपर के विवेचन में बताया गया है कि पानी का स्वभाव शीतलता है। किन्तु जब उसे अग्नि का संसर्ग मिलता है तो वह उबलने लगता है एवं उष्ण हो जाता है यहाँ यह शंका होना स्वाभाविक है कि क्या उष्णता का स्वभाव भी पानी का ही है। यदि यह सत्य है तो क्या दो विरोधी गुण एक ही द्रव्य में एक साथ रह सकते हैं?

इसका उत्तर है कि पानी में जो उष्णता आई है वह अग्नि के निमित के कारण पैदा हुई है। यह पानी का स्वभाव नहीं है। किन्तु जैसे ही अग्नि से संसर्ग हटेगा तो धीरे–धीरे वह अपने स्वभाव यानी शीतलता को प्राप्त कर लेगा। इसे अधिक स्पष्ट इस बात से भी समझा जा सकता है कि यदि गर्म पानी को भी अग्नि पर डाला जाय तब अग्नि बुझ जाएगी। इससे यह सिद्ध होता है कि पानी के स्वाभाविक गुण शीतलता ने ही अग्नि को बुझाया। चूँकि अग्नि से तो अग्नि बुझ पाना सम्भव नहीं है। ये दो विरोधी गुण पर–संयोग से दिखाई देते हैं, किन्तु मूल रूप में तो द्रव्य का अपना गुण रहता ही है। यही स्थिति हमारी आत्मा की है जो आठ कर्मों से बद्ध होने पर विभाव दशा में रहती है। किन्तु उसके मूल गुण तो आत्मा की सत्ता में रहते ही हैं। जैसे ही आत्मा कर्मों से मुक्त होती है तो वह अपने मूल स्वभाव में आती है एवं उसके मूल गुण प्रकट हो जाते हैं।

–145, प्रथम मञ्जिल, माचाला मार्ग, पारस होटल के सामने, एच.डी.एफ.सी. बैंक के पास, उदयपुर

जिनवाणी पर अभिमत

श्री चम्पालाल बोथरा

जिनवाणी दिसम्बर 2022 का अंक मिला, पढ़कर मन को हर्ष एवं आनन्द हुआ। सन्त–सतियों के प्रवचनों के साथ–साथ प्रबुद्ध लेखकों के लेख भी प्रेरणास्पद होते हैं। श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. का प्रवचन 'भावों की साधना है तीन मनोरथ' से श्रावकों को मनोरथ के विषय में विशेष जानकारी प्राप्त हुई। श्री त्रिलोकचन्दजी जैन का 'आचार्यश्री हीरा का विराट् व्यक्तित्व' लेख आचार्य भगवन्त के गुणों का विशेष वर्णन करने वाला है। श्री तरुणजी बोहरा 'तीर्थ' का 'प्लीज भैया! उसे बचा लो' लेख को पढ़कर हमारे समाज की लड़कियाँ अपने जीवन को सुधारने का प्रयास करेंगी।

–साहुकारपेट, चेन्नई

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 72
ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

जीवन में जरूरी है लक्ष्मण रेखा

श्री गौतम पारख

अति का अन्त, अति सर्वत्र वर्जयेत्, अतिक्रमण दु:खदायी, ये सारे मुहावरे न जाने क्यों रुकने, ठहरने और चिन्तन करने का बोध देते हैं। इन शब्दों के उच्चारण मात्र से आवाज आती है, रुक जा, अति मत कर, लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन सदैव आपत्ति का आमन्त्रण है, अनिष्ट की परछाई है, विनाश की जड़ है। अत: सम्भल जा, पीछे लौट जा। अन्याय, अत्याचार अति से बच जा। नहीं तो अनर्थ होते देर नहीं लगेगी। तेरे अहंकार, सत्ता, सम्पत्ति और अधिकार तुझे ही ले डूबेंगे। अजीर्ण होना, मद में बेहोश होना, दूसरे का अधिकार छीनना, अपने अधिकार का दुरुपयोग करना, महिमा मण्डित करने की होड़ में दौड़ना ही तो अति की परिभाषा है। शक्ति का दुरुपयोग, सत्ता की बेभानी, सम्पत्ति का नशा, विद्वत्ता का उन्माद, लोभ की पराकाष्ठा, स्वार्थ की गहरी बू, आस्था का शोषण, अपेक्षा-उपेक्षा का दलदल ही तो अतिक्रमण है। अति ही तो विनाश की पगडण्डी है।

सफलता, यश, उपलब्धि को नहीं पचा पाना, दुरुपयोग करना, अतिक्रमण की कहानी लिख जाता है। पुण्यवानी और पुरुषार्थ से प्राप्त सफलता लक्ष्मण रेखा के अन्दर पल्लवित-पुष्पित होती है, अन्यथा बाढ़ की तरह कई वृक्षों, बस्तियों, जानवरों, व्यक्तियों को उजाड़ कर, बहाकर विनाश के द्वार पर खड़ा कर देती है। लक्ष्मण रेखा से आगे आकर सफलता एवं यश की बेभानी भी विनाश का पैगाम देने लगती है।

अनायास मेरा ध्यान विभिन्न संस्थाओं की दीवारों, प्रवेश द्वार पर लिखे गये विभिन्न वाक्यों पर टिक गया। स्मृतिपटल पर उभरने वाले वाक्य मानो आँखों के सामने चलचित्र के समान घूमने लगे। जैसे-'कृपया सलाह न दें', 'अपना जोखम स्वयं सम्भाल कर रखें', 'यहाँ पेशाब करना मना है', 'प्रवेश वर्जित है', 'दुर्घटना से देर भली', 'कुत्ते से सावधान', 'रिश्वत न देवें', 'पॉकेट मारों से बचें', 'दान देकर रसीद अवश्य प्राप्त करें', 'बुरी नज़र वाले तेरा मुँह काला' आदि। मैं सोचने लगा कि इन वाक्यों में दी गई हिदायतों का जब भी उल्लंघन होता है, इन से ध्यान हटता है अथवा लापरवाह होती है तो निश्चित रूप से उसे अपमान, हानि, उपालम्भ ही प्राप्त होता है। दी गई हिदायतों को नहीं पालना भी अतिक्रमण है, अति है।

मैं सोचने लगा कि किसी की मजबूरी का, विवशता का, परिस्थितिजन्य लाचारी का फायदा उठाना, उन्हें कष्ट देना, शोषण करना, उपेक्षा करना भी तो अति की परिधि में आता है। ऐसा अतिक्रमण क्षणिक सुख, सम्पत्ति अवश्य दे दे, लेकिन उनसे मिलने वाली बद्दुआ, दुराशीष न जाने हमें किस विपत्ति पर लाकर खड़ा कर देगा; कहा नहीं जा सकता।

धार्मिक, साम्प्रदायिक, मज़हबी उन्माद प्रेम की डोर को नफ़रत की आग से जलाकर भस्म कर देता है। संगठनों का होना उचित हो सकता है, लेकिन इन संगठनों को दिशा विहीन कर नफ़रत फैलाने का अस्त्र बना लेना पीड़ाकारी ही नहीं दुर्भाग्यपूर्ण है। धार्मिक, साम्प्रदायिक, मज़हबी उन्माद जब दिशा विहीन हो जाता है तो उपद्रव, दंगे, तोड़फोड़, आगजनी भी करवाने में पीछे नहीं रहता। अनियन्त्रित भीड़ न जाने कितने निरपराधियों का सुख-चैन, परिवार, आशियाना छीन लेती है। नफ़रत के गहरे संस्कारों, मरो और मारो के प्रशिक्षण ने ही तो आतंकवाद, नक्सलवाद को जन्म दिया। निरपराधियों तथा सुरक्षाबलों के ही खून के प्यासे बनकर आतंकवादियों एवं नक्सलियों ने मानवता को ही शर्मसार कर दिया। नफरत, विद्वेष की अति आगे जाकर

स्वयं को ही असुरक्षित कर देती है।

मैं सोचने लगा आखिर अति अस्थायी क्यों होती है। अति का अन्त दु:खद ही होता है। स्वयं के सामर्थ्य की अनभिज्ञता से लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन ही तो अति की ऊँची उड़ान भराकर औंधे मुँह गिराता है, जिसको कोई रोने वाला भी नहीं बचता। अहंकार एवं अति ज़िद की पराकाष्ठा महल को भी ठोकर मरवा देती है तो झोंपड़ी को भी ठोकर मार देती है।

मेरा ध्यान शहंशाह, हिटलर पर आकर टिक गया। विश्व विजेता बनने, एक छत्रराज्य करने के लोभवश, न जाने कितनों को जिंदा रौंदते हुए आगे बढ़ने लगा। विजय की ओर बढ़ने लगा। हुकूमत चलने लगी। लेकिन एक दिन उसकी आत्मा से आवाज आने लगी कि आगे क्या, आगे क्या? तूने जैसे हजारों लोगों को मौत के घाट उतार दिया; एक दिन मौका पाकर तुझे भी लोग मौत के घाट उतार देंगे। तेरी अति तानाशाही ही तेरे मौत का कारण बनेगी। कोई तेरे पीछे रोने वाला नहीं मिलेगा। सोचते-सोचते हिटलर तनाव में आ गया और उसने आत्महत्या कर ली। अति का अन्त हो गया।

मैं चिन्तन की गहराई में खो गया कि सिकन्दर भी विश्वविजेता बनने निकला था। न जाने कितनों को मौत के घाट उतार दिया, कितनों को कारागृहों में बन्दी बना दिया। बद्दुआओं की, दुराशीषों की गठरी बाँध ली। अति का जब अन्त हुआ और आत्मा से आवाज आने लगी कि सिकन्दर तूने यह क्या किया? आत्मा धिक्कारने लगी। गुरु का बोध मिला और अन्त में उसे कहना पड़ा कि जब मेरी शवयात्रा निकले, मेरी दोनों खाली हथेली बाहर निकाल देना। दुनिया से मेरा यह पैगाम कह देना कि मैं खाली हाथ आया था और खाली हाथ ही चला गया।

मेरे आँखों के सामने द्रौपदीजी के चीरहरण का दृश्य भी अनायास घूमने लगा। दुर्योधन द्वारा निर्लज्जता की पराकाष्ठा करके चीरहरण की अति ने कौरव वंश का ही नाश कर दिया। सौ भाई पूरे मारे गये। श्री कृष्णजी ने चीर बढ़ाकर नारी की इज्जत सुरक्षित रख दी।

पुन: मेरा ध्यान द्रौपदीजी पर आकर टिक गया। भाषा एवं वचन की मर्यादा उन्होंने खो दी। पाण्डवों के ज्येष्ठ अनुज दुर्योधन को ही अन्धे का बेटा अन्धा कह दिया। वचन-व्यवहार और कुल-मर्यादा का उल्लंघन हुआ। लक्ष्मण रेखा का अतिक्रमण हुआ और युद्ध के निमित्तों में एक निमित्त द्रौपदीजी बन गईं।

मैंने अनुभव किया पुण्यवानी के कारण सफलता की लम्बी शृङ्खला के साथ जब श्रेय की बौछार होने लगती है तो व्यक्ति फूला नहीं समाता। केवल मैं, मेरा निर्णय, मेरी फौज, मेरी सम्पत्ति, मेरी सत्ता की भाषा उसे बेभान बना देती है। वह भूल जाता है कि अति का अन्त होता है।

प्रभु से हम प्रार्थना करें कि हे प्रभो! अति, अतिक्रमण से हमें सदा बचाये रखना। हे प्रभो! सत्य से साक्षात्कार कर उसे स्वीकाराने की क्षमता हमें देते रहना, ताकि हमें यथार्थ का बोध होता रहे। सत्य पीड़ाकारी एवं नग्न भी हो सकता है, लेकिन उसे भी अहोभाव से स्वीकारने का महामन्त्र हमें सिखाते रहना, ताकि लोभ, अंहकार और बेभानी से हम बच सकें।

-राजनान्दगाँव (छत्तीसगढ़)

वर्ष 2023 मंगलमय हो

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं जिनवाणी परिवार की ओर से संघ की सभी संस्थाओं के पदाधिकारियों, सदस्यों, लेखकों एवं पाठकगण को नूतन वर्ष 2023 हेतु हार्दिक मंगलकामनाएँ। यह नूतन वर्ष हम सबको ज्ञान-सम्पन्न, शक्ति-सम्पन्न, स्वास्थ्य-सम्पन्न, आचार-सम्पन्न एवं मैत्री-सम्पन्न बनाने वाला सिद्ध हो, ऐसी हार्दिक शुभकामनाएँ।

-सम्पादक

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 74
ISSN 2249-2011

सेवा का रूप

मैं तो जानता हूँ

संकलयिता : श्री एस. कन्हैयालाल गोलेछा

सुबह सूर्योदय हुआ ही था कि एक वयोवृद्ध सज्जन डॉक्टर के दरवाजे पर आकर घण्टी बजाने लगे। वृद्ध को देखते ही डॉक्टर की पत्नी ने कहा-''दादा! आज इतनी सुबह? क्या परेशानी हो गई आपको?'' वृद्ध ने कहा-''मेरे अंगुठे के टाँके कटवाने आया हूँ। मुझे 9 बजे दूसरी जगह पहुँचना होता है इसलिए जल्दी आया।''

डॉक्टर के पड़ोस वाले मोहल्ले में ही वयोवृद्ध का निवास था। जब भी जरूरत पड़ती वह डॉक्टर के पास आ जाते थे। इसलिए डॉक्टर उनसे परिचित था। उसने कमरे से बाहर आकर कहा कोई बात नहीं दादा, बैठो। बताओ आपका अंगूठा। डॉक्टर ने पूरे ध्यान से अंगूठे के टाँके खोले और कहा-''दादा बहुत बढ़िया है। आपका घाव भर गया है। फिर भी मैं पट्टी लगा देता हूँ जिससे इस पर कहीं चोट न पहुँचे।''

डॉक्टर ने पट्टी लगाकर पूछा-''दादा आपको कहाँ पहुँचना पड़ता है 9 बजे। आपको देर हो गई हो तो मैं चलकर आपको छोड़ आता हूँ।'' वृद्ध ने कहा कि नहीं-नहीं डॉक्टर साहब! अभी तो मैं घर जाऊँगा, नाश्ता तैयार करूँगा, फिर यहाँ से निकलूँगा और बराबर 9.00 बजे पहुँच जाऊँगा। दादा जाने के लिए खड़े हुए तभी डॉक्टर की पत्नी ने आकर कहा-''दादा! आज नाश्ता यहीं पर कर लो।'' वृद्ध ने कहा कि-''नहीं बहन! मैं तो यहाँ नाश्ता कर लेता, परन्तु उसको नाश्ता कौन करायेगा? डॉक्टर ने पूछा किसको नाश्ता कराना है? तब वृद्ध ने कहा कि मेरी पत्नी को। तो वह कहाँ रहती है और 9.00 बजे आपको कहाँ पहुँचना होता है? दोनों ने पूछा।

वृद्ध ने कहा-''डॉक्टर साहब! वह तो मेरे बिना रहती ही नहीं थी, परन्तु अब वह अस्वस्थ है तो नर्सिंग होम में ही है।'' डॉक्टर ने पूछा-''क्यों? उनको क्या तकलीफ है?''

वृद्ध ने कहा-''मेरी पत्नी को अल्ज़ाइमर हो गया है। उसकी याददाश्त चली गई है, पिछले 5 साल से। वह मुझको पहचानती नहीं है। मैं नर्सिंग होम में जाता हूँ। उसको नाश्ता खिलाता हूँ तो वह फटी आँख से, शून्य नेत्रों से मुझे देखती है। मैं उसके लिए अनजान हो गया हूँ।''

डॉक्टर और उसकी पत्नी ने कहा-''दादा! आप पाँच साल से रोज नर्सिंग होम में उनको नाश्ता एवं भोजन कराने जाते हो? आप इतने वृद्ध हो, आप थकते नहीं हो, ऊबते नहीं हो?''

उन्होंने कहा कि मैं दिन में तीन बार जाता हूँ। डॉक्टर साहब! उसने जिन्दगी में मेरी बहुत सेवा की और आज मैं उसके सहारे जिन्दगी जी रहा हूँ। उसको देखता हूँ तो मेरा मन भर जाता है। अगर वह न होती तो अभी तक मैंने भी बिस्तर पकड़ लिया होता, लेकिन उसको ठीक करना है, उसकी सम्भाल करना है, इसलिए मुझमें रोज ताकत आ जाती है। सुबह उठता हूँ तो तैयार होकर काम में लग जाता हूँ। मेरा यह भाव रहता है कि उससे मिलने जाना है। उसके साथ नाश्ता करना है। उसके साथ नाश्ता करने का आनन्द ही अलग है। मैं अपने हाथ से उसको नाश्ता खिलाता हूँ।

डॉक्टर साहब ने कहा-''दादा! वह तो आपको पहचानती नहीं, न तो आपके सामने बोलती है, न हँसती है, तो भी तुम मिलने जाते हो।'' तब उस समय वृद्ध ने जो शब्द कहे, वह शब्द दुनिया में सबसे अधिक हृदयस्पर्शी और मार्मिक हैं। वृद्ध बोले-''डॉक्टर साहब! वह नहीं जानती कि मैं कौन हूँ? पर मैं तो जानता हूँ कि वह कौन है?'' इतना कहते ही वृद्ध की आँखों से पानी की धारा बहने लगी। डॉक्टर और उसकी पत्नी की आँखें भी गीली हो गई। वृद्ध को मानवीय कर्त्तव्य का बोध प्रसन्न रख रहा था।

-नं. 7/25, कामराज सालै आर.ए. पुरम, चेन्नई-600028 (तमिलनाडु)

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

श्री गौत्तमचन्द जैन

योगविंशिका प्रकरणम्-रचयिता-याकिनी महत्तरा सुनू आचार्य हरिभद्रसूरिजी म.सा.। **टीकाकार**-न्यायविशारद महोपाध्याय श्री यशोविजयजी म.सा.। **अनुवादक एवं सम्पादक**-साध्वी डॉ. प्रतिभाश्रीजी 'प्राची' एवं साध्वी डॉ. प्रशंसाश्रीजी 'मोक्षा'। **प्रकाशक**-प्राकृत भारती अकादमी, 13 ए, गुरुनानक पथ, मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राज.) दूरभाष-0141-2520230, Email: prabharati@gmail.com, ISBN No. 978-93-92317-20-0.2, **मूल्य**-500/- रुपये। **प्रथम संस्करण**-2021, **पृष्ठ**-102, **अन्य प्राप्ति-स्थान**-आत्मप्रज्ञ फाउण्डेशन, पुणे (महाराष्ट्र) मो. 9130010209, 9922436459

प्रस्तुत पुस्तक में साध्वीद्वय ने आचार्यश्री हरिभद्रसूरि द्वारा विरचित 'योगविंशिका प्रकरण' एवं उसकी टीका का हिन्दी अनुवाद व्याख्या सहित प्रस्तुत किया है। ग्रन्थ में योग की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि मोक्ष के साथ आत्मा को जो जोड़ता है, उस धर्म व्यापार का नाम योग है। योग रत्नत्रय के स्वरूप वाला है, जो कि सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक् चारित्र रूप है। पुस्तक में पाँच प्रकार के आशयों से विशुद्ध धर्म व्यापार को योग कहा गया है-प्रणिधान, प्रवृत्ति, विघ्नजय, सिद्धि और विनियोग। योग के पाँच प्रकार का वर्णन किया गया है-स्थान, ऊर्ण, अर्थ, आलम्बन और निरालम्बन। इन सबका विस्तार से विवेचन किया गया है। अध्यात्म, भावना, ध्यान, समता एवं वृत्तिसंक्षय-इन पाँच प्रकार के अध्यात्म आदि योग की भी विस्तार से व्याख्या करते हुए समझाया गया है। सापाय योग-निरपाय योग, पाँच प्रकार के अनुष्ठान, सूक्ष्म क्रिया, तीर्थ का स्वरूप, प्रीति आदि चार प्रकार के अनुष्ठान तथा सालम्बन और निरालम्बन योग आदि योगविषयक सभी भेद-प्रभेदों एवं आवश्यक अंगों का विस्तृत वर्णन किया गया है और सरल व्याख्या करके समझाने का प्रयास किया गया है। यह ग्रन्थ ज्ञान और क्रिया का समन्वय करने वाला अद्भुत ग्रन्थ है। चतुर्विध संघ की आराधना की गुणवत्ता को बढ़ाने वाला है। अत: सभी श्रावक-श्राविका एवं साधु-साध्वियों के द्वारा पठनीय, चिन्तनीय और जीवन में अनुकरणीय होने से अत्युपयोगी है।

जैन-बौद्ध धर्म में पर्यावरण-चेतना- लेखक-डॉ. भागचन्द्र जैन भास्कर। **प्रकाशक**-प्राकृत भारती अकादमी, 13 ए, गुरुनानक पथ, मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राज.) दूरभाष-0141-2520230, Email: prabharati@gmail.com, ISBN 978-93-92317-33-0, Website : prakritbharati.net, **प्रथम संस्करण**-2022, **पृष्ठ**-352, **मूल्य**-680/- रुपये।

प्रस्तुत पुस्तक 'जैन-बौद्ध धर्म में पर्यावरण-चेतना' में लेखक ने जैनधर्म और बौद्धधर्म के सिद्धान्तों के अनुसार पर्यावरण-चेतना का विस्तृत एवं विशद विवेचन किया है। लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक को छह परिवर्तों में विभक्त किया है। प्रथम परिवर्त 'पर्यावरण : प्रकृति की गोद में' के अन्तर्गत पर्यावरण, पर्यावरण विज्ञान, पारिस्थितिकी उद्देश्य और क्षेत्र आदि का विस्तृत विवेचन करते हुए पर्यावरण की सुरक्षा के उपाय बतलाये हैं। वर्तमान कानून और जैनाचार्यों की इस विषय में सोच एवं योगदान का वर्णन किया है।

द्वितीय परिवर्त 'धर्म और जैन-बौद्ध धर्म' के अन्तर्गत धर्म की आवश्यकता, संस्कृति, ऋषभदेव, महावीर और पर्यावरण के विषय में विस्तृत विवेचन करते हुए धर्म की परिभाषा एवं पर्यावरण को स्पष्ट करते हुए धर्म के विभिन्न स्वरूपों से पर्यावरण की रक्षा के बारे में बतलाया है। समता, सर्वोदय और अनेकान्तवाद का पर्यावरण के साथ सम्बन्ध स्थापित किया है। तृतीय परिवर्त में लेखक ने 'जैन-बौद्ध धर्म : पर्यावरण की

अन्तश्चेतना' का विस्तृत वर्णन किया है। इसके अन्तर्गत जैनधर्म के प्रमुख सिद्धान्तों यथा कर्मसिद्धान्त, अहिंसा, मुक्ति का मार्ग, जैन जीवनपद्धति, अपरिग्रह, सप्तकुव्यसन त्याग, अनर्थदण्ड विरमण, आहार-शुद्धि और शाकाहार आदि अनेक विषयों का वर्णन करते हुए स्पष्ट किया है कि किस प्रकार से जैन एवं बौद्धधर्म पर्यावरण के संरक्षक हैं।

चतुर्थ परिवर्त 'अहिंसा और पर्यावरण चेतना' में अहिंसा का विवेचन करते हुए जीवों के भेद-प्रभेद बतलाये हैं और वनस्पति के साथ-साथ पृथ्वी, पानी, अग्नि और वायु में भी जीव बतलाते हुए इनके संरक्षण की प्रेरणा की गई है, जिनका हमारे पर्यावरण की सुरक्षा से सीधा सम्बन्ध है। पञ्चम परिवर्त में 'जैन-बौद्ध जीवनपद्धति और पर्यावरण-चेतना' का वर्णन किया है। जैन श्रावकाचार का वर्णन करते हुए बतलाया है कि इनका पालन करने से स्वयं के कल्याण के साथ-साथ अन्य प्राणियों का भी रक्षण होता है और पर्यावरण की सुरक्षा होती है। श्रावक के व्रतों, प्रतिमाओं और आवश्यकों के पालन से हम पृथ्वी के सभी जीवों की रक्षा करते हैं। अन्तिम षष्ठ परिवर्त में 'बौद्ध धर्म और पर्यावरण-चेतना' के अन्तर्गत बौद्धधर्म के सिद्धान्तों का वर्णन करते हुए जातक कथाओं में पर्यावरण चेतना का दिग्दर्शन कराया गया है।

पुस्तक में यथास्थान जैन एवं बौद्ध आगम-शास्त्रों के उद्धरण, गाथाएँ और सूत्र भी प्रस्तुत किये गये हैं। पुस्तक के अन्त में सन्दर्भ एवं संक्षिप्त सन्दर्भ ग्रन्थ सूची भी प्रस्तुत की गई है। अन्त में लेखक का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। प्रस्तुत पुस्तक सभी पाठकों के लिए पठनीय एवं उपयोगी है और इसमें बताये गये उपायों का पालन कर पर्यावरण को सुरक्षित कर हम सब भी सुरक्षित होकर जीवनयापन कर सकते हैं।

-पूर्व डी.एस.ओ., 70, 'जयणा', विश्वकर्मा नगर-द्वितीय, महारानी फॉर्म, जयपुर (राजस्थान)

गुरु देशना सुनकर ....

महासती श्री रुचिता जी म.सा.

(तर्ज :: दिल दिवाना ना जाने कब.....)

गुरु देशना सुनकर आनन्द आ गया, आ गया।
श्रुत सागर जीवन में लहरा गया।
आगम पुरुष, आगम पुरुष, आगम पुरुष हो तुम।। टेर।।

गुरु समागम से मिलता है,श्रुत वाणी का अवलम्बन।
वाचना इनकी सुनकर के, अनुप्रेक्षा में हो चिन्तन।
विधाता हो तुम, निर्माता हो तुम,
ज्ञाता हो तुम, विज्ञाता हो तुम।
आगम पुरुष, आगम पुरुष, आगम पुरुष हो तुम।।1।।

नित नव श्रुत का करे वागरण, प्रफुल्लित होता है ये मन।
शंका का समाधान मिले, कर्मों का होता है शमन।
ज्येष्ठ हो तुम, श्रेष्ठ हो तुम, विज्ञ हो तुम, सर्वज्ञ हो तुम।
आगम पुरुष, आगम पुरुष, आगम पुरुष हो तुम।।2।।

समवसरण है कितना प्यारा, लगता मानो चौथा आरा।
ज्ञान क्रिया का कैसा नज़ारा, अद्भुत है संयम तुम्हारा।
इष्ट हो तुम, विशिष्ट हो तुम,
ईश्वर हो तुम, परमेश्वर हो तुम।
आगम पुरुष,आगम पुरुष, आगम पुरुष हो तुम।।3।।

श्रुत निधि का अनुपम खजाना, गुरुवर तुझमें है पाया।
उपदेश 'रुचि' को जाग्रत करना,
निज आतम का लक्ष्य बनाया।
ज्ञेय हो तुम, श्रेय हो तुम, आदेय हो तुम, उपादेय हो तुम।
आगम पुरुष, आगम पुरुष, आगम पुरुष हो तुम।।4।।

-संकलनकर्त्री : धनसुरेश जैन, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 77
ISSN 2249-2011

समाचार विविधा

पूज्य आचार्य भगवन्त एवं भावी आचार्यप्रवर की सन्निधि में तप-त्याग, ज्ञान-ध्यान, साधना-आराधना का निरन्तर ठाट एवं तेरापंथ आचार्यश्री महाश्रमणजी का पदार्पण

रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर, प्रवचन प्रभाकर, आगमज्ञ, जिनशासन गौरव, **आचार्य भगवन्त श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी, भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-14 सामायिक-स्वाध्याय भवन पावटा जोधपुर में विराजित हैं।

सूर्यनगरी जोधपुर का पावटा क्षेत्र गत मास आकाशगंगा में नक्षत्रों की भाँति चारित्रात्माओं के निरन्तर पदार्पण से देदीप्यमान रहा। सामायिक-स्वाध्याय भवन, पावटा चारित्रात्माओं के ज्ञान, दर्शन, चारित्र की आराधना एवं जिनवाणी की अमृत वर्षा के साथ चतुर्विध संघ के समागम का केन्द्र बना हुआ है। सौरमण्डल की भाँति श्रमण-श्रमणियाँ सूर्यनगरी जोधपुर को चारों ओर गतिशील रहकर, अपनी आध्यात्मिक ऊर्जा से प्रकाशित कर रहे हैं।

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. मुनिमण्डल सहित 24 नवम्बर, 2022 को परमाराध्य आचार्य भगवन्त के पावन श्री चरणों में पधारे एवं गुरु आज्ञा पाकर 28 नवम्बर से सूर्यनगरी के उपनगरों में धर्मप्रभावना हेतु विचरते रहे। इसी बीच 25 नवम्बर को **विदुषी महासती श्री सौभाग्यवतीजी म.सा.** साध्वीमण्डल सहित पावटा पधारे एवं आचार्य भगवन्त, भावी आचार्यश्री, तत्त्वचिन्तक मुनिश्री सहित सभी चारित्रात्माओं के दर्शन, वन्दन और सान्निध्य सेवा का लाभ लिया। 29 नवम्बर को विहार करके जोधपुर के उपनगरों में धर्मप्रभावना कर रहे हैं। 2 दिसम्बर को **व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा.** आदि ठाणा पावटा पधारे।

10 दिसम्बर को **मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. एवं तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.** अपने सहवर्ती सन्त-मुनिराजों के साथ, परमाराध्य आचार्य भगवन्त की चरण सन्निधि में पधारे एवं विराजित हैं। 5 दिसम्बर को **महासती श्री लक्षितप्रभाजी म.सा.** आदि ठाणा-4 का एवं 12 दिसम्बर को **महासती श्री संगीताश्रीजी म.सा.** आदि ठाणा-4 पावटा आगमन हुआ। शिक्षा-नियोजक तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. से सन्त-सतीवृन्द, जिज्ञासु ज्ञानार्थी भाई-बहनों एवं श्रावक-श्राविकाओं ने अध्ययन किया एवं जिज्ञासाओं का समाधान प्राप्त किया। आचार्य भगवन्त एवं गुरुणीजी की आज्ञा एवं मार्गदर्शन लेकर महासती मण्डल जोधपुर उपनगरों में धर्मप्रभावना हेतु विचरण रत हैं।

12 दिसम्बर को श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री अशोकमुनिजी म.सा. पावटा से विहार कर जोधपुर के उपनगरों को उपकृत कर रहे हैं। 19 दिसम्बर को **व्याख्यात्री महासती श्री दर्शनलताजी म.सा.** सहवर्तिनी साध्वियों सहित पावटा दर्शन हेतु पधारे एवं समय-समय पर शक्तिनगर से आकर दर्शन-वन्दन, सेवा लाभ लेते रहते हैं। **श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा भी लगभग गत डेढ़ माह से जोधपुर के उपनगरों में धर्मप्रभावना कर रहे हैं। 11 दिसम्बर को साधुमार्गी महासतीवर्या श्री वैभवश्री म.सा. आदि ठाणा-4 पावटा स्थानक दर्शनार्थ पधारें।

आचार्यश्री महाश्रमणजी से मधुर मिलन-22 दिसम्बर को प्रात:काल तेरापंथ के आचार्यप्रवर पूज्य श्री

महाश्रमणजी अपने शिष्य समुदाय के साथ पावटा स्थानक पधारे। सौहार्दपूर्ण सन्त-समागम हुआ। दोनों ओर से सन्त-भगवन्तों ने पूर्व में हुए सन्त-समागम के वृत्तान्तों का वर्णन करते हुए पूर्वाचार्यों-महापुरुषों के परस्पर प्रेम एवं उदारतापूर्ण व्यवहार पर प्रकाश डाला तथा संवत्सरी एकता के बारे में अपने-अपने विचार व्यक्त किये। चतुर्विध संघ की विराट् उपस्थिति से स्थानक खचाखच भरा हुआ था, जो इस सौहार्दपूर्ण समागम एवं दोनों परम्पराओं के प्रेम, उदारता आदि अभिव्यक्त भाव एवं वृत्तान्त को श्रवणकर भावाभिभूत हो उठा।

श्राविका मण्डल का शिविर-श्राविका मण्डल जोधपुर ने 9 दिसम्बर को पौष बदि एकम शुक्रवार एवं पूर्णिमा को गुरुदर्शन, पाँच-पाँच सामायिक एवं नींवी तप की आराधना की। लगभग 25 श्राविकाओं ने व्रतों के महत्त्व को गुरु भगवन्तों के मुखारविन्द से श्रवण किया एवं 21 से 25 दिसम्बर तक पाँच दिवसीय शीतकालीन शिविर पावटा में आचार्य भगवन्त की सन्निधि में लगाया गया। लगभग 60 श्राविकाओं ने गुरु भगवन्त एवं अनुभवी अध्यापिकाओं से अध्ययन का लाभ लिया। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की अध्यक्ष श्रीमती अलकाजी दुधेड़िया ने शिविरार्थियों को प्रोत्साहित किया कि वे गुरु भगवन्तों की प्रेरणा को साकार करने का लक्ष्य रखें।

संयोजक, संरक्षक-मण्डल श्री मोफतराजजी पी. मुणोत, राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रकाशजी टाटिया, महामन्त्री श्री धनपतजी सेठिया, शासन सेवा समिति के संयोजक श्री गौतमचन्दजी हुण्डीवाल, सदस्य श्री गौतमजी सुराणा, चिकित्सा समिति के श्री मनमोहनजी कर्णावट, डॉ. प्रेमसिंहजी लोढ़ा आचार्य भगवन्त की सन्निधि में संघ हित-चिन्तन एवं परामर्श हेतु पधारे। जोधपुर संघाध्यक्ष श्री सुभाषजी गुन्देचा, मन्त्री श्री नवरतनजी गिड़िया आदि समय-समय पर दर्शन, वन्दन, सेवा-सन्निधि हेतु पधारते रहते हैं।

चातुर्मास-विनतियाँ-इस मास में अनेक वीर परिवारों का और चातुर्मास विनति हेतु अनेक श्रीसंघों का आगमन हुआ। जोधपुर में विराजित अनेक सिंघाड़ों के सन्त-सतीवृन्द के विराजने के सुयोग का लाभ उठाने हेतु चहुँओर से श्रद्धालुओं का आगमन बढ़ रहा है। शीतकालीन अवकाश एवं नववर्ष की शुरुआत के कारण श्रद्धालुओं का आगमन दर्शन, वन्दन, मांगलिक श्रवण एवं साधना-आराधना हेतु उत्तरोत्तर वृद्धिंगत होता जा रहा है।

प्रवचन-वाचनी-मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा., तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा., श्री यशवन्तमुनिजी म.सा., श्री दर्शनमुनिजी म.सा., श्री अविनाशमुनिजी म.सा. एवं महासतीवर्याओं के द्वारा प्रवचनामृत वर्षण किया जा रहा है। प्रात:काल प्रार्थना श्री दीपेशमुनिजी म.सा. तथा भगवतीसूत्र पर वाचनी परम श्रद्धेय भावी आचार्यश्री फरमा रहे हैं।

जोधपुर श्रीसंघ की रीति-नीति के अनुसार विहार सेवा, आगुन्तकों के आवास-निवास, भोजन आदि सभी सेवाएँ पावटा क्षेत्र के कार्यकर्त्ताओं सहित जोधपुर के आबालवृद्ध श्रावक-श्राविकाओं द्वारा अर्थात् श्रावक संघ, श्राविका मण्डल, युवक परिषद् द्वारा यथायोग्य, यथा रुचि सहभागिता अनुरूप सुव्यवस्थित गतिशील हैं। पावटा में नियमित आयम्बिल अच्छी संख्या में हो रहे हैं तथा अन्य विविध तपस्याएँ भी हो रही है। प्रवचन सभा का कुशल सञ्चालन युवारत्न श्री देवेन्द्रजी गिड़िया एवं महिपतजी चौपड़ा द्वारा किया जा रहा है। *-गिरीश जैन*

गंगावती में चातुर्मास की विशेष उपलब्धियाँ

व्याख्यात्री महासती श्री सुमतिप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा-5 का ऐतिहासिक एवं सफलतम चातुर्मास सुखसातापूर्वक सम्पन्न हुआ। चातुर्मास में बाहर गाँवों से काफी संख्या में दर्शनार्थी बन्धुओं का आवागमन निरन्तर जारी रहा। चार शीलव्रत के प्रत्याख्यान हुए-1. श्री भरतजी सालेचा 2. श्री राजेन्द्रजी चौधरी 3. श्री भँवरलालजी

गोगड़ 4. गुप्त सदस्य। पूरे चातुर्मास में माँ एवं बेटी (सुनीताजी कोठारी के 33 एवं रक्षाजी कोठारी के 30 उपवास) के एक साथ दो मासखमण, 1 सोलह, 2 पन्द्रह, 1 ग्यारह, 6 नौ, 8 अठाई, 1 सजोड़े अठाई, पचोले, चोले आदि की तपस्याएँ पूर्ण हुई हैं। तेले की लड़ी चातुर्मास के अन्त तक चलती रही। विशेष पर्व एवं तिथि प्रसङ्गों पर सामूहिक एकाशन एवं धार्मिक कार्यक्रम आयोजित किए गए। आचार्यश्री के दीक्षा-दिवस पर नौ एवं पाँच की तपस्या के साथ सामूहिक एकाशन किए गए। प्रत्येक रविवार को बच्चों का शिविर आयोजित किया गया। इस सम्पूर्ण चातुर्मास के लाभार्थी रहे-1. श्री डी. सुरेशचन्दजी सुभाषचन्दजी अशोककुमारजी बम्ब 2. श्री भँवरलालजी राहुलजी सचिनजी गोगड़ 3. श्री राजेन्द्रकुमारजी कैलाशचन्दजी कोठारी 4. श्री अभिनन्दनजी विनयकुमारजी बाँठिया 5. श्री सुरेशचन्दजी आनन्दजी सालेचा। *-कैलाश कोठारी-अध्यक्ष, नवयुवक मंडल, गंगावती*

पृथ्वी और पर्यावरण बचाने हेतु पालीताणा घोषणा-पत्र

प्रस्तुति : डॉ. सुरेन्द्रसिंह पोखरना

आज पृथ्वी और पर्यावरण की समस्याओं को सुझलाने के लिए विज्ञान और अध्यात्म, दोनों की आवश्यकता है। इसका मुख्य कारण यह है कि विज्ञान बाहरी विश्व को समझने में सहायक है जबकि अध्यात्म हमारे भीतर की अनुभूतियों और चेतना को समझने में सहायक है। इस विचार को आगे बढ़ाने के लिए डॉ. डी. एस. कोठारी संस्थान और विज्ञान समिति उदयपुर की ओर से एक प्रस्ताव तैयार किया गया और उसे श्री शंखेश्वर पुरम, विज्ञान तीर्थ, पालीताणा के उद्घाटन 11 दिसम्बर, 2022 के अवसर पर चर्चा के लिए रखा गया। यह मन्दिर और विज्ञान तीर्थ आचार्य लब्धिसागरजी महाराज साहब की प्रेरणा और आशीर्वाद से पालीताणा के पास बन रहा है। इस कार्यक्रम में कई जाने-माने राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर के वैज्ञानिक, डॉक्टर, इञ्जीनियर तथा जैन और भारतीय दर्शन के विद्वानों ने भाग लिया। सबने इस पर चर्चा की, कुछ दूसरे संस्थानों को साथ में लेकर और कुछ परिवर्तन करके इसे 'पालीताणा घोषणा-पत्र' के नाम से जारी किया। इसका शीर्षक था-**पृथ्वी और जीवसृष्टि को बचाने के लिए विज्ञान और अध्यात्म दोनों ही आवश्यक हैं।** यह घोषणा पत्र निम्न है-

पृथ्वी और जीवसृष्टि के विनाश के दस महत्त्वपूर्ण कारण हैं, जो निम्न हैं-(i) बढ़ता हुआ प्रदूषण (ii) बढ़ती हुई हिंसा (iii) बढ़ती हुई औसतन गर्मी (iv) बढ़ता हुआ अनाचार (v) बढ़ती हुई अम्लीयता (vi) घटती हुई आध्यात्मिकता (vii) घटती हुई नैतिकता (viii) तेज गति से पतली होती हुई ओजोन परत (ix) सामान्य स्वास्थ्य की समस्या (x) घटते हुए जंगल।

आज विज्ञान से विकसित तकनीकी ज्ञान ने विश्व को कम्प्यूटर, हवाई जहाज़, सैटेलाइट, मोबाइल, टेलीविज़न, वातानुकूलन जैसी अन्य हज़ारों चीज़ें दी हैं, जिनका हम दैनिक जीवन में उपयोग करते हैं। पर इन्हीं सुविधाओं के साथ विज्ञान ने विश्व को मिसाइलें, टैंक, कई क़िस्म की तोपें, परमाणु हथियार और रासायनिक हथियार भी दिए हैं, जिनसे विश्व को कई बार नष्ट किया जा सकता है। वर्तमान में रूस और यूक्रेन के बीच चल रहे युद्ध में जिन हथियारों का उपयोग किया जा रहा है उनसे न केवल बड़ी संख्या में जन हानि हो रही है, बल्कि पर्यावरण को भी भारी नुकसान हो रहा है।

इसी सन्दर्भ में एक और जानकारी यहाँ साझा करना बहुत आवश्यक है कि सन् 1970 से 2020 के पचास वर्ष के अन्तराल में पृथ्वी के लगभग आधे जीव-जन्तु नष्ट हो गये हैं। हर वर्ष पृथ्वी से लगभग 25,000 जीवों की प्रजातियाँ लुप्त हो रही हैं, जैसे कि आजकल काला हिरन, तितलियाँ, बिच्छू, साँप, चिड़िया आदि देखने को कम

मिलते हैं। हर वर्ष मांसाहारी भोजन के लिए लगभग 15,000 करोड़ जीवों की हत्या की जाती है, जिससे पर्यावरण को भारी नुकसान हो रहा है। कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी अब छठे महाविनाश की ओर बढ़ रही है। यह सम्भावना कितनी गम्भीर है इसका पता इस तथ्य से लगता है कि गत पचपन करोड़ वर्षों में सिर्फ पाँच बार ऐसे महाविनाश हुए थे जिनमें जीवित प्राणियों की संख्या बहुत ही कम हो गयी थी। पाँचों महाविनाश प्राकृतिक थे, जबकि यह सम्भावित छठा महाविनाश मानवीय कारणों से होगा। दूसरी ओर आधुनिक विज्ञान की एक बड़ी मर्यादा है कि वह एक छोटी-सी चींटी या घास की एक पत्ती का भी निर्माण नहीं कर पाया। एक जीव से ही दूसरे जीव की उत्पत्ति सम्भव है।

इस सन्दर्भ में अगर जैनदर्शन की बात करें तो उसमें यह मान्यता है कि जीव और अजीव का अलग-अलग अस्तित्व है और अजीव पदार्थ से जीव पैदा नहीं किया जा सकता। वर्तमान विज्ञान की और भी सीमाएँ हैं, जिन्हें हमें समझना बहुत जरूरी है। जब हम प्रकृति को पूर्ण रूप से समझने का प्रयास करते हैं तो हम प्रकृति को साधारणतया दो अलग-अलग क्षेत्रों में बाँट देते हैं। एक क्षेत्र वह है जो हमारे चारों ओर है और जो हम सभी को दिखता है और पाँच इन्द्रियों द्वारा जाना और समझा जा सकता है। दूसरा क्षेत्र है हमारे भीतर का, जिसमें प्रेम, दया, क्षमा, राग, द्वेष, अहम्, दूसरों से स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध करने की प्रवृत्ति आदि। वह क्षेत्र जो बाहर है, उसका अध्ययन वर्तमान विज्ञान के सिद्धान्तों के आधार पर किया जाता है। दूसरा क्षेत्र जो हमारे भीतर है, वह अध्यात्म के द्वारा समझा जा सकता है। ऐसा लगता है कि पृथ्वी और पर्यावरण को बचाने के लिए हमें इन दोनों क्षेत्रों को समझना पड़ेगा।

इसलिए विज्ञान और धर्म या अध्यात्म के समन्वय की अत्यन्त आवश्यकता है। कम से कम दैनिक जीवन में दोनों के उपयोग की आवश्यकता है। विश्व के महान् वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टीन ने विज्ञान और धर्म के सम्बन्ध के बारे में एक बहुत महत्त्वपूर्ण वाक्य दिया है कि विज्ञान धर्म के बिना लंगड़ा है। लगभग यही विचार भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक पद्म विभूषण से सम्मानित डॉ. दौलतसिंहजी कोठारी ने अपने लेखों और व्याख्यानों में व्यक्त किये हैं कि- 'विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय की आवश्यकता है।' अगर हम आज विश्व की परस्थितियों को देखें तो हमें लगेगा कि इन दोनों ही महान वैज्ञानिकों के ये विचार आज और ज्यादा महत्त्वपूर्ण बन गए हैं।

जैनधर्म में पाँच महाव्रतों को सबसे अधिक महत्त्व दिया गया है। वे हैं-अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। इसके अलावा जैनदर्शन में अनेकान्तवाद का भी बड़ा महत्त्व है। सिद्धान्तों के पालन करने से व्यक्ति और समाज बहुत अच्छा जीवन व्यतीत कर सकते हैं। एक और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आजकल सिर्फ आर्थिक विकास की अधिक बात की जाती है और आध्यात्मिक विकास की बात कम की जाती है। वास्तविकता यह है कि दोनों के विकास की बात अगर होगी तो समाज का हर स्तर पर सन्तुलन रहेगा।

भारत में जैनधर्म का सम्पूर्ण दर्शन उपलब्ध है, जो इसमें अपना योगदान कर सकता है। अनेकान्तवाद की चाबी से, समता से (सभी जीवों के प्रति समता का भाव रखने से सभी जीवों के लिए आहार, विहार, पोषण और सम्वर्धन सुनिश्चित हो सकता है), जिम्मेदारी से (कर्मसिद्धान्त के द्वारा समस्त जीवों के प्रति जिम्मेदारी का भाव होना), सनातन नियम-अध्यात्म और विज्ञान दोनों प्रकृति के सनातन नियमों पर ही आधारित हैं। ज्ञान, दर्शन, और चारित्र के समन्वय से अध्यात्म और विज्ञान दोनों का सन्तुलन सम्भव है। जल, जंगल, जमीन, जानवर और जन का सन्तुलन और संरक्षण समृद्धि की चाबी है। इसलिए सहअस्तित्व, समन्वय , समता, सह-जिम्मेदारी और सह-पुरुषार्थ सभी जीवों के कल्याण का सनातन मार्ग है। तो हम सब लोग इस प्रस्ताव का समर्थन करते हैं कि पृथ्वी और पर्यावरण को बचाने के लिये विज्ञान और अध्यात्म दोनों ही आवश्यक हैं।

उद्घोषक–1. शंखेश्वरपुरम् विज्ञान तीर्थ पालीताणा (गुजरात), 2. डॉ. दौलतसिंहजी कोठारी शोध और शिक्षण संस्थान, उदयपुर, 3. जैन एकेडेमी ऑफ स्कॉलर्स (जे.ए.एस.), अहमदाबाद, 4. विज्ञान समिति, उदयपुर, 5. विज्ञान और आध्यात्मिक शोध संस्थान, अहमदाबाद, 6. श्रुतरत्नाकर, अहमदाबाद, 7. Global Peace Innovators, Dubai

-वैज्ञानिक (इसरो); अहमदाबाद

युवक परिषद् द्वारा प्रथम बार शीतकालीन शिविरों का सफलतापूर्वक आयोजन

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा प्रथम बार शीतकालीन अवकाश में धार्मिक शिक्षण एवं नैतिक संस्कार शिविरों का आयोजन 20 दिसम्बर, 2022 से किया गया। शिविर में 6 वर्ष से 45 वर्ष तक के बालक-बालिकाओं, युवक-युवतियों ने भाग लिया। उक्त शिविर युवक परिषद् की लगभग 38 शाखाओं में उपर्युक्त 5 अथवा 7 दिन का आयोजित हुआ। इन शाखाओं में लगभग 3,000 से अधिक शिविरार्थियों ने भाग लिया। शिविर में सभी स्थानों पर वर्गीकृत कक्षाओं के माध्यम से ज्ञानार्जन के साथ ही योग एवं ध्यान का अभ्यास भी कराया गया। व्यक्तित्व-विकास के साथ ही विभिन्न प्रतियोगिताओं के आयोजन से भी शिविरार्थियों में विशेष उत्साह रहा। प्रथम बार आयोजित हुए इन शीतकालीन शिविरों को सभी स्थानों पर सराहा गया।

-निपुण डागा, उपाध्यक्ष

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र की संगोष्ठी एवं कार्यशाला सम्पन्न

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र द्वारा रविवार 11 दिसम्बर, 2022 को छात्र-छात्रा अभिभावकों की संगोष्ठी एवं जोधपुर के संस्कार केन्द्रों में अध्यापन कराने वाले अध्यापकों की एक दिवसीय कार्यशाला सामायिक-स्वाध्याय भवन, नेहरू पार्क में आयोजित की गई। कार्यशाला में संस्कार केन्द्र के संयोजक श्री राजेशजी कर्नावट, सह-संयोजक श्री राजेशजी भण्डारी, सचिव श्री महावीरजी कोठारी, सह-सचिव श्री सुरेन्द्रजी कुम्भट, कोषाध्यक्ष श्री संजयजी सुराणा, परामर्शदाता श्रीमती मीताजी मुल्तानी, श्रीमती अनुपमाजी गोलेच्छा एवं कार्यकारिणी सदस्य उपस्थित थे। संगोष्ठी एवं कार्यशाला में लगभग 225 छात्र, 100 अभिभावक एवं 55 अध्यापक/संयोजक एवं कार्यकर्त्ता सम्मिलित हुए। कार्यक्रम में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रकाशजी टाटिया, राष्ट्रीय महामन्त्री श्री धनपतजी सेठिया, स्थानीय संघ के अध्यक्ष श्री सुभाषजी गुंदेचा, मन्त्री श्री नवरतनजी गिड़िया, स्थानीय श्राविका मण्डल की अध्यक्ष श्रीमती सुमनजी सिंघवी, सचिव श्रीमती पूजाजी गिड़िया, स्थानीय युवक परिषद् के अध्यक्ष श्री गजेन्द्रजी चौपड़ा, सचिव श्री लोकेशजी कुम्भट, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ के संयोजक श्री सुभाषजी हुण्डीवाल, सचिव श्री सुनीलजी संकलेचा, अ. भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड के सचिव श्री आकाशजी चौपड़ा भी उपस्थित हुए एवं मार्गदर्शन प्रदान किया।

संस्कार केन्द्र के सचिव श्री महावीरजी कोठारी ने आगन्तुक सभी महानुभावों का स्वागत किया। सह-संयोजक श्री राजेशजी भण्डारी ने संस्कार केन्द्र के उद्देश्यों से सभी को अवगत कराया। संयोजक श्री राजेशजी कर्नावट ने संस्कार केन्द्र की गतिविधि, पुरस्कार-प्रदाता एवं छात्रों को दिए जाने वाले पारितोषिक तथा नवीन पाठ्यक्रम के बारे में जानकारी प्रदान की। साथ ही उन्होंने बताया कि संस्कार केन्द्र के सॉफ्टवेयर द्वारा उपस्थिति दर्ज करने से सभी केन्द्रों एवं छात्रों के प्रगति का विस्तृत विवरण उपलब्ध है। इस कार्यक्रम में संस्कार केन्द्र के छात्र-छात्राओं ने ज्ञानार्जन की प्रस्तुति दी एवं धार्मिक पाठशाला आने के अनुभव को साझा किया। कार्यक्रम में उपस्थित सभी अभिभावकगण से सुझाव आमन्त्रित किए गए। उनके द्वारा प्राप्त सुझाव/समस्या का संस्कार केन्द्र के पदाधिकारियों एवं परमर्शदाता श्रीमती मीताजी मुल्तानी द्वारा समाधान किया गया। संस्कार केन्द्र के 34 छात्र-

छात्राओं को पर्युषण पर्व पर स्थानक में या सामूहिक रूप से प्रतिक्रमण करवाने पर सम्मानित किया गया। श्री राजेशजी कर्नावट ने सभी अभिभावकों का आभार व्यक्त किया तथा निवेदन कहते हुए कहा कि संस्कार केन्द्र बच्चों में संस्कार देने का प्रयास कर रहा है अत: सभी महानुभाव एवं अभिभावकगण अपने बच्चों को नजदीकी संस्कार केन्द्र में भेजने हेतु अवश्य प्रयास करें।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ के संयोजक श्री सुभाषजी हुण्डीवाल एवं अ. भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड के सचिव श्री आकाशजी चौपड़ा ने उपस्थित सदस्यों को स्वाध्यायी बनने एवं शिक्षण बोर्ड द्वारा आयोजित की जाने वाली परीक्षाओं में भाग लेने हेतु निवेदन किया।

कार्यक्रम में **राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रकाशजी टाटिया** ने बच्चों को माता-पिता को भगवान के रूप में एवं दादा-दादी को अपना मित्र बनाने को कहा। जिससे आज अभिभावकों एवं बच्चों में जो विचार मतभेद आ रहा है और इस कारण जो परिस्थितियाँ सामने आ रही हैं उनसे उबरा जा सके। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के संयुक्त महामन्त्री श्री प्रकाशजी सालेचा ने भी उपस्थित अभिभावकगण और छात्र-छात्राओं को प्रेरित किया।

अध्यापक कार्यशाला में उपस्थित अध्यापकों के मार्गदर्शन हेतु मोटीवेटर श्री निलेशजी संचेती का उद्‌बोधन हुआ। उन्होंने अध्यापक एवं छात्र-छात्राओं के बीच मधुर वचनों द्वारा, अच्छे आपसी सम्बन्धों द्वारा पूर्ण जोश और उत्साह के साथ पढ़ाने हेतु मार्गदर्शन दिया। सभी उपस्थित अध्यापकों ने भी अपना परिचय देते हुए श्री निलेशजी द्वारा बताये तरीकों को अपनाने का प्रण लिया। अल्पाहार एवं भोजन की व्यवस्था श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर द्वारा रखी गई। संस्कार केन्द्र के कोषाध्यक्ष श्री संजयजी सुराणा ने अध्यापकों द्वारा आनॅलाइन उपस्थिति एवं प्रगति रिपोर्ट में आने वाली समस्याओं का समाधान किया। कार्यशाला में पधारने पर संस्कार केन्द्र के संयोजक/अध्यापक/ कार्यकर्त्ताओं को अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के पूर्व अध्यक्ष श्री पी.एस.सुराणा, चैन्नई के सौजन्य से पुरस्कार प्रदान किए। श्री नवरतनमलजी पुनीतजी डागा, जोधपुर के सौजन्य से दैनिक संस्कार केन्द्र में प्रतिदिन उपहार प्रदान किया जाता है। कार्यक्रम के अन्त में संस्कार केन्द्र के सह-सचिव श्री सुरेन्द्रकुमारजी कुम्भट ने पधारे हुए सभी महानुभावों का हार्दिक धन्यवाद और आभार व्यक्त किया। *-महावीर कोठारी-सचिव*

विद्यार्थियों के जीवन-निर्माण में बनें सहयोगी

छात्र-छात्रा संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण योजना

(प्रतिवर्ष एक छात्र के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, (सिद्धान्त शाला) जयपुर, संघ एवं समाज के प्रतिभाशाली छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 1973 से सञ्चालित संस्था है। इस संस्था से अब तक सैकड़ों विद्यार्थी अध्ययन कर प्रशासकीय, राजकीय एवं प्रोफेशनल क्षेत्र में कार्यरत हैं। अनेक छात्र व्यावसायिक क्षेत्रों में सेवारत हैं। समय-समय पर ये संघ-समाजसेवी कार्यों में निरन्तर अपनी सेवाएँ भी प्रदान कर रहे हैं। वर्तमान में भी यहाँ अध्ययनरत विद्यार्थियों को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की नि:शुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जाती हैं। व्यावहारिक अध्ययन के साथ ही छात्रों को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। वर्तमान में संस्थान में 71 विद्यार्थियों के लिए अध्ययनानुकूल व्यवस्थाएँ हैं। संस्था को सुचारूरूप से चलाने एवं इन बालकों के लिए समुचित अध्ययनानुकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्रों के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में बालकों के संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में

सहयोगी बनें।

इसमें सहयोगी बनने वाले महानुभावों के नाम जिनवाणी में क्रमिक रूप से प्रकाशित किये जा रहे हैं। संस्थान के लिए पूर्व छात्रों का एवं निम्नलिखित महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है-

46. श्री पप्पूजी श्रीमती अनुजाजी, आगमजी, आर्यनजी लोढ़ा, जयपुर (राजस्थान) 48,000/-

47. श्रीमती सुनीताजी जैन, मनवाजी का बाग, जयपुर (राजस्थान) 24,000/-

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्रांजेक्शनस्लिप एवं सम्बद्ध जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:-Name : ***GAJENDRA CHARITABLE TRUST***, Account Type : *Saving,* Account Number : ***10332191006750***, Bank Name : *Punjab National Bank*, Branch : Khadi Board, Bajaj Nagar, Jaipur, Ifsc Code : PUNB0103310, Micr Code : 302022011, Custumer ID : 35288297 **निवेदक :** डॉ. प्रेमसिंह लोढ़ा (व्यवस्थापक), सुमन कोठारी (संयोजक), अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें-दिलीप जैन 'प्राचार्य' 9461456489, 7976246596

(प्रतिवर्ष एक छात्रा के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान (बालिका), मानसरोवर-जयपुर, संघ और समाज की प्रतिभाशाली छात्राओं के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 2017 से सञ्चालित संस्था है। यहाँ इस संस्था में वर्तमान में 40 अध्ययनरत छात्राओं को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की नि:शुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जा रही हैं। व्यावहारिक अध्ययन के साथ छात्राओं को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। संस्था को सुचारूरूप से चलाने एवं इन बालिकाओं के लिए समुचित अध्ययनानुकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्राओं के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में तथा उनके संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में सहयोगी बनें।

इसमें सहयोगी बनने वाले महानुभावों के नाम जिनवाणी में क्रमिकरूप से प्रकाशित किये जा रहे हैं। संस्थान के लिए पूर्व छात्रों का एवं निम्नलिखित महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है-

15. श्री पप्पूजी श्रीमती अनुजाजी, आगमजी, आर्यनजी लोढ़ा, जयपुर (राजस्थान) 48,000/-

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्राँजेक्शनस्लिप तथा सम्बद्ध जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:-Name : ***SAMYAGGYAN PRACHARAK MANDAL***, Account Type : *Saving,* Account Number : ***51026632997***, Bank Name : *SBI*, Branch : Bapu Bazar, Jaipur, Ifsc Code : SBIN0031843 **निवेदक :** अशोक कुमार सेठ, मन्त्री। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क फोन नं. अनिल जैन 9314635755

संक्षिप्त समाचार

जोधपुर-नेहरु पार्क स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में गत चातुर्मास में श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. के अथक प्रयास से प्रारम्भ हुआ पारिवारिक सामूहिक सामायिक-आराधना का कार्यक्रम नियमित रूप से निरन्तर गतिमान है। इस कार्यक्रम में अभी तक 103 परिवार जुड़ चुके हैं। प्रत्येक परिवार की प्रत्येक माह की एक तिथि/वार निश्चित

होता है, उस दिन परिवार के सभी सदस्य नेहरु पार्क स्थानक आकर सामूहिक सामायिक की आराधना करते हैं। इस आराधना में परिवार के सभी सदस्यों का उत्साह प्रमोदकारी है। कार्यक्रम में सरदारपुरा, नेहरू पार्क क्षेत्र के अन्य परिवार भी जुड़ रहे हैं। कार्यक्रम को गतिशील रखने में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के पूर्व महामन्त्री श्री नवरतनजी डागा का प्रयास विशेष है, जो सभी से लगातार सम्पर्क बनाए रखकर उन्हें प्रेरणा कर रहे हैं।

-नरेन्द्र बाफना, संयोजक-नेहरू पार्क

चेन्नई-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ तमिलनाडु के तत्त्वावधान में स्वाध्याय भवन, साहूकारपेट में तीर्थङ्करों के कल्याणकों के पावन दिवस मौन एकादशी पर्व को साधना-आराधना द्वारा मनाया गया। तीर्थंकरों की स्तुति एवं सामूहिक प्रार्थना के पश्चात् स्वाध्यायी श्री महावीरचन्दजी तातेड़ ने तीर्थंकर भगवन्तों की स्तुति में अपने भाव रखे। श्रावक संघ तमिलनाडु के कार्याध्यक्ष श्री आर. नरेन्द्रजी कांकरिया ने इस पावन दिवस की महत्ता के बारे में विस्तृत रूप से अपने भाव रखे। उपाध्यक्ष श्री अम्बालालजी कर्णावट ने सूत्र का पठन किया। इस पावन प्रसंग पर उपस्थित श्रीमती पुष्पलताजी गादिया ने नींवी के प्रत्याख्यान किये। उपस्थित श्रद्धालुओं ने व्रत-नियम-प्रत्याख्यान एवं मौन साधना के संकल्प लिए।

-आर. नरेन्द्र कांकरिया

चेन्नई-श्री जैन रत्न युवक परिषद्, तमिलनाडु के द्वारा परम पूज्य आचार्यश्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., भावी आचार्यश्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. एवं रत्नसंघीय चारित्रात्माओं की अनुपम कृपा से युवक परिषद् अध्यक्ष श्री संदीपजी ओस्तवाल के नेतृत्व में आध्यात्मिक गतिविधियों का सञ्चालन संघ के सभी सदस्यों के आपसी सहयोग से सुचारु रूप से गतिशील है। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् एवं जैन रत्न युवक परिषद् बैंगलुरु के संयुक्त तत्त्वावधान में यूथ कनेक्ट साउथ-2022 का आयोजन 13 नवम्बर, 2022 को बैंगलुरु में किया गया, जिसमें श्री जैन रत्न युवक परिषद् तमिलनाडु के 40 सदस्यों ने उत्साह और उमङ्ग के साथ भाग लिया। तमिलनाडु युवक परिषद् के द्वारा 'विंग्स टू फ्लाई' रविवारीय धार्मिक संस्कार शिविर का आयोजन चेन्नई के 7 क्षेत्रों (स्वाध्याय भवन साहुकारपेट, किलपॉक, अयनावरम, पैरम्बूर, के.एल.पी. अपार्टमेण्ट, करियानचावड़ी एवं ओसवाल गॉर्डन) में किया जा रहा है। दिसम्बर के प्रथम रविवार से मासिक रविवारीय सामूहिक सामायिक का कार्यक्रम स्वाध्याय भवन, साहूकारपेट-चेन्नई में किया गया। इस कार्यक्रम में श्रावक-श्राविकाओं ने सामायिक की आराधना की। यह कार्यक्रम भविष्य में प्रत्येक माह के प्रथम रविवार को गतिशील रहेगा। 9 दिसम्बर को युवक परिषद् के सदस्य व्याख्यात्री महासती श्री नि:शल्यवतीजी म.सा. की सेवा में ईरोड़ दर्शन-वन्दन के लिए गये। आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर की 8 जनवरी 2023 को होने वाली परीक्षा की तैयारी के लिए 18 दिसम्बर को एक दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का आयोजन स्वाध्याय भवन, साहूकारपेट में किया गया।

-आर. महावीरचन्द कर्णावट, शाखा सचिव

इन्दौर-शिक्षा विभाग-भारत सरकार ने भारतीय ज्ञान परम्परा (आई.के.एस.) के अध्ययन/अनुसन्धान को विकसित करने हेतु देश भर में 12 केन्द्रों की स्थापना की है। इस क्रम में भारतीय गणित के अभिन्न अंग जैन गणित के विशिष्ट अध्ययन हेतु विख्यात गणित-इतिहासज्ञ एवं डाटा विज्ञान तथा पूर्वानुमान अध्ययनशाला के आचार्य डॉ. अनुपम जैन के नेतृत्व में देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर की डाटा विज्ञान एवं पूर्वानुमान अध्ययनशाला में 'भारतीय ज्ञान परम्परा-जैन गणित केन्द्र' की स्थापना की गई है। इस राष्ट्रीय केन्द्र के अन्तर्गत जैन गणित के विकास की पृष्ठभूमि, उद्देश्य, मूलस्रोत, मौलिकताओं, अवदानों तथा अप्रकाशित/अनुपलब्ध ग्रन्थों पर स्रोत ग्रन्थ का सृजन करने के साथ ही जैन गणितज्ञों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को प्रचारित करने के उद्देश्य से प्रदर्शनी, कार्यशालाओं, संगोष्ठियों, प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जायेगा। 1 जनवरी 2023 से इस केन्द्र का विधिवत् सञ्चालन प्रारम्भ कर दिया जायेगा तथा प्राचीन जैन गणितीय पाण्डुलिपियों की प्रदर्शनी भी 2023 की प्रथम तिमाही में आयोजित की जायेगी।

-डॉ. अनुपम जैन, निदेशक

बधाई

आचार्यश्री हस्ती-स्मृति-सम्मान से सम्मानित सात विद्वान् पालीताणा (गुजरात) में जीवनोपलब्धि पुरस्कार से सम्मानित

डॉ. प्रेमसुमन जैन

डॉ. दिलीप धींग

गुजरात में पालीताणा के निकट शंखेश्वरपुरम में आयोजित अंजनशलाका महोत्सव के दौरान 11 दिसम्बर 2022 को आचार्यश्री हस्ती-स्मृति-सम्मान से सम्मानित हो चुके सात विद्वान **जीवनोपलब्धि पुरस्कार** से अलंकृत हुए। आचार्य श्री लब्धिसागर सूरीश्वरजी सहित सैकड़ों साधु-साध्वियों एवं हजारों लोगों की मौजूदगी में प्रो. नरेन्द्रजी भण्डारी, डॉ. जीवराजजी जैन, डॉ. जितेन्द्र बी. शाह, साहित्यकार डॉ. दिलीपजी धींग, डॉ. प्रियदर्शनाजी जैन, प्रो. प्रेमसुमनजी जैन को सम्मानित किया गया। जिनवाणी के प्रधान सम्पादक प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन का भी सम्मान होना था, लेकिन वे समारोह में नहीं पहुँच सके। इनके अलावा डॉ. सुरेन्द्रसिंहजी पोखरणा, डॉ. प्रतापजी संचेती, डॉ. महावीरराजजी गेलड़ा आदि का भी सम्मान किया गया। सबको मुक्ताहार, श्रीफल, सम्मान-पत्र और 11 हजार रुपये की सम्मान-राशि के साथ सम्मानित किया गया।

- सुरेशचन्द्र धींग, बम्बोरा

जोधपुर-यश्वीजी ढड्ढा (सेण्ट एन्स स्कूल) सुपुत्री श्री संजयजी-श्रीमती मोनाजी ढड्ढा सुपौत्री श्री महेन्द्रसिंहजी-श्रीमती लीलाजी ढड्ढा सी.बी.एस.सी. तथा केन्द्रीय सतर्कता आयोग (सी.वी.सी.) द्वारा आयोजित 'भ्रष्टाचार मुक्त विकसित भारत' जागरूक सप्ताह (30 अक्टूबर से 6 नवम्बर, 2022) निबन्ध लेखन प्रतियोगिता में सम्पूर्ण भारत के कक्षा 10 से 12 के 7.65 लाख प्रतिभागियों में से शीर्ष पाँच में चयनित हुई है। इस उपलक्ष्य में 3 नवम्बर, 2022 को विज्ञान भवन, दिल्ली में आयोजित समारोह में प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्रजी मोदी द्वारा स्मृतिचिह्न तथा प्रशस्ति-पत्र देकर सम्मानित किया गया।

जयपुर-वरिष्ठ श्रावक, चिन्तक एवं लेखनी के धनी प्रमुख समाजसेवी श्री पदमचन्दजी गाँधी को 30वें राष्ट्रीय संचेतना महोत्सव में राष्ट्रीय शिक्षक संचेतना उज्जैन द्वारा देव तुल्य मानव पुस्तिका में अपने अनुकरणीय योगदान हेतु 'राष्ट्रीय लेखक अभिनन्दन एवं सम्मान' तथा 'अटल जयन्ती-स्मृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर देश के विभिन्न स्थानों से आए हुए लेखक एवं विद्वत् जन उपस्थित रहे।

जोधपुर-विधि छात्र श्री प्रद्योतजी सुपुत्र डॉ. सरिताजी (प्रिंसिपल-सीनियर सैकेण्डरी स्कूल, जोधपुर)-श्री विनोदजी (अतिरिक्त आयुक्त प्रशासन जी.एस.टी.) सुपौत्र श्री नौरतनमलजी मेहता (लेखक-सम्पादक) को सर प्रताप विधि महाविद्यालय, जोधपुर द्वारा अपने वार्षिक अधिवेशन में 23 दिसम्बर को 'अवार्ड ऑफ एक्सीलेन्स' पदक देकर सम्मानित किया गया। *-नौरतनमल मेहता*

श्रद्धाञ्जलि

जोधपुर-अनन्य गुरुभक्त संघसेवी, सुश्रावक श्री सुमेरनाथजी सुपुत्र श्री सौभाग्यनाथजी मोदी का 8 दिसम्बर, 2022 को देहावसान हो गया। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा., उपाध्यायप्रवर पण्डित रत्न श्री मानचन्द्रजी

म.सा. आदि ठाणा तथा महासती मण्डल के जोधपुर चातुर्मास में आप सहित परिवारजनों ने दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण के साथ धर्म-ध्यान का अपूर्व लाभ प्राप्त किया। आप स्वयं ने संस्कारी जीवन जीते हुए अपने पारिवारिकजनों को भी धार्मिक संस्कार देने का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया, जिसके फलस्वरूप मोदी परिवार संघ-सेवा, समाज सेवा, स्वधर्मी वात्सल्य एवं आतिथ्य-सत्कार में सदैव अग्रणी है। आपने अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अतिरिक्त महामन्त्री तथा श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ जोधपुर के मन्त्री पद का दायित्व बखूबी निर्वहन किया। आप नियमित घोड़ों के चौक स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में पधारकर सन्त-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण एवं पर्व तिथियों पर विशेष धर्म-ध्यान करते थे तथा सेवा-धर्म की साधना में समर्पित भाव से सन्नद्ध रहते थे। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जोधपुर-संघनिष्ठ, धर्मनिष्ठ, अनन्य गुरुभक्त सुश्रावक श्री सोनराजजी चौपड़ा का 27 दिसम्बर, 2022 को

देहावसान हो गया। आपका जीवन संघ एवं समाज सेवा में समर्पित रहा एवं सन्त-सतीवृन्द के प्रति आपकी अगाध श्रद्धाभक्ति थी। आप नियमित रूप से गुरु भगवन्तों के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ प्राप्त करने वाले अग्रणी श्रावक थे। आप रत्नसंघीया महासती श्री सुश्रीप्रभाजी म.सा. तथा महासती श्री शारदाजी म.सा. के सांसारिक चाचाजी थे। आपका परिवार रत्नसंघ की सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है। आपके भतीजे श्री गजेन्द्रजी चौपड़ा श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर के अध्यक्ष पद का दायित्व बखूबी निर्वहन कर रहे हैं। सन्त-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी भाई-बहिनों के आतिथ्य-सत्कार में आपका परिवार सदैव तत्पर रहता है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

चेन्नई-धर्मनिष्ठ एवं उदारमना सुश्रावक श्री पारसमलजी कोठारी का 14 दिसम्बर, 2022 को संथारापूर्वक

समाधिमरण हो गया। आप सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में सदैव तत्पर रहते थे। आप एवं आपका परिवार संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा है एवं संघ द्वारा संचालित गतिविधियों एवं प्रवृत्तियों से निष्ठापूर्वक जुड़ा हुआ है। आप रणसीगाँव और चेन्नई में पधारने वाले संत-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में आप सक्रिय रहते थे एवं चातुर्मास काल में विशेष धर्माराधन कर लाभ प्राप्त किया करते थे। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

चेन्नई-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री प्रकाशचन्दजी कोचर मूथा का 20 दिसम्बर, 2022 को देहावसान हो गया। आपका

परिवार संघ द्वारा सञ्चालित गतिविधियों एवं प्रवृत्तियों से निष्ठापूर्वक जुड़ा हुआ है। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा के पीपाड़ शहर में विराजने पर आपने धर्म-ध्यान का अपूर्व लाभ प्राप्त किया तथा आलन्दूर-चेन्नई में पधारने वाले सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में आप सक्रिय रहते थे। सन्त-सतीवृन्द के चातुर्मास काल में आप विशेष धर्माराधन कर लाभ प्राप्त किया करते थे एवं संघ के किसी भी आदेश की परिपालना में सदैव तत्पर रहते थे। आपने स्वाध्याय संघ, चेन्नई शाखा में संयोजक के रूप में अपनी महनीय सेवाएँ प्रदान की। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जयपुर-दृढ़धर्मी, संघनिष्ठ, धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री सुरेन्द्रकुमारजी सुपुत्र स्व. श्री उम्मेदमलजी जैन (चौथ का बरवाड़ा

वाले) का 6 दिसम्बर, 2022 को 65 वर्ष की वय में देहावसान हो गया। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करते थे। चातुर्मास के दौरान सन्त-सतियों के प्रवचन का लाभ लेना आपकी दिनचर्या का अहम् हिस्सा था। आपकी जैन आगम शास्त्रों के अध्ययन में विशेष रुचि थी। आपका सम्पूर्ण परिवार रत्नसंघ की गतिविधियों में सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है और सन्त-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी

भाई-बहिनों के आतिथ्य-सत्कार में भी अग्रणी है। आप अपने पीछे भरापूरा संस्कारवान परिवार छोड़कर गए हैं।

-नरेन्द्र कुमार जैन, जयपुर

जलगाँव-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री संजयजी धोका का 7 दिसम्बर, 2022 को देहावसान हो गया। वाणी की मधुरता, व्यवहार की सरलता और मन की निष्कपटता के कारण आप सबके प्रियपात्र थे। आप नियमित रूप से गुरु भगवन्तों के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ प्राप्त करते थे। आप रत्नसंघीय दिवंगत तपस्वी श्रद्धेय श्री मोहनमुनिजी म.सा. के सांसारिक सुपुत्र थे। धोका वीर परिवार रत्नसंघ की सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है। जलगाँव में संत-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी भाई-बहिनों के आतिथ्य-सत्कार में आपका परिवार सदैव तत्पर है।

-धनपत सेठिया, महामन्त्री

जलगाँव-वरिष्ठ सुश्राविका श्रीमती ललिताजी धर्म सहायिका स्व. श्री गुलाबचंदजी कटारिया का 17 दिसम्बर, 2022 को 69 वर्ष की आयु में सागारी संथारापूर्वक देहावसान हो गया। आपका सम्पूर्ण परिवार धार्मिक गतिविधियों एवं प्रवृत्तियों से निष्ठापूर्वक जुड़ा हुआ है। आपने श्री महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय संघ जलगाँव की ओर से वरिष्ठ स्वाध्यायी के रूप में वर्षों तक अपनी सेवाएँ प्रदान की। अनेक स्वाध्यायियों के लिए आपका जीवन प्रेरणास्पद रहा है। जिस क्षेत्र में आपने स्वाध्यायी रूप में सेवा प्रदान की है वह क्षेत्र और वहाँ के व्यक्ति आज भी आपको याद करते हैं। आपके कार्य को देखकर श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ जोधपुर ने आपको वरिष्ठ स्वाध्यायी-सम्मान पुरस्कार प्रदान किया था, जलगाँव सुशील बहू मण्डल की भी आप मार्गदर्शक एवं वरिष्ठ अध्यापिका रही हैं।

-श्रीमती नयनतारा बाफना

जोधपुर-अनन्य गुरुभक्त, संघ-सेवी सुश्रावक श्री श्रीपालचन्दजी सुपुत्र स्व. श्री लादुरामजी डोसी का 13 दिसम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो गया। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति गहरी श्रद्धा-भक्ति थी। आपका जीवन त्याग-प्रत्याख्यान से युक्त था। आप प्रतिदिन सामायिक-साधना किया करते थे। घोड़ों का चौक में पधारने वाले सन्त-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन एवं सेवा-भक्ति में आप सदैव तत्पर रहते थे। जीवन के अन्तिम क्षणों में स्वास्थ्य की प्रतिकूलता में भी आपने समभाव बनाए रखा।

बालोतरा-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती कमलादेवीजी धर्मपत्नी श्री गौतमचन्दजी बाफना का 28 अक्टूबर, 2022 को 60 साल की वय में स्वर्गवास हो गया। आप सरल स्वभावी एवं धार्मिक प्रवृत्ति की थीं। आप हमेशा सामायिक एवं प्रतिक्रमण करती थीं एवं साधु सन्तों की सेवा में अग्रणी रहती थीं। आपका पूरा परिवार धार्मिक एवं तपस्या के क्षेत्र में अग्रणी है।

-सोहनलाल जैन

बैतूल (म.प्र.)-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री इन्दरचन्दजी जैन (तातेड़) का 10 नवम्बर, 2022 को 82 वर्ष की वय में संथारा सहित देवलोक गमन हो गया। आप धर्म प्रिय सुश्रावक थे। आपके प्रतिदिन सामायिक करने का नियम था। सन्त-सतियों की सेवा एवं धार्मिक चर्चाओं में अग्रणी रहते थे। 50 वर्ष से अधिक समय तक पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्यरत थे। आप बैतूल स्थानकवासी श्वेताम्बर संघ के संरक्षक थे एवं कई धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं से जुड़े हुए थे।

-प्रेमचन्द चपलोद, जयपुर

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री महावीर प्रसादजी पुत्र स्व. श्री दुर्गाप्रसादजी जैन (मूल निवासी-नांगल सहाड़ी) का 30 नवम्बर, 2022 को 86 वर्ष की उम्र में देवलोक गमन हो गया। आपका जीवन त्याग-तपस्या से परिपूर्ण था। आपका सम्पूर्ण परिवार संघ द्वारा सञ्चालित गतिविधियों एवं प्रवृत्तियों से निष्ठापूर्वक जुड़ा हुआ है। आपने अपने जीवन में छोटी-बड़ी कई तपस्याएँ की। आप अपने पीछे

तीन सुपुत्र एवं सुपुत्री तथा तीन सुपौत्र और चार सुपौत्रियों, एक पड़पौत्र, एक पड़पौत्री आदि से युक्त संस्कारवान् भरापूरा परिवार छोड़कर गये हैं। *-अनिल जैन*

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती कमलाकँवरजी धर्मसहायिका स्व. श्री परसनचन्दजी जैन (गाँधी) का 21 दिसम्बर, 2022 को 88 वर्ष की वय में स्वर्गवास हो गया। आपका जीवन सहज, सरल एवं सादगी से परिपूर्ण तथा त्याग-तपस्या से युक्त था। आप नियमित रूप से सामायिक-स्वाध्याय करती थीं। सन्त-सतियों की सेवा में सदैव अग्रणी थीं। *-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री*

नागपुर-वरिष्ठ सुश्रावक श्री शीतलचन्दजी (इन्दरचन्दजी) सुपुत्र स्व. श्री भँवरलालजी सुराणा का 6 दिसम्बर,

2022 को 81 वर्ष की वय में संथारा सहित स्वर्गवास हो गया। आप नागपुर संघ के आधार स्तम्भ थे। आपने सचित्त का त्याग, रात्रि भोजन, जमीकंद, बड़े स्नान का त्याग जैसे अनेक पच्चक्खानों का आजीवन सजगता से पालन किया। विगत चार वर्षों से स्वास्थ्य की प्रतिकूलता रहने पर भी निरन्तर रात्रि संवर, सामायिक, पौषध, तपस्या, केश-लुंचन आदि अनेक रूपों में धर्माराधन में रत रहे। चर्मचक्षु से बिल्कुल न दिखते हुए भी आपने दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, नन्दीसूत्र आदि आगमों के बहुत से अध्ययन कण्ठस्थ कर लिये थे। थोकड़ों के ज्ञान से भी आपका लगाव अत्यन्त प्रशंसनीय था। साधर्मी सहायता तथा गुप्तदान में भी आप उदार हृदया थे। इस वर्ष के चातुर्मास में भी आपने 4 माह तक नित्य जिनवाणी श्रवण एवं दो माह तक एकान्तर तप की आराधना का लाभ लिया। आप अपने पीछे पत्नी, एक पुत्र, पुत्रवधू, चार पुत्रियाँ, पोते-पोती, दोहिते-दोहित्री से भरापूरा परिवार छोड़ गये हैं। *-कामना सावल*

जोधपुर-संघ-सेवी सुश्रावक डॉ. रविजी सुपुत्र श्री बुलाकीजी कोठारी (कलकत्ता निवासी) का 21 नवम्बर, 2022

को अमेरिका में देहावसान हो गया। आप सन्त-सतीवृन्द के चातुर्मास में दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण हेतु तत्पर रहते थे। आप जोधपुर के प्रतिष्ठित भाण्डावत परिवार के कँवर साहब थे। रत्नसंघ समर्पित भाण्डावत परिवार संघ एवं समाज-सेवा में सदैव अग्रणी है। श्री संदीपजी भाण्डावत अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ में गजेन्द्र निधि ट्रस्टी, धर्मसहायिका श्रीमती बिन्दूजी भाण्डावत अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की कोषाध्यक्ष तथा सुपुत्र श्री श्रेयांसजी भाण्डावत अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद में कार्याध्यक्ष पद का दायित्व बखूबी निर्वहन कर रहे हैं। स्वधर्मी वात्सल्य एवं आतिथ्य-सत्कार में भी भाण्डावत परिवार सदैव समर्पित हैं। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

नई दिल्ली-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती सगुनाबाईजी धर्मसहायिका श्री केदूलालजी टाटिया का 22 अक्टूबर, 2022 को संथारा सहित देव लोक गमन हो गया। आपकी देव, गुरु एवं धर्म के प्रति असीम आस्था थी। आपके सुपुत्र श्री दिलीप कुमारजी टाटिया ऑल इण्डिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स, नई दिल्ली की ज्ञान प्रकाश योजना के राष्ट्रीय मन्त्री हैं। *-दिलीप कुमार टाटिया*

जोधपुर-संघनिष्ठ, धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती बैजूजी धर्मपत्नी श्री लेखराजजी पारख का 19 दिसम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो गया। आपका जीवन सहज, सरल एवं सादगी से परिपूर्ण था। आप नियमित रूप से सामायिक-स्वाध्याय के साथ ओली तप की भी तपस्या तथा तेले की छोटी-बड़ी बहुत-सी तपस्याएँ भी करती रहती थीं एवं सन्त-सतियों की सेवा में सदैव अग्रणी रहती थी। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं। *-धीरज डोसी, जोधपुर*

उपर्युक्त दिवगंत आत्माओं को अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं सभी सम्बद्ध संस्थाओं के सदस्यों की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 89
ISSN 2249-2011

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

16374 श्री एलेशजी सिंघवी, अहमदाबाद (गुजरात)
16375 श्री अनिलजी डाकलिया, दुर्ग (छत्तीसगढ़)
16376 श्री प्रमोदजी छाजेड़, जोधपुर (राजस्थान)
16377 श्री हेमन्त कुमारजी चौपड़ा, पाली-मारवाड़ (राज.)
16378 श्री मननजी नाहटा, बीकानेर (राजस्थान)
16379 श्रीमती शशिजी जैन, मानसरोवर-जयपुर (राज.)
16380 श्री महेशजी मोहनोत, जोधपुर (राजस्थान)

जिनवाणी प्रकाशन योजना हेतु

100000/-श्रीमती अर्चनाजी कोठारी, बड़ोदरा (गुजरात)

जिनवाणी मासिक पत्रिका हेतु साभार

5000/- श्रीमती प्रमिलाजी बम्ब, जयपुर, स्व. श्री सन्तोषजी बम्ब की 15वीं पुण्य-स्मृति में।

5000/- श्री पदमचन्दजी, श्रीमती इचरजदेवीजी मुणोत, जयपुर, सुपौत्र चि. शुभमजी सुपुत्र श्री महेन्द्रजी, चि. नमनजी सुपुत्र श्री सुनीलजी मुणोत के शुभविवाह के उपलक्ष्य में।

5000/- श्री पदमचन्दजी, श्रीमती इचरजदेवीजी मुणोत, जयपुर, पूज्य पिताजी श्री गाढ़मलजी मुणोत के 42वें स्मृतिदिवस के उपलक्ष्य में।

3100/- श्री महेन्द्रसिंहजी ढड्ढा, जोधपुर, सुपौत्री यश्वी सुपुत्री श्री संजयजी-श्रीमती मोनाजी ढड्ढा के पुरस्कृत होने पर सप्रेम।

3100/- श्री नरेन्द्र कुमारजी, अभिनन्दनजी जैन (चकेरी वाले), सवाईमाधोपुर, पूज्य पिताजी श्री फूलचन्दजी जैन की 2 दिसम्बर को पुण्यस्मृति के उपलक्ष्य में।

2111/- श्री हरकचन्दजी, दिनेश कुमारजी, सुधीर कुमारजी जैन (बीलोता वाले), महारानी फार्म-जयपुर, चि. आयुषजी का शुभविवाह सौ.कां. शिल्पाजी के संग होने के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री माणकचन्दजी, रविन्द्रकुमारजी, योगेन्द्र कुमारजी जैन, देई-बून्दी की ओर से सप्रेम।

2100/- श्री नरेन्द्रजी, सचिनजी, नितिनजी (प्रभु-तारा परिवार फाजिलाबाद वाले), हिण्डौनसिटी, स्व. वीरमाता श्रीमती तारादेवीजी जैन की 4 जनवरी, 2023 को 12वीं पुण्यस्मृति के उपलक्ष्य में।

2100/- वीरभ्राता श्री नरेन्द्रजी सेवानिवृत्त प्राचार्य एवं श्रीमती सावित्रीजी जैन सेवानिवृत्त व्याख्याता, (प्रभु-तारा परिवार फाजिलाबाद वाले), हिण्डौनसिटी, बहन महाराज के 19 दिसम्बर, 2022 को संयम के 40वें वर्ष में मंगल प्रवेश करने के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री तेजराजजी, पारसमलजी धोका, सोजतसिटी, पूज्य पिताजी श्री मगराजजी धोका का 15 दिसम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

2100/- श्री महेन्द्रजी, ललितजी गांग, सूरत, सुपौत्री अनाया के 16वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री पारसमलजी, शान्तिलालजी, संजय कुमारजी कवाड़, पाली-मारवाड़, श्री जुगराजजी कवाड़ का 13 नवम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पावनस्मृति में।

2100/- श्री प्रविन्द्र कुमारजी, दीपक कुमारजी, चन्दन कुमारजी जैन (चौथ का बरवाड़ा वाले), मानसरोवर-जयपुर, पूज्य पिताजी श्री सुरेन्द्रकुमारजी जैन का 6 दिसम्बर, 2022 को देहावसान हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

1111/- श्री उच्छबराजजी, श्रीमती विजयाजी मेहता, जोधपुर, अपनी शादी की वर्षगाँठ तथा सुपुत्र श्री अनुराग-डॉ. सोनल मेहता की शादी की वर्षगाँठ एवं आरांश के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री सुरेन्द्र कुमार जी जैन (पाटोली वाले), देवली-टोंक, सुपुत्र चि. कुलदीपजी का शुभविवाह सौ.कां निधिजी जैन सुपुत्री श्री मुकेशजी जैन (एण्डवा वाले) सवाईमाधोपुर के संग 8 दिसम्बर, 2022 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

1100/- श्री महावीरजी, रमेश कुमारजी जैन (रानीपुरा वाले), कोटा, चि. गौरवजी का शुभविवाह सौ.कां. प्राचीजी सुपुत्री श्री नरेन्द्रजी जैन दिल्ली के संग 2 दिसम्बर, 2022 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

1100/- श्री रमेशचन्दजी, निलाम्बरजी, रमणजी, मोनूजी (डांगरवाड़ा वाले), सवाईमाधोपुर, पुत्रवधू श्रीमती पिंकीजी जैन की पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री पारसचन्दजी, विजयकुमारजी, धर्मेन्द्र कुमारजी जैन, सोप -टोंक, चि. जितेन्द्रजी जैन के शुभविवाह के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री ललित कुमारजी, प्रेमलताजी कटारिया, चेन्नई, वर्द्धमान ओली तप सम्पन्न होने की खुशी में।

1100/- श्री रविन्द्र कुमारजी, महेन्द्रकुमारजी, देवेन्द्र कुमारजी जैन (नांगल सहाड़ी वाले), जयपुर, पूज्य पिताजी श्री महावीरप्रसादजी जैन का 30 नवम्बर, 2022 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री दौलतजी, उत्तमजी चोरड़िया, चेन्नई, प्रथम बार 2022 में महामन्दिर जोधपुर चातुर्मास में सपत्नीक पाँच माह गुरुचरण सन्निधि एवं साधना-आराधना का सौभाग्य प्राप्त होने पर।

1100/- श्री महेशजी मोहनोत, जोधपुर, सुपुत्र श्री अरिहन्तजी मोहनोत के कलकत्ता एन.एल.यू. से एल.एल.एम. प्रथम श्रेणि से उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल हेतु साभार

1100/- श्री दौलतजी, उत्तमजी चोरड़िया, चेन्नई, प्रथम बार 2022 में महामन्दिर जोधपुर चातुर्मास में सपत्नीक पाँच माह गुरुचरण सन्निधि एवं साधना-आराधना का सौभाग्य प्राप्त होने पर।

गजेन्द्र निधि/गजेन्द्र फाउण्डेशन हेतु

(1) श्री प्रकाशचन्दजी हीरावत, जयपुर (राज.)

(2) श्री वीरेन्द्रजी (सोनू), सौरभजी डागा, जयपुर-मुम्बई।

(3) श्री हेमन्तजी कैलाशमलजी दुगड़, चेन्नई।

जिनवाणी पर अभिमत

(1)

दिसम्बर 2022 का जिनवाणी अंक मेरे लिए विशेषकर संग्रहणीय अंक है। इसमें मेरे पिताश्री संथारासाधक स्व. श्री प्रेमचन्दजी जैन का श्रद्धाञ्जलि सन्देश प्रकाशित हुआ है। इसके साथ ही यह अंक अनेक विशेषताएँ लिए हुए है।

गुरु भगवन्तों पर लिखे गये लेख हमेशा ही प्रेरणादायी होते हैं। ठीक उसी प्रकार इस अंक में भी 'आचार्यश्री हीरा का विराट् व्यक्तित्व' और प्रवचन 'भावों की साधना है तीन मनोरथ' ज्ञान चक्षुओं को खोलने वाले हैं।

सम्पादकीय लेख 'जीवन साथी कैसा हो?' पर सभी को विचार अवश्य करना चाहिए। डॉ. दिलीपजी धींग का लेख 'लेखन कला के सूत्र' से मुझे लेखन कला की बारिकियों का पता चला। श्रीमती अंशु संजयजी सुराणा का लेख 'हर निमित्त एक प्रेरणा देता है' वास्तव में बहुत ही प्रेरणादायी लेख है। आधुनिक समाज की युवतियों के लिए चिन्तनशील लेख 'प्लीज भैया! उसे बचा लो' श्री तरुणजी बोहरा 'तीर्थ' की रचना आँखें खोलने वाली है। 'यतना : धर्मावलम्बी बनने का सुगम उपाय' लेखक श्री मनोजकुमारजी जैन 'पाटोली' का यह लेख हमारे रोजमर्रा के कार्यों को सजगता एवं सावधानी से करने पर जोर देता है। इतने सुन्दर चिन्तनशील, ज्ञानवर्धक अंक के लिए धन्यवाद।

-श्रीमती सुमन जैन, 38/341, रजतपथ, मानसरोवर, जयपुर-302020

(2)

अभी हाल ही में जिनवाणी दिसम्बर 2022 का अंक पढ़ा, जिसमें आपके द्वारा लिखा गया सम्पादकीय 'जीवन साथी कैसा हो?' वर्तमान समय में अत्यन्त प्रासंगिक और उपयोगी है। सम्पादकीय के माध्यम से आपने वर्तमान युवा पीढ़ी का जो मार्गदर्शन किया है, मैं उसकी हृदय से प्रशंसा करता हूँ।

आपने आज की युवा पीढ़ी को सही जीवन साथी चुनने के लिए अति उत्तम सुझाव दिए हैं, जिनका अनुसरण करके वर्तमान युवापीढ़ी ऊहापोह से मुक्त हो सकती है। इस समयोचित लेख के लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि अनेक युवक-युवतियाँ इससे मार्गदर्शित होते हुए अपने भावी जीवन को सुखी एवं प्रसन्नचित्त बनायेंगे। इसी अंक में भावी आचार्य श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. का प्रवचन- 'चरित्रवान श्रावक ही चारित्रात्माओं की सेवा कर सकता है।' यह विशेष तथ्यात्मक प्रवचन वर्तमान श्रावक समाज को सजग करने में सार्थक सिद्ध होगा।

-श्री एन. सुगालचन्द जैन, चेन्नई (तमिलनाडु)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 91
ISSN 2249-2011

बाल-जिनवाणी

प्रतिमाह बाल-जिनवाणी के अंक पर आधारित प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले अधिकतम 20 वर्ष की आयु के श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को सुगनचन्द प्रेमकँवर रांका चेरिटेबल ट्रस्ट-अजमेर द्वारा श्री माणकचन्दजी, राजेन्द्र कुमारजी, सुनीलकुमारजी, नीरजकुमारजी, पंकजकुमारजी, रौनककुमारजी, नमनजी, सम्यक्जी, क्षितिजजी रांका, अजमेर की ओर से पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-600 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-400 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 300 रुपये तथा 200 रुपये के तीन सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है। उत्तर प्रदाता अपने नाम, पते, आयु तथा मोबाइल नम्बर के साथ बैंक विवरण-बैंक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस. कोड आदि का भी उल्लेख करें।

नववर्ष में नया संकल्प लो

श्री शुभम बोहरा

नववर्ष में अब नया संकल्प लो।
विकृतियों को मिटाकर, संस्कार का विकल्प लो।।
संस्कृति जो तार-तार हो रही,
पश्चिम की हवा जो बुद्धि पे सवार हो रही,
बचाने हेतु संस्कृति को, अब नया प्रबन्ध हो।
नववर्ष में अब नया संकल्प लो.....

ढल रहा है सूर्य, क्यों संस्कार के आलोक का?
बह रहा क्यों दूषित झरना, आज खारे नीर का?
अभिनव करो, अभिनय नहीं, अभिलाषी बन कर्त्तव्य लो,
नई पीढ़ी को जगाओ, कोई तो इन्हें प्रतिबोध दो,
मॉडर्न कल्चर है विनाशक, सत्य का इन्हें बोध दो।
अपने घरों में सभ्यता का, अब बना एक कल्प लो।
नववर्ष में अब नया संकल्प लो.....

प्रणाम करने की रीत, भूली है क्यों नई पीढ़ी?
मोबाइल की ओट में, क्यूँ जा छिपी नई पीढ़ी?
अपनी परम्परा की पृष्ठभूमि पर, इन्हें उतार लो।
नववर्ष में अब नया संकल्प लो.....

अपनी मर्जी का है करते, रोक-टोक इन्हें चलती नहीं,
सेक्युलर हैं ये पढ़े लिखे, हमारी बातें इन्हें जँचती नहीं,
चल रहा क्या भीतर में इनके, हर घर में ये संज्ञान लो।
नववर्ष में अब नया संकल्प लो.....

अपने धर्म की शिक्षा न दी, तो होंगी कई आफत इन्हें,
सब धर्म हैं बराबर, है ऐसी भ्रामकता इन्हें,
भागे न कोई बेटी घर से, ऐसा इन्हें संस्कार दो।
नववर्ष में अब नया संकल्प लो.....

-नयनतारा गेस्ट हाउस, मोहदी रोड़, जलगाँव-425001 (महाराष्ट्र)

वे मुझे क्या सिखायेंगे?

श्रीमती निधि दिनेश लोढ़ा

पीहू की सातवीं कक्षा की परीक्षा हो चुकी थी और वह अपनी दादी के घर आ गई थी। पीहू अपने मम्मी-पापा की इकलौती लड़की है। मम्मी-पापा दोनों काम पर जाते हैं, इसलिए जैसे ही छुट्टियाँ होती हैं वह अक्सर दादी के घर रहने चली आती है।

दादी पीहू को बहुत प्यार करती है। रोज उसके पसन्द का खाना बनाती है और बड़े प्यार से खुद खिलाती है। दोपहर में पीहू के साथ कभी साँप-सीढ़ी, कभी केरम तो कभी लूडो भी खेलती है। शाम को दादी पीहू को पार्क में ले जाती है। वहाँ कई हम उम्र के बच्चों

के साथ उसकी दोस्ती हो गई है। पीहू बहुत आनन्द से रहती है। रात को दादी रोज नई-नई कहानियाँ सुनाती है। इस तरह से उसके दिन बहुत अच्छे बीत रहे थे।

एक दिन दादी ने कहा-''आज मैं बहुत थक गई हूँ, आज मैं कहानी नहीं सुना रही। आज तुम ही कुछ सुना दो।''

पीहू बोली-''मैं क्या सुनाऊँ?''

दादी ने कहा ''मम्मी-पापा तुमको क्या अच्छी-अच्छी बातें सिखाते हैं? तुम मुझे वही बता दो।''

पीहू तपाक से बोली-''वे मुझे क्या सिखायेंगे दादी? वे तो खुद ही पूरे समय लड़ते रहते हैं।''

दादी को समझ ही नहीं आया कि वह क्या बोले। दादी ने विषय बदलकर कहा-''चल मेरी तो नींद उड़ गई। मैं ही तुझे कहानी सुनाती हूँ।''

कहानी सुनते-सुनते पीहू सो गई, पर दादी की आँखों से नींद मानो कोसो दूर थी।

दादी ने बेटे को फोन लगाया और कहा-''बेटा! हो सके तो कल बहू को लेकर यहाँ आ जाओ।'' अगले दिन पीहू के मम्मी-पापा वहाँ पहुँच गये। दादी ने पीहू को खेलने भेज दिया और उनको समझाया कि बच्चे वह नहीं सीखते जो हम कहते हैं, बच्चे वह सीखते हैं जो वे देखते हैं। आपस में मतभेद होना स्वाभाविक है, परन्तु बच्चों के सामने जोर-जोर से बोलना और झगड़ना ठीक नहीं। तुम अलग से अपने झगड़े निपटाओ और पीहू के सामने अच्छे माता-पिता की छवि बनाओ। माँ की इस सीख को दोनों ने स्वीकार किया।

यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि बच्चे वही करते हैं जो वे देखते हैं।

-वर्ली, मुम्बई (महाराष्ट्र)

खुद से मत हारो

श्री त्रिलोकचन्द जैन

'कोई तुम्हें तब तक नहीं हरा सकता है, जब तक कि तुम खुद से न हार जाओ।' मूवी का डायलॉग व्यक्ति को कभी न हारने का ज़ज्बा रखने को प्रेरित करता है। व्यक्ति तब ही घुटने टेकता है जब हालात उस पर हावी हो जाते हैं। दुःख आते हैं, कष्ट आते हैं, पर ये तब तक हावी और प्रभावी नहीं हो पाते, जब तक हम टूटते नहीं हैं। अगर हम इरादों से कमजोर होते हैं तो हालात समस्या बन जाते हैं, इरादों से स्थिर होते हैं तो हालात चुनौती बन जाते हैं और यदि इरादों से मजबूत होते हैं तो हालात अवसर बन जाते हैं। अनेक लोग तो जीतने के लिए शुरुआत ही नहीं करते, क्योंकि वे डरते हैं कि यदि ऐसा-वैसा हो गया तो मैं क्या करूँगा? इस डर के कारण वे अपने क़दम पीछे ही खींचे रखते हैं। लेकिन कुछ लोग ऐसे भी हैं जो जीत से अपना आत्मविश्वास बढ़ाते हैं और हार को चुनौती समझकर स्वीकार करते हैं। वे Fail का अर्थ हारना नहीं करके First Attempt in Learning करते हैं। उनके भीतर ये बात कूट-कूटकर भरी होती है कि 'हार नहीं माननी है।'

मन के हारे हार हुई है, मन के जीते जीत सदा।
सावधान मन हार न जाना, मन से मानव बना सदा।।

जब तक आप जीवन के मैदान में डटे रहेंगे तब तक आपको कोई हरा नहीं सकता। कभी मैदान मत छोड़ो। (Never quit life game.) जब तक आप जीवन के मैदान में हैं आप हँस सकते हैं, रो सकते हैं, भटक सकते हैं, सीख सकते हैं, जीत सकते हैं, हार सकते हैं, बस डटे रहिए, मैदान मत छोड़िये। कभी हार मत मानिये (Never give up)। आज अन्धेरा है, हो सकता है कल यह अन्धेरा और भी गहरा हो जाए, लेकिन विश्वास रखिए परसों उजाला जरूर होगा और तब यह अन्धकार छिन्न-भिन्न हो जायेगा। इस दुनिया में सबसे कठिन काम है मैदान में डटे हुए आदमी को हराना, क्योंकि जब तक वह डटा रहता है, हार नहीं मानता है तब तक उसे हारा हुआ नहीं कह सकते और हार माने बगैर किसी की जीत हो नहीं सकती है। बस डटे रहिए, हारना अलग है और हार मान जाना अलग है। खुद कभी हार मत मानिये। खुद से हारने पर हार निश्चित है। खुद से नहीं हारने पर तुम हमेशा विजयी ही रहोगे।

लेकिन व्यक्ति की फितरत निराशा की होती जा रही है, एक बार जो इसके तले दब गया, फिर वह कभी उभरने का नाम नहीं लेता। नये काम का प्रारम्भ लोग उत्साह से करते हैं, लेकिन निश्चित समय के बाद भी उन्हें सफलता नहीं मिलती तो उनका उत्साह खत्म होने लगता है, बस यहीं से हम खुद से हारना प्रारम्भ कर देते हैं। अधिकतर लोग उतनी ही सफलता प्राप्त करते हैं जितनी वे अपने दिमाग में तय कर लेते हैं। इसलिए अपनी उड़ान को सीमाओं में मत बाँधो, मजबूत इरादों से असीमित को पाने का निश्चय करो।

हार मानने से कुछ नहीं मिलेगा।
कोशिश करते रहो, तजुर्बा तो मिलेगा।।

हार मान लेना तो खुद का अपमान करने जैसा है। जो खुद का सम्मान करता है वह कभी ऐसा नहीं करता। आज का संघर्ष कल आपकी ताकत बन जायेगा। इसलिए कभी भी संघर्ष करते हुए निराश मत होओ। मुश्किल दौर तो जीवन का हिस्सा है, इस हिस्से को स्वयं के आत्म-विश्वास के बल पर गुजारो। जो कभी हार नहीं मानते, उनके जीवन के अमर वाक्य होते हैं- (1) सबने कहा कि तेरे नसीब में नहीं है, पर खुद को न जाने क्यों यकीन नहीं है। (2) महाभारत के पात्र अभिमन्यु की एक बात आज भी प्रसिद्ध है-हिम्मत से हारना, लेकिन हिम्मत कभी मत हारना। (3) हारो, पर खुद से मत हारो। (4) कोई भी सपना मुश्किल नहीं, जीता वही जो डरा नहीं।

आप अपने से वादा करिये और उसे निभाने के लिए जी-जान एक कर दीजिए, फिर देखिये जीने का भी मजा अलग और जीतने का भी मजा अलग।

-37/67, रजत पथ, मानसरोवर, जयपुर-302020 (राज.)

अहंकार

संकलित

सुरेश नाम का लड़का बड़ा चतुर था। उसने बहुत सी कलाएँ सीखीं। तीर चलाना, नाव खेना, मकान बनाना आदि अनेक कलाओं में वह निष्णात हो गया। उसने और भी अनेक उपयोगी हुनर सीख लिए थे। अपने अध्ययन की समाप्ति के पश्चात् वह घर लौटा। अपनी अर्जित कलाओं का उसे बड़ा अभिमान हो गया। बड़े गर्व से वह लोगों को कहता-''इस दुनिया में मेरे मुकाबले का कोई कलाकार नहीं है। मेरी कला की बराबरी अच्छे-अच्छे हुनरमन्द भी नहीं कर सकते हैं।''

गाँव वाले उसकी डींगें सुन-सुनकर बड़े परेशान थे। संयोग की बात है, एक बार एक जैन भिक्षु उस गाँव में विहार करते हुए आये। अनेक लोग उन साधुजी के प्रवचन सुनने को गये। वह सुरेश कलाकार भी कुतूहलवश प्रवचन सुनने गया। भक्तों द्वारा साधुजी के प्रति भक्ति बहुमान को देखकर वह कलाकार विस्मित हुआ।

वह भी जैन साधुजी को वन्दना करने गया। सुरेश कलाकार ने जैन साधुजी से उनका परिचय जानना चाहा, तब साधुजी बोले-''मैं अपने को वश में रखने वाला एक कलाकार हूँ।'' उनकी बात सुरेश को समझ में नहीं आई। उसने कहा-''आपका मतलब?'' साधुजी बोले-''कोई आदमी तीर चलाना जानता है, कोई नाव खेना जानता है, कोई घर बनाना जानता है, लेकिन ज्ञानी आदमी अपने ऊपर शासन करना जानता है।'' सुरेश इतना समझाने पर भी कुछ समझ नहीं पाया।

जिज्ञासावश उसने पूछा-''यह अपने ऊपर शासन करना क्या होता है?'' साधुजी ने उत्तर दिया-''अगर कोई प्रशंसा करे तो खुशी से जो नहीं फूलता, निंदा करने पर दुःखी नहीं होता है। इस प्रकार मन को स्वयं के वश में रखता है। ऐसा व्यक्ति किसी कला का अभिमान नहीं करता।'' साधुजी की बात का सुरेश कलाकार पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उस दिन से उसने डींगें हाँकना बन्द कर दिया।

शिक्षा-व्यक्ति का किसी कला में निपुण होना अच्छा है, लेकिन उसका अभिमान करना कला में निपुण नहीं होने से भी बुरा है।

प्रतिक्रमण-प्रश्नोत्तर

प्र. 1– प्रतिक्रमण करने से क्या आत्मशुद्धि (पाप की धुलाई) हो जाती है।

उत्तर– प्रतिक्रमण में दैनिकचर्या आदि का अवलोकन किया जाता है। इसमें आस्रवद्वार (अतिचार आदि) रूप छिद्रों को देखकर रोक दिया जाता है। जिस प्रकार आत्मा पर लगे अतिचार आदि की मलिनता को पश्चात्ताप आदि के द्वारा साफ किया जाता है। व्यवहार में भी अपराध को सरलता से स्वीकार करने पर, पश्चात्ताप आदि करने पर अपराध हल्का हो जाता है। जैसे 'माफ कीजिए (सॉरी)' आदि कहने पर माफ कर दिया जाता है। उसी प्रकार अतिचारों की निन्दा करने से, पश्चात्ताप करने से आत्म-शुद्धि (पाप की धुलाई) हो जाती है। दैनिक जीवन में दोषों का सेवन पुनः नहीं करने की प्रतिज्ञा से आत्म-शुद्धि होती है।

प्र. 2– जिसने व्रत धारण नहीं किये हैं, उसके लिए क्या प्रतिक्रमण करना आवश्यक है?

उत्तर– जिसने व्रत धारण नहीं किये हैं, उसको भी प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिए। क्योंकि आवश्यकसूत्र बत्तीसवाँ आगम बताया गया है। आगम का स्वाध्याय आत्म-कल्याण तथा निर्जरा का कारण है। प्रतिक्रमण एक ऐसी औषधि के समान है जिसका प्रतिदिन सेवन करने से विद्यमान रोग शान्त हो जाते हैं, रोग नहीं होने पर उस औषधि के प्रभाव से वर्ण, रूप, यौवन और लावण्य आदि में वृद्धि होती है और भविष्य में रोग नहीं होते हैं। इसी तरह यदि दोष लगे हों तो प्रतिक्रमण के द्वारा उनकी शुद्धि हो जाती है और दोष नहीं लगे हों तो प्रतिक्रमण भावों और चारित्र की विशेष शुद्धि करता है। इसलिये प्रतिक्रमण सभी के लिए समान रूप से आवश्यक है।

-'श्रावक सामायिक प्रतिक्रमणसूत्र' पुस्तक से

7 Secrets of success

Rajul Chopra

I found the answers in my room.

Roof said : Aim high.
Fan said : Be cool.
Clock said : Every minute is precious.
Mirror said : Reflect before you act.
Window said : See the world.
Calender said : Be up to date.
Door said : Push hard to achieve your goals.

Life Is Beautiful

Shri Jaideep Dhaddha

According to Indian scriptures, human birth is rare. All it depends on the good deeds, karmas. So keep on doing good deeds and enjoy life to the fullest. But life is not same all the time. There are many ups and down and challenges. One who learns to live with the challenges or learns to overcome them, life becomes smooth. We start loving ourselves and others too.

Loving ourselves and loving others is not a difficult task. This we can learn from the mother nature, who has given us in abundance. It gives us utmost happiness. When we are happy, we can make others happy too. We can share our happiness. The feel of sharing comes with the closeness of nature. Let's admire the nature. The brightness of the Sun. the twittering of the birds, greenery, colourful butterflies moving around flowers, music of the flowing waterfalls. Walk with friends in such a beautiful ambience, make friendship with the birds and animals. We all live with love and affection. This is what life meant for. Love is God and God is love. It is eternal bliss, which everyone can experience. This makes life beautiful, a life to live to the fullest.

-Dhaddha Market, Johari Bazar, Jaipur-302003 (Rajasthan)

बालक

डॉ. दिलीप धींग

बालक सिर्फ बालक ही नहीं है, पूरा भविष्य है,
कर्णधार है, समाज और राष्ट्र का।
मगर उसे चाहिये सहारा सुसंस्कारों के आधार का,

खिलौना प्यार का, आलम्बन आदर्श परिवार का।
मत बनाओ उसे गुलाम, टीवी, मोबाइल, चित्रहार का।
उसे स्वतन्त्र रखो, स्वच्छन्द नहीं,
प्रखर रखो, मन्द नहीं।
उसे नैतिक, चारित्रिक कहानियाँ सुनाओ,
महापुरुषों की जीवनियाँ बताओ।
प्रकृति का सौन्दर्य दिखाओ,
विनय, शालीनता और धैर्य सिखाओ।
साहस और शौर्य प्रगटाओ।।
उसे पढ़ने दो, खेलने दो, पवित्र परिवेश में,
बचपन के झूले में झूलने दो, पलने दो,
प्रभात-पुष्प की भाँति खिलने दो,
दीप-अगरबत्ती की तरह जलने दो,
फिसलने पर खुद-ब-खुद सम्भलने दो,
मनुष्यता के पावन पथ पर चलने दो,
राष्ट्रीयता में मिलने दो।
हे अभिभावकों! नन्हें पौधे को यूँ ही मत झुठलाओ,
बालक को सम्पूर्ण सच्चा इंसान बनाओ।
आज का बालक ही तो,
कल समाज की गाड़ी का चालक बनेगा,
जन-जन का पालक बनेगा।

-शोध-प्रमुख : जैनविद्या विभाग, शासुन जैन कॉलेज, चेन्नई-17 (तमिलनाडु)

अहसान का भुगतान

श्री एस. कन्हैयालाल गोलेच्छा

बाहर बारिश हो रही थी और अन्दर कक्षा चल रही थी। तभी अध्यापक ने बच्चों से पूछा-''अगर तुम सभी को 100-100 रुपये दिए जाएँ तो तुम सब क्या-क्या खरीदोगे?''

किसी ने कहा-मैं वीडियो गेम खरीदूँगा। किसी ने कहा-मैं क्रिकेट का बल्ला खरीदूँगा। किसी ने कहा-मैं अपने लिए प्यारी-सी गुड़िया खरीदूँगी। तो किसी ने कहा मैं बहुत-सी चॉकलेट्स खरीदूँगी।

एक बच्चा कुछ सोचने में लगा हुआ था। अध्यापक ने उससे पूछा-''तुम क्या सोच रहे हो, तुम क्या खरीदोगे?'' बच्चा बोला-''अध्यापकजी मेरी माँ को थोड़ा कम दिखाई देता है तो मैं मेरी माँ के लिए एक चश्मा खरीदूँगा।''

अध्यापक ने पूछा-''तुम्हारी माँ के लिए चश्मा तो तुम्हारे पापा भी खरीद सकते हैं। तुम्हें अपने लिए कुछ नहीं खरीदना?'' बच्चे ने जो उत्तर दिया, उससे अध्यापकजी का भी गला भर आया।

बच्चे ने कहा-''मेरे पापा अब इस दुनिया में नहीं हैं। मेरी माँ लोगों के कपड़े सिलकर मुझे पढ़ाती है और कम दिखाई देने की वजह से वह ठीक से कपड़े नहीं सिल पाती है। इसलिए मैं मेरी माँ को चश्मा देना चाहता हूँ ताकि मैं अच्छे से पढ़ सकूँ, बड़ा आदमी बन सकूँ और अपनी माँ को सारे सुख दे सकूँ।''

अध्यापक ने कहा-''बेटा तेरी सोच ही तेरी कमाई है। ये 100 रुपये मेरे वादे के अनुसार और ये 100 रुपये और उधार दे रहा हूँ। जब कभी कमाओ तो लौटा देना और मेरी इच्छा है कि तू इतना बड़ा आदमी बने कि तुझे आशीर्वाद देते हुए मैं धन्य हो जाऊँ।''

20 वर्ष बाद बाहर बारिश हो रही है और अन्दर कक्षा चल रही है। अचानक स्कूल के आगे जिला कलेक्टर की गाड़ी आकर रुकती है। स्कूल स्टाफ चौकन्ना हो जाता है। स्कूल में सन्नाटा छा जाता है। मगर यह क्या? जिला कलेक्टर एक वृद्ध अध्यापक के पैरों में गिर जाते हैं और कहते हैं-''सर! मैं उधार के 100 रुपये लौटाने आया हूँ।'' पूरा स्कूल स्टाफ स्तब्ध था। वृद्ध अध्यापक झुके हुए नौजवान कलेक्टर को उठाकर अपने भुजाओं में कसते हैं और रो पड़ते हैं।

बन्धुओं! मशहूर होकर, मगरूर मत बनना। साधारण हो, पर कमजोर मत बनना। समय बदलते देर नहीं लगती। हमें भी किसी की सहायता करनी चाहिए। हमें भी किसी का अहसान चुकाना चाहिए।

-नं. 7/25, कामराज सालै आर.ए. पुरम, चेन्नई-600028 (तमिलनाडु)

10 जनवरी 2023
जिनवाणी 96
ISSN 2249-2011

बाल-स्तम्भ

नियम का महत्त्व

संकलित

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 फरवरी, 2023 तक जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय, ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.) के पते पर प्रेषित करें। उत्तर के साथ अपना नाम, आयु, मोबाइल नम्बर तथा पूर्ण पते के साथ बैंक विवरण-बैंक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस. कोड इत्यादि का भी उल्लेख करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार-200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

एक सुन्दर-सा गाँव था। वहाँ के लोग सुखी और सम्पन्न थे। गाँव में एक जैन भाई रहता था। वह प्रतिदिन सन्त-दर्शन करने स्थानक जाता था। उसके एक पुत्र था। पुत्र को धर्म-कार्यों में रुचि नहीं थी। उसके पिता उससे कई बार सन्त-दर्शन करने स्थानक में चलने को कहते, परन्तु वह जाने को तैयार नहीं होता।

एक दिन उसके पापा ने जिद ही पकड़ ली-''तुझे स्थानक में दर्शन करने जाना ही पड़ेगा।'' उस बालक ने कहा-''मैं स्थानक तो बिल्कुल भी नहीं जाऊँगा। यदि मैं स्थानक गया तो साध्वीजी महाराज मुझे जो वस्तु पसन्द है उसे छोड़ने का नियम दे देंगे।'' उसके पापा ने समझाते हुए कहा-''बेटा! तू चल तो सही। तुझे कोई भी नियम नहीं देगा।'' बड़ी मुश्किल से पुत्र जाने को तैयार हो गया।

वह युवक अपने पापा के साथ स्थानक में गया। स्थानक में पूज्या साध्वीजी विराजमान थीं। सर्वप्रथम उन्होंने पाँच मिनट तक त्याग के विषय पर उद्‌बोधन दिया और फिर बाद में सभी से कोई न कोई नियम लेने को कहा। बालक तुरन्त अपने पापा से बोला-''देखा आपने! मैं इसी कारण स्थानक में नहीं आना चाहता था। अब यह साध्वीजी नियम देने की बात कर रही हैं।''

साध्वीजी अनुभवी और प्रज्ञावान थीं। वह बालक के मनोभावों को तुरन्त समझ गईं। वह हँसते हुए बोलीं-''मुन्ना! यदि तुझे अपनी मनपसन्द वस्तु का त्याग नहीं करना है तो मत कर, परन्तु तुझे जो अच्छा लगता है, वही प्रतिदिन करने का नियम कर ले।'' यह बात सुनकर बालक हैरान रह गया। वह टकटकी लगाकर साध्वीजी की ओर देखता रहा। साध्वीजी बोली-''मुन्ना! तुझे क्या चीज अच्छी लगती है? जो तुझे पसन्द है, उसी का मैं तुझे नियम करा दूँगी।'' बालक झट से बोला-''सती जी! हमारे पड़ोस में एक ब्राह्मण काका रहते हैं उनकी गंजी खोपड़ी और उस पर लहराती चोटी देखनी मुझे बहुत पसन्द है।'' बस, फिर क्या था साध्वीजी ने वही बात पकड़ ली और तुरन्त बोली-''आज से तुमको इतना ही करना है कि रोज सुबह उन ब्राह्मण काका की चोटी के दर्शन करने के पहले चाय-नाश्ता नहीं करना। अब बोलो इस नियम को लेने में तुमको कोई परेशानी तो नहीं है?'' बालक ने थोड़ा विचार किया फिर हाथ जोड़ते हुए बोला-''नहीं म.सा.! मुझे कोई परेशानी नहीं है।'' इतना कहते हुए उसने साध्वीजी से यही नियम ग्रहण कर लिया।

अब रोज सुबह बालक उस ब्राह्मण की गंजी खोपड़ी और चोटी देखता और उसके बाद ही चाय-नाश्ता ग्रहण करता। ऐसा करते हुए बालक का रोज का

क्रम-सा बन गया। थोड़े दिन बीत जाने पर एक बार ब्राह्मण को अचानक किसी काम से सुबह-सुबह खेत में जाना पड़ गया। इधर बालक जब ब्राह्मण की चोटी के दर्शन करने के लिए अपने घर से बाहर निकला तो उसे पता चला कि ब्राह्मण काका तो खेत में गए हैं। अपना नियम पूरा करने के लिए वह तुरन्त खेत की ओर दौड़ पड़ा।

सुबह-सुबह का वक्त था। पिछली रात गाँव में चोरी के बाद चार चोर खेत में बैठकर आपस में माल का बँटवारा कर रहे थे। थोड़ी दूर ब्राह्मण काका को सोता हुआ देखकर बालक खुशी के मारे जोर-जोर से चिल्लाते हुए बोलने लगा-**''मैंने देख लिया, मैंने देख लिया।''**

देखा तो उसने ब्राह्मण काका को था, परन्तु खेत में पेड़ के पीछे बैठे चोर समझे कि उस बालक ने हमें देख लिया है, अब वह गाँव के लोगों को बुलाकर हमें पकड़वा देगा। पकड़े जाने के डर से चारों चोर अपना सारा माल छोड़कर वहाँ से भाग गये। उन्हें भागते देख बालक ने सोचा-'अरे! इन्हें क्या हुआ? ये लोग ऐसे क्यों भाग रहे हैं?' तभी उसने अपनी नजरें इधर-उधर दौड़ाई तो उसको पास में पड़ा हुआ चोरी का सामान दिखाई दे गया।

वह बालक अच्छी तरह समझ गया। वह तुरन्त गाँव आया और पुलिस को अपने साथ खेत पर ले गया तथा चोरी का माल पकड़वा दिया। पुलिस ने उसको बहादुर समझकर उसे शाबाशी दी और बहुत अच्छा ईनाम दिया। ईनाम लेते समय बालक विचार करने लगा-'यह ईनाम और सम्मान मेरे नियम का ही प्रताप है। मुझे तो साध्वीजी ने मेरा मनपसन्द नियम दिया था, उसका इतना बड़ा फायदा कि मैंने चोरी का माल पकड़वा दिया। आज से मैं नियम लेने में कभी नहीं घबराऊँगा।' **सच तो यही है कि नियम लेने से जीवन में लाभ ही होता है।**

अब वह बालक नियम के महत्त्व को अच्छी तरह समझ गया और प्रतिदिन नए-नए नियम लेने लगा।

शिक्षा-नियम लेने से हमें कभी डरना नहीं चाहिए, बल्कि नियम लेकर उसका पूर्ण रूप से पालन करना चाहिए।

-'प्रेरक कथाएँ' से साभार

प्र. 1 बालक किस शर्त पर अपने पापा के साथ स्थानक जाने को तैयार हुआ?

प्र. 2 बालक ने स्थानक में क्या देखा?

प्र. 3 मनोवाञ्छित नियम मिलने पर बालक ने क्या प्रतिक्रिया की?

प्र. 4 कभी नियम नहीं ग्रहण करने वाले बालक की नियम लेने के प्रति श्रद्धा कैसे जगी?

प्र. 5 प्रस्तुत कथा में निहित सन्देश लिखिए।

प्र. 6 दिए गए शब्दों में निहित अर्थगत अन्तर को स्पष्ट कीजिए-(1) ओर-और, (2) क्रम-कर्म और (3) में-मैं।

बाल–स्तम्भ [नवम्बर–2022] का परिणाम

जिनवाणी के नवम्बर-2022 के अंक में बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत 'भगवान पार्श्वनाथ की अनुकम्पा' के प्रश्नों के उत्तर जिन बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, वे धन्यवाद के पात्र हैं। पूर्णांक 25 हैं।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	सुश्री प्राची जैन, भवानमण्डी (राजस्थान)	25
द्वितीय पुरस्कार-300/-	अरिष्ट कोठारी, अजमेर (राजस्थान)	24
तृतीय पुरस्कार- 200/-	रोहित जैन, जयपुर (राजस्थान)	23
सान्त्वना पुरस्कार (5) - 150/-	लक्षित जैन, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	22
	विशाल सिंघवी, जोधपुर (राजस्थान)	22
	दक्ष जैन, जयपुर (राजस्थान)	22
	नमन जैन, आवासन-मण्डल-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	22
	ऋषभ खटोड़, विजयनगर (राजस्थान)	22

बाल–जिनवाणी दिसम्बर, 2022 के अंक से प्रश्न (अन्तिम तिथि 15 फरवरी, 2023)

प्र. 1. प्रतिक्रमण कितने प्रकार का होता है? नाम भी लिखिए।
प्र. 2. व्रत पच्चक्खाण से किस तरह भिन्न होते हैं?
प्र. 3. सच्ची मानवता किसे कहा गया है?
प्र. 4. नमस्कार महामन्त्र की क्या विशेषताएँ हैं?
प्र. 5. 'इंसान की पहचान उसके गुणों से होती है, रूप से नहीं।' उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
प्र. 6. 'शाकाहार विश्व शान्ति का शंखनाद' विषय पर संक्षिप्त में अपने विचार लिखिए।
प्र. 7. What secret of success did socrates tell youngman?
प्र. 8. What is a burning desire?
प्र. 9. आशा मनोजजी को अपना एप्रन देने में क्यों हिचकिचा रही थी?
प्र. 10. Write antonyms of each given words-secret, surprise, strong, gasping.

बाल–जिनवाणी [अक्टूबर–2022] का परिणाम

जिनवाणी के अक्टूबर-2022 के अंक की बाल-जिनवाणी पर आधृत प्रश्नों के उत्तरदाता बालक-बालिकाओं का परिणाम इस प्रकार है। पूर्णांक 40 हैं।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-600/-	अनुराग पालड़ेचा, विजयनगर (राजस्थान)	39
द्वितीय पुरस्कार-400/-	सुहानी सुराणा, अजमेर (राजस्थान)	38
तृतीय पुरस्कार- 300/-	निकिता जैन, मसूदा-अजमेर (राजस्थान)	37
सान्त्वना पुरस्कार (3)- 200/-	प्रणव भण्डारी, जोधपुर (राजस्थान)	36
	अर्स जैन, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	36
	यथवर्धन आहूजा, जयपुर (राजस्थान)	36

बाल-जिनवाणी, बाल-स्तम्भ के पाठक ध्यान दें

बाल–जिनवाणी एवं बाल–स्तम्भ के अन्तर्गत प्रत्येक अंक में दिए जा रहे प्रश्नों के उत्तर प्रदाताओं से निवेदन है कि वे अपना नाम, पूर्ण पता, मोबाइल नम्बर, बैंक विवरण–(खाता संख्या, आई.एफ.एस.सी. कोड, बैंक का नाम इत्यादि) भी साथ में स्पष्ट एवं साफ अक्षरों में लिखकर भिजवाने का कष्ट करें ताकि आपका पुरस्कार उचित समय पर आपको प्रदान किया जा सके। जिन्हें अब तक पुरस्कार राशि प्राप्त नहीं हुई है, वे श्री अनिल कुमारजी जैन से (मो. 9314635755) सम्पर्क कर सकते हैं। *–सम्पादक*

अहंकार के वृक्ष पर
विनाश के फल लगते हैं।

ओसवाल मेट्रीमोनी बायोडाटा बैंक

जैन परिवारों के लिये एक शीर्ष वैवाहिक बायोडाटा बैंक

विवाहोत्सुक युवा/युवती
तथा पुनर्विवाह उत्सुक उम्मीदवारों की
एवं उनके परिवार की पूरी जानकारी
यहाँ उपलब्ध है।

ओसवाल मित्र मंडल मेट्रीमोनियल सेंटर

४७, रत्नज्योत इंडस्ट्रियल इस्टेट, पहला माला,
इरला गांवठण, इरला लेन, विलेपार्ले (प.), मुंबई - ४०० ०५६.

7506357533 ✆ : 9022786523, 022-26287187

ई-मेल : **oswalmatrimony@gmail.com**

सुबह १०.३० से सायं ४.०० बजे तक प्रतिदिन (बुधवार और बैंक छुट्टियों के दिन सेंटर बंद है)

गजेन्द्र निधि

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्ज्वल भविष्य की ओर एक कदम.....

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

Acharya Hasti Meghavi Chatravritti Yojna Has Successfully Completed 13 Years And Contributed Scholarship To Nearly 4500 Students. Many Of The Students Have Become Graduates, Doctors, Software-Professionals, Engineers And Businessmen. We Look Forward To Your Valuable Contribution Towards This Noble Cause And Continue In Our Endeavour To Provide Education And Spirituals Knowledge Towards A Better Future For The Students. Please Donate For This Noble Cause And Make This Scholarship Programme More Successful. We Have Launched Membership Plans For Donors.

We Have Launched Membership Plans For Donors

MEMBERSHIP PLAN (ONE YEAR)		
SILVER MEMBER RS.50000	GOLD MEMBER RS.75000	PLATINUM MEMBER RS.100000
DIAMOND MEMBER RS.200000		KOHINOOR MEMBER RS.500000

Note - Your Name Will Be Published In Jinwani Every Month For One Year.

The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad, Chennai (+91 95001 14455)

The Bank A/c Details is as follows - Bank Name & Address - AXIS BANK Anna Salai, Chennai (TN)

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund IFSC Code - UTIB0000168

A/c No. 168010100120722 PAN No. - AAATG1995J

Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पूण्यार्जन किया, ऐसे संघनिष्ठ, श्रेष्ठीवर्यो एवं अर्थ सहयोग एकत्रित करने करने वालों के नाम की सूची -

KOHINOOR MEMBER (RS.500000)

श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई।
श्रीमान् राजीव जी नीता जी डागा, ह्यूस्टन।
युवारत्न श्री हरीश जी कवाड़, चैन्नई।
श्रीमती इन्द्राबाई सूरजमल जी भण्डारी, चैन्नई (निमाज-राज.)।

DIAMOND MEMBER (RS.200000)

श्रीमान् प्रकाशचन्द जी भण्डारी, हरलूर रोड, बैंगलोर
M/s Prithvi Exchange (India) Ltd., Chennai
श्रीमान् सुगनचन्द सा सरोजाबाई जी मुथा, डबल रोड, बैंगलोर

SILVER MEMBER (RS.50000)

श्रीमान् महावीर सोहनलाल जी बोथरा, जलगांव (घोपालगढ़)
श्रीमान् अमीरचन्द जी जैन (गंगापुरसिटी वाले), मानसरोवर, जयपुर
श्रीमती बीना सुरेशचन्द्र जी मेहता, उमरगांव (घोपालगढ़ वाले)।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, जबलपुर
श्रीमान् प्रकाशचन्द शायरचन्द जी मुथा, औरंगाबाद (महा.)
श्रीमती लाडकंवर जी धर्मपत्नी श्रीमान् अमरचन्द जी सांड, विजयनगर, राजस्थान
श्रीमान पारसमलजी सुशीलजी बोहरा, तिरूवन्नमलई (तमिलनाडू)
श्रीमान् सिद्धार्थजी भण्डारी, जागृति नगर, इन्दौर (मध्य प्रदेश)

GOLD MEMBER (RS. 75000)

श्रीमती पुष्पाबाई सुभाषचन्द जी बागरेचा, शिरपुर (महा.)

PLATINUM MEMBER (RS.100000)

श्रीमान् वूलीचन्द बाघमार एण्ड संस, चैन्नई।
श्रीमान् वलीचन्द जी सुरेश जी कवाड़, पून्नामल्लई।
श्रीमान् राजेश जी विमल जी पवन जी बोहरा, चैन्नई।
श्रीमान् अम्बालाल जी बसंतीदेवी जी कर्नावट, चैन्नई।
श्रीमान् सम्पतराज जी राजकवंर जी भंडारी, ट्रिपलीकेन-चैन्नई।
प्रो. डॉ. शैला विजयकुमार जी सांखला, चालीसगांव (महा.)।
श्रीमान् विजयकुमार जी मुकेश जी विनीत जी गोठी, मदनगंज-किशनगढ़।
श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, तमिलनाडू।
श्रीमती पुष्पाजी लोढ़ा, नेहरू पार्क, जोधपुर।
श्रीमान जी. गणपतराजजी, हेमन्तकुमारजी, जेपेन्द्रकुमारजी, कोयम्बटूर (कोसाणा वाले)
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, तिरूवल्लुवर (तमिलनाडू)।
श्रीमती कचनजी बापना, श्री संजीव जी बापना, कलकत्ता (जोधपुर वाले)
श्रीमान पारसमलजी सुशीलजी बोहरा, तिरूवन्नमलई (तमिलनाडू)
श्रीमती शान्ता डॉ. उमरावसिंह जी लोढा, रावजी की हवेली, जोधपुर

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें - M.Harish Kavad - No. 5, Car Street, Poonamallee, CHENNAI-56
छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें - मनीष जैन, चैन्नई (+91 95430 68382)

'छोटा सा चिंतन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाईयों को शिक्षा में सहयोग करने का'

जिनवाणी प्रकाशन की योजना के लाभार्थी बनें

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा जिनवाणी पत्रिका के प्रकाशन हेतु एक योजना प्रारम्भ की गयी है। जिसके अन्तर्गत एक-एक लाख रुपये की राशि प्रदान करने वाले दो महानुभावों के द्वारा प्रेषित प्रकाश्य सामग्री एक-एक पृष्ठ में एक माह प्रकाशित की जाती है। इसके साथ ही वर्ष भर उनके नामों का उल्लेख भी जिनवाणी में किया जाता है। सन् 2020 की जुलाई से अनेक महानुभाव इस योजना में जुड़े हैं, उन सबके हम आभारी हैं।

अर्थसहयोगकर्ता जिनवाणी (JINWANI) के नाम से चैक प्रेषित कर सकते हैं अथवा जिनवाणी के निम्नाङ्कित बैंक खाते में राशि नेफ्ट/नेट बैंकिंग/चैक के माध्यम से सीधे जमा करा सकते हैं।

बैंक खाता नाम-JINWANI, बैंक-State Bank of India, बैंक खाता संख्या-51026632986, बैंक खाता-SAVING Account, आई.एफ.एस. कोड-SBIN0031843, ब्रॉच-Bapu Bazar, Jaipur

राशि जमा करने के पश्चात् राशि की स्लिप एवं जमाकर्ता का पेन नं., मण्डल कार्यालय को प्रेषित करने की कृपा करें, जिससे आपकी सेवा में रसीद प्रेषित की जा सके। 'जिनवाणी' के खाते में जमा करायी गई राशि पर आपको आयकर विभाग की धारा 80G के अन्तर्गत छूट प्राप्त होगी, जिसका उल्लेख रसीद पर किया हुआ है।

वित्तीय वर्ष 2021-22 हेतु लाभार्थी

(1) श्री प्रेमचन्दजी, अजयजी, आलोकजी हीरावत, जयपुर-मुम्बई
(2) श्री सतीशचन्दजी जैन (कंजोली वाले), जयपुर।

वित्तीय वर्ष 2022-23 हेतु लाभार्थी

(1) श्रीमती शान्ताजी, प्रदीपजी, मधुजी मोदी, जयपुर।
(2) श्री तेजमलजी, अभयमलजी लोढ़ा, नागौर-जयपुर।
(3) न्यायाधिपति श्री प्रकाशजी टाटिया, जोधपुर।
(4) श्री कनकराजजी कुम्भट, जोधपुर।
(5) श्री पूनमचन्दजी जामड़ (किशनगढ़ वाले), जयपुर।
(6) श्री सुशीलजी बाफना, जलगाँव।
(7) श्री सोहनलालजी, गौतमचन्दजी हुण्डीवाल, चेन्नई।
(8) मैसर्स अमरप्रकाश फाउण्डेशन प्रा. लि., चेन्नई।
(9) श्री सुबाहु कुमारजी, मनोजजी, मनीषजी (सी.ए.) जैन, बजरिया-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)
(10) श्री श्रीपाल मलजी-श्रीमती मधुजी, श्री चिरागजी-श्रीमती लक्ष्याजी सुराणा (नागौर वाले), चेन्नई
(11) श्री कनकराजजी, महेन्द्रजी, देवांशजी कुम्भट, जोधपुर-मुम्बई
(12) सी. आर. कोठारी मेमोरियल चैरिटेबल ट्रस्ट (रजि), जयपुर-वडोदरा-मुम्बई
(13) नाहर परिवार मुम्बई, भोपाल, इन्दौर, बरेली।

-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 9314625596

उदारमना लाभार्थियों की अनुमोदना एवं स्वेच्छा से नये जुड़ने वाले लाभार्थियों का हार्दिक स्वागत।

CLUB REGALIA
AT NAVKAR CITY

CLUB REGALIA

SWIMMING POOL

AMENITIES

- NON-ALCOHOLIC CLUB
- 100%VEGETARIAN CLUB
- INDOOR SQUASH COURT
- SPA & WELLNESS CENTRE
- OUTDOOR SWIMMING POOL
- INDOOR BADMINTON COURT
- MULTI-CUISINE RESTAURANT
- OUTDOOR BANQUET LAWN
- INDOOR BANQUET HALL
- BILLIARDS LOUNGE
- KID'S POOL AREA
- BOWLING ALLEY
- MUSIC ROOM
- LIBRARY
- SALON

KID'S PLAY ROOM

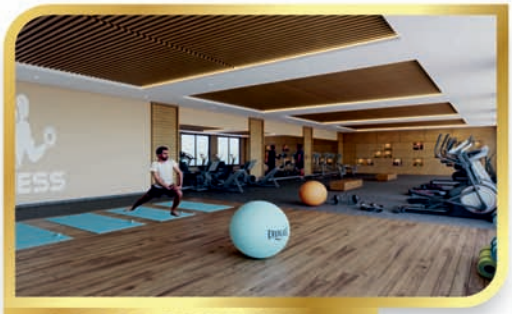

INDOOR GYMNASIUM

8504 000 222

Near DPS Circle, Navkar City, Jodhpur (Raj.)

Disclaimer: Visual representations shown are only informative and indicative of the envisaged developments subject to variation and modification made by the company as approved by the competent authorities

JVS Foods Pvt. Ltd.

Manufacturer of :

NUTRITION FOODS

BREAKFAST CEREALS

FORTIFIED RICE KERNELS

WHOLE & BLENDED SPICES

VITAMIN AND MINERAL PREMIXES

Special Foods for undernourished Children
Supplementary Nutrition Food for Mass Feeding Programmes

With Best Wishes :

JVS Foods Pvt. Ltd.

G-220, Sitapura Ind. Area,
Tonk Road, Jaipur-302022 (Raj.)
Tel.: 0141-2770294
Email-jvsfoods@yahoo.com
Website-www.jvsfoods.com
FSSAI LIC. No. 10012013000138

CERTIFIED ISO 22000 CERTIFIED

Food Safety System Certification 22000

KALPA-TARU®

WELCOME TO A HOME THAT DOESN'T FORCE YOU TO CHOOSE.
BUT, GIVES YOU EVERYTHING INSTEAD.

Life is all about choices. So, at the end of your long day, your home should give you everything, instead of making you choose. Kalpataru welcomes you to a home that simply gives you everything under the sun.

022 3064 3065

Centrally located in Thane (W) | Sky park | Sky community | Lavish clubhouse | Swimming pools | Indoor squash court | Badminton courts

PROJECT
IMMENSA
THANE (W)
EVERYTHING UNDER THE SUN

TO BOOK 1, 2 & 3 BHK HOMES, CALL: +91 22 3064 3065

Site Address: Bayer Compound, Kolshet Road, Thane (W) - 400 601. | **Head Office**:101, Kalpataru Synergy, Opposite Grand Hyatt, Santacruz (E), Mumbai - 400 055. | Tel: +91 22 3064 5000 | Fax: +91 22 3064 3131 | **Email**: sales@kalpataru.com | **Website**: www.kalpataru.com

In association with HDFC PROPERTY FUND

This property is secured with Axis Trustee Services Ltd. and Housing Development Finance Corporation Limited. The No Objection Certificate/Permission would be provided, if required. All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. *Conditions apply.

If undelivered, Please return to

Samyaggyan Pracharak Mandal
Above Shop No. 182,
Bapu Bazar, Jaipur-302003 (Raj.)
Tel. : 0141-2575997

स्वामी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए प्रकाशक, मुद्रक - अशोक कुमार सेठ द्वारा डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन